श्री १०८ गोस्वामी तुलसीदास कृत

(सटीक)

गीतावली ।

सातोकाण्ड ।

परमहंस प्रशंसमान हंसवंशावतंस

श्री सीतारामीय महात्मा हरिहरप्रसाद कृत

प्रकाशिका टीका सहित

जिस को

स्वस्ति श्री विविध विरुदावली विराजमान मानोन्नत

श्री महाराजधिराज काशिराज द्विजराज

श्रीश्री श्री श्री श्री प्रभुनारायण सिंह

बहादुर के. सी. आइ. ई. के

आज्ञानुसार

म० कु० बाबू रामदीन सिंहात्मज

श्री बाबू रामरणविजय सिंह ने प्रकाशित किया ।

पटना—"खड्गविलास" प्रेस—बांकीपुर ।

चण्डीप्रसाद सिंह ने मुद्रित किया ।

१९०६.

श्रीः

गीतावली सटीक।

श्रीसीतारामाभ्यां नमः।

मङ्गलाचरण—श्लोक।

बालं दिगम्बरं रामं कौशल्यानन्दवर्द्धनम्।
अतसीकुसुमश्यामं दध्योदनमुखं भजे॥ १॥

सोरठा।

जपत रहत सब जाम, जासु नाम ब्रह्मादिकौ।
हरिहर करत प्रनाम, तेहि सिय सियवर चरन कौं॥

दोहा।

भरत लषन रिपुदवन पद, बंदि ध्याय हनुमान।
हरिहर टीका रचत है, देहु सुधारि सुजान॥

मूल।

नीलाम्बुजश्यामलकोमलाङ्गं सीतासमारोपितवामभागम्।
पाणौ महाशायकचारुचापं नमामि रामं रघुवंशनाथम्॥

टीका।

श्याम कमल सम श्यामल कोमल अंग औ सीता जू बाम भाग मैं भली भांति तें स्थित औ हाथ में अमोघ बाण औ सुंदर सारंग धनुष है जिन के तिन रघुवंशनाथ श्रीराम कों नमस्कार करत हौं। श्रीराम की चारि लीला प्रधान हैं बाल, बिवाह, बन और राजलीला। यह चारों श्लोक के एक एक पद से जनाए। नीलाम्बुजश्यामल कोमलाङ्गं तें बाल, औ सीतासमारोपितवामभागं तें बिवाह, औ पाणौमहाशायक चारु चापं तें बन, औ *नमामिरामंरघुवंशनाथं तें राज्यलीला।*

राग असावरी—आजु सुदिन सुभघरी सुहाई। रूप शीलगुन धाम राम नृप भवन प्रगट भए आई॥ १॥ अति पुनीत मधुमास लगन ग्रह बार जोग समुदाई। हरषवन्त चर अचर भूमिसुर तनुरुह पुलकि जनाई॥ २॥ बरषहिं बिबुधनिकर कुसुमावलि नभ दुंदुभी बजाई। कौसल्यादि मातु सब हरषित यह सुख बरनि न जाई॥३॥ सुनि दसरथ सुत जन्म लिए सब गुरजन बिप्र बुलाई। बेद बिहित करि क्रिया परम सुचि आनंद उर न समाई॥ ४॥ सदन बेदधुनि करत मधुर मुनि बहुबिधि बाजु बधाई। पुरबासिन्ह प्रियनाथ हेतु निज निजसंपदा लुटाई॥ ५॥ मनि तोरन बहु केतु पताकनि पुरी रुचिरकरि छाई। मागध सुत द्वार बंदीजन जहँ तहँ करत बडाई॥ ६॥ सहज सिंगार किए बनिता चलि मंगल बिपुल बनाई। गावहिं देहिं असीस मुदित चिरजियो तनय सुषदाई॥ ७॥ बीथिन्ह कुमकुम कीच अरगजा अगरु अबीर उडाई। नाचहिं पुर नर नारि प्रेमभरि देहदसा बिसराई॥ ८॥ अमित धेनु गज तुरग बसन मनि जातरूप अधिकाई। देत भूप अनुरूप जाहि जोइ सकलसिद्धि

रहइ छाई ॥ ९ ॥ सुखी भए सुर संत भूमिसुर खलगनमन मलिनाई। सबहि सुमन विकसत रवि निकसत कुमुदविपिन विलखाई ॥ १० ॥ जो सुखसिंधु सकृत सीकर तें सिव विरंचि प्रभुताई। सोइ सुख उमगि अवध रह्यो दसदिसि कवन जतन कहौं गाई ॥ ११ ॥ जे रघुवीरचरन चिन्तक तिन्ह की गति प्रगट दिखाई। अविरल अमल अनूप भगति दृढ़ तुलसिदास तब पाई ॥ १२ ॥ १ ॥

सखी प्रति सखी कहति हैं आजु सुंदर दिन औ सुंदर सुभ घरी में रूप सील औ गुन के धाम श्री राम महाराज दशरथ के गृह में आइ के प्रगट भए। भवन प्रगट भए आइ कहिबे को यह भाव कि अपनी इच्छा करि परधाम ते आइके प्रगटे, गर्भ ते नाहीं ॥ १ ॥ अति पवित्र चैत्रमास कर्क लग्न पांच ग्रह उच्च, मेष के सूर्य, मकर के मंगल, तुला के शनैश्चर, कर्क के बृहस्पति, मीन के शुक्र औ श्रीरामजन्म दिन 'मेरुतंत्र' औ 'रामसुधा' में सोमवार औ 'सूरसागर' में बुधवार औ गोसाईं जी मंगलवार एहि ग्रंथ में लिखे सो कल्पांतर करि व्यवस्था करना औ योग समुदाय सुकर्म्मादि हैं। चर जंगम अचर स्थावर औ भूमिसुर ब्राह्मण हर्षवन्त हैं सो कैसे जानि परयो तेहि हेतु लिखत हैं कि तनुरुह कहैं रोम सों पुलक करि जनाय दिए। शंका। अचर की पुलकावली कैसे जानि परी। उत्तर। अचर पर्वत वृक्षादि तिन के रोम रूप तृण पत्रादि हैं ते लहलहाय उठे सोई पुलकना है। चर अचर से भूमिसुर को पृथक लिखिवे को यह भाव कि श्रीरघुनाथ को ब्रह्मण्य जानि ब्राह्मणन को सब तें अधिक आनंद भयो अतएव भागवत में लिखा। "ब्रह्मण्यः सत्यसन्धश्च रामो दाशरथिर्यथा।" मधुमास को अति पुनीत कहिवे को यह भाव कि वर्ष का आदि मास है अतएव श्रीदशरथ महाराज अश्वमेध याग चैत्रही में आरम्भ किए। वाल्मीकीय रामायण में लिखा ॥ २ ॥ देवतन के समूह आकाश में नगारा बजाइ पुष्पसमूह बरषत हैं। नगारा बजाइबे को यह भाव कि रावण के भय तें छिपे छिपे फिरत रहे ते

आजु नगारा बजाइ प्रगटे औ श्रीकौशल्या जू आदि सब माता हर्षित हैं यह सुख वरनि नहीं जात है जाते चौथे पन में पुत्र पाए याते मातन को सुख अकथनीय ठहराये ॥ ३ ॥ दशरथ महाराज पुत्रजन्म सुनि सब कुलवृद्ध औ ब्राह्मणों को बोलाय लिए। वेदविहित नांदीमुख श्राद्धादि परम शुचि क्रिया करि जो आनंद भयो सो उर में नहीं समात है। गुरुजन विप्र दोऊ विप्र बोलाइवे को यह भाव कि लौकिक क्रिया गुरुजन औ वैदिक क्रिया ब्राह्मण सम्हारैं ॥ ४ ॥ मधुर स्वर तें सुनि गृह में वेदधुनि करत औ बहु प्रकार ते बधाई बाजति है । पुरवासीप्रिय जो नाथ हैं तिन के हेतु अपनी अपनी संपदा लुटाई। प्रियनाथ कहिवे को यह भाव कि महाराज के पुत्र होए विना जो अनाथ रहे सो सनाथ भए ॥ ५ ॥ तोरन वंदनवार केतु ध्वजा पताका फरहरा वा केतु सचिन्ह जैसे विष्णु की ध्वजा में गरुड़चिन्ह औ शिव की ध्वजा में वृषचिन्ह औ पताका चिन्हरहित, मागध कत्थक, सूत पौराणिक, वंदी भाट॥ "सूताः पौराणिकाः प्रोक्ता मागधा-वंशशंसकाः। वंदिनस्त्वमलप्रज्ञाःप्रस्तावसदृशोक्तयः" ॥ ६ ॥ सहज शृंगार जेहि भांति तें किए रहीं तैसहीं उठि धाईं । मंगल विपुल हरदी दूर्वादि। सहज शृंगार को यह भाव कि मंगल बनाइवे के आनंद में शृंगार सजना भूलिगईं ॥ ७ ॥ गलिन में केसर औ अरगजा को कीच है औ अगर का धुआं औ अबीर उड़त है औ देहदसा बिसराइ प्रेम में भरि पुर के नर नारि नाचत हैं ॥ ८ ॥ गज हाथी, तुरंग घोड़ा, जातरूप सोना, सिद्धि अणिमादिक ॥ ९ ॥ देवता संत औ ब्राह्मण सुखी भए औ खलगण के मन में मलिनाई आई अर्थात् दुखी भए जैसे सूर्य के निकसत सब फूल फूलत है पर कोई को वन बिलखात अर्थात् संपुटित होत है। भाव सपेदी भीतर जात स्याही ऊपर आयजात है ॥ १० ॥ जो सुख रूप समुद्र की एक बूंद ते शिव ब्रह्मा की प्रभुताई है सो सुख अयोध्या जी के दशो दिशा में उमंगि रह्यो वा अयोध्याजी तें उमगि के दशो दिशा में जाय रह्यो ताको कवन जतन तें गाइ कहौं, भाव बूंद को जो भली भांति न जानै सो समुद्र को कैसे बखानै ॥ ११ ॥ जे रघुनाथ के चरन के चिन्तक हैं तिन की गति प्रगट देखि परति है

अर्थात् ज्ञानिन कों कहीं प्रगट न भए औ भक्तन के पुत्र है प्रगट भए भाव जो स्ववश रह्यो सो परवश भयो, अंतरालरहित निर्मल औ उपमारहित दृढ़ भक्ति तब तुलसीदास ने पाई। भाव केवल भक्ति करि रघुनाथ के प्रगटे तें कर्मज्ञान को भरोसा छोड़ि केवल भक्ति ही दृढ़ करि लियो ॥ १२ ॥ १ ॥

राग जयतश्री—सहेली सुनु सोहिलोरे सोहिलो सोहिलो सोहिलो सोहिलो सब जग आजु। पूत सपूत कौसिला जायो अचल भयो कुलराजु ॥ १ ॥ चैत चारु नौमी सिता मध्य गगन गत भानु। नषत जोग ग्रह लगन भले दिन मंगल मोदनिधानु ॥२॥ व्योम पवन पावक जल थल दिसि दसहु सुमंगलमूल। सुर दुंदुभी बजावहिं गावहिं हरषहिं बरषहिं फूल ॥३॥ भूपतिसदन सोहिलो सुनि बाजे गहगहे निसान। जहँ तहँ सजहिं कलस ध्वज चामर तोरन केतु बितान ॥ ४ ॥ सींचि सुगंध रचे चौकै गृह आंगन गली बजार। दल फल फूल दूब दधि रोचन घरघर मंगलचार ॥ ५ ॥ सुनि सानंद उठे दसस्यंदन सकल समाज समेत। लिये बोलि गुर सचिव भूमिसुर प्रमुदित चले निकेत ॥ ६ ॥ जातकर्म करि पूजि पितर सुर दिये महिदेवन दान। तेहि अवसर सुत तीन प्रगट भए मंगल मुद कल्यान ॥ ७ ॥ आनंद महँ आनंद अवध आनंदबधावन होइ। उपमा कहे चारिफल की मोकों भलो न कहै कवि कोइ ॥ ८ ॥ सजि आरती बिचित्र थार कर जूथ जूथ बरनारि। गावतचलीं बधावन लैलै निजनिजकुलअनुहारि ॥९॥ असही दुसही मरहु मनहिमन बैरिन बढहु बिषाद। नृपसुत चारि चारु चिरजीवहु संकरगौरिप्रसाद ॥ १० ॥ लैलै ढोव प्रजा

प्रमुदित चलि भांतिभांति भरिभार। करहिं गान करि पान राय की नाचहिं राजदुआर ॥ ११ ॥ गज रथ बाजि बाहिनी बाहन सबनि संवारे साज। जनु रतिपति रितुपति कोसलपुर बिहरत सहितसमाज ॥ १२ ॥ घंटा घंटि पखाउज आउज झांझ बेनु डफ तार। नूपुरधुनि मंजीर मनोहर करकंकन झनकार ॥१३॥ नृत्य करहिं नटनटी नारिनर अपने अपने रंग। मनहुं मदन रति बिबिध बेषधरि नटत सुदेस सुधंग ॥१४॥ उघटहिं छंदप्रबन्ध गीतपद रागतानबंधान। सुनि किन्नर गन्धर्व सराहत बिथके हैं बिबुधबिमान ॥ १५ ॥ कुंकुम अगर अरगजा छिरकहिं भरहिं गुलाल अबीर। नभ प्रसून झरि पुरी कोलाहल भइ मनभावति भीर ॥१६॥ बडो बयस बिधि भयो दाहिनो गुरसुर आसिर्वाद। दसरथसुकृतसुधासागर सब उमगे हैं तजि मरजाद ॥ १७ ॥ ब्राह्मन बेद बंदि बिरुदावलि जयधुनि मंगलगान। निकसत पैठत लोग परस्पर बोलत लगि लगि कान ॥ १८ ॥ वारहिं मुकुता रतन राजमहिषी पुर सुमुखि समान। बगरे नगर निवछावरिमनिगन जनु जुवारि जवधान ॥ १९ ॥ कीन्हि बेदबिधि लोकरीति न्रप मंदिर परमहुलास। कौसल्या केकई सुमित्रा रहसबिबस रनिवास ॥ २० ॥ रानिन दिए बसन मनि भूषन राजा सहनभंडार। मागध सूत भाट नट जाचक जहं तहं करहिं कवार ॥ २१ ॥ बिप्रबधू सनमानि सुआसिनि जनपुरजन पहिराइ। सनमाने अवनीस असीसत ईस रमेस मनाइ ॥ २२ ॥ अष्टसिद्धि नव-निद्धि भूति सब भूपतिभवन कमाहिं। समउ समाज राजदश-रथ को लोकप सकल सिहाहिं ॥ २३ ॥ को कहि सकै अवध-

वासिन को प्रेम प्रमोद उछाहु। सारद सेस गनेस गिरीसहिं अगम निगम अवगाहु ॥२४॥ सिव विरंचि मुनि सिद्ध प्रसंसत वडेभूप के भाग। तुलसिदास प्रभु सोहिलो गावत उमगि २ अनुराग ॥ २५ ॥ २ ॥

सहेली प्रति सहेली की उक्ति है। सहेली सखी वा सहेली सहैवाली जेहि को यह उत्सव सोहात अर्थात् असही दुसही नाहीं। सोहिलो कहैं उत्सव सब जगत में सोहिला है याते बहुवार लिखे वा पांच वेर लिखवे तें पांचो देवतन को उत्सव युक्त जनाए वा पंचभूत सब हर्षित भए जे पहिले रावणादि करि दुखी रहे ताते पांचवार वा पहिले सोहिलो रे जो लिखे सो सुनिवे में है फेरि चारि बार लिखे जातें चारि भाइन का जन्मोत्सव है वा आनंद तें बहुवार लिखे। सपूत कहिवे को यह भाव कि जन्मतें तीन भैयन को और बोलाए वा दिन ग्रहादि भले तें जाने कि सपूती करेंगे। अचल भयो कुलराज कहिवे को यह भाव कि पुत्र भए विना जो चल होत रह्यौ सो अचलभयौ ॥१॥ शुक्ल पक्ष मध्यान्ह काल औ बार मंगल आनंद को निधान है ॥२॥ आकास वायु अग्नि जल औ थल करि पृथ्वी लेना औ दशोदिशा में सुमंगल का मूल है आकाशादि पांचो लिखवे ते पांचो भूतन को हर्ष जनाए ॥३॥ निसान नगारा चामर कहैं चमर वितान सामिआना ॥ ४ ॥ सुगंध अतर गुलाबादि दल तुलसी विल्वपत्रादि फल सुपारी नारिअर आदि रोचन गोरोचन वा रोरी ॥ ५ ॥ दशस्यंदन दशरथ महाराज निकेत महल ॥ ६ ॥ जातकर्म नांदीमुखश्राद्ध जेहि में दही अक्षत से श्राद्ध औ दुर्वादि जल से तर्पण होत है ताकों करि पितर सुर पूजि ब्राह्मणन को दान दिए। शंका। सूतक में पूजा औ दान कैसे किए। उत्तर। जब लौं नार नहीं छीना जाय तवलों सूतक नाहीं लगत है। तेहि अवसर में तीन पुत्र और प्रगट भए मंगल मुद कल्याण अर्थात् मंगल रूप भरत जी मुदरूप लक्ष्मण जी औ कल्यान रूप शत्रुघ्न जी हैं ॥ ७ ॥ श्रीरघुनाथ के जन्म के आनंद महं तीनों भैयन के जन्म भयो ताते आनंद महं आनंद लिखे। अजोध्या जी में आनंद युक्त बधाया होत है

चारो फल सम चारो भैयन को कहै ते हम को कोऊ कवि भलो न कहैगो अर्थात् जाको जन मोक्षादि दाता है जात तेहि को मोक्षादि की उपमा कैसे संभवै ॥ ८ ॥ विचित्र थार अद्भुत थार वरनारि अहिवात कुलअनुहारि कुल के योग्य, भाव ब्राह्मणी सतोगुणी ठाठ से औ क्षत्रिय रजोगुनी ठाठ से इत्यादि ॥ ९ ॥ असही कहे जो और की बढ़ती न सहि सकै दुसही कहैं दुख करि परवढ़ती सहै वा दुसही दुष्ट ए सब मन ही मन अर्थात् कुढ़ि के मरहु औ वैरिन को विपाद बढ़ौ ॥ १० ॥ ढोव कहैं भेंट की सामग्री अर्थात् अपने अपने जाति के अनुरूप जैसे अहीर दही, वरई पान इत्यादि आन कहैं दोहाई ॥ ११ ॥ वाहिनी जो सेना ताको वाहन जो नायक तिन ने हाथी रथ घोड़ा सवनि के साज संवारे "वाहयतीति वाहनः" इस व्युत्पत्ति ते नायक को वाचक भयो मानो सेनापति नहीं है काम है, सेना नहीं है वसन्तऋतु है सो अयोध्या जी में समाज सहित विहरत है इहां समाज भूषण वसनादि हैं वा गजरथ औ तुरंगरथ औ वाहिनी वाहन अर्थात् घोड़ी घोड़ा हाथी आदि सवनि के साज संवारे अपर पूर्ववत ॥१२॥ घंटा हाथी आदि के घंटी हाथिन के झेला की औ सादनी पायक आदि की आउज कहैं तासा अरवी में तासा को आउज कहत हैं, तार करताल मंजीर पावजेव ॥ १३ ॥ अपने अपने रंग कहैं चाल तें अर्थात् संगीत नाचनेवाले संगीत की चाल तें औ तांडव नाचनेवाले तांडव की चाल तें इत्यादि । नट नटी नारि नर नृत्य करत हैं मानौ काम रति, बहुत वेप धरि सुदेश कहैं सुंदर औ सुधंग कहैं सूधे अंग तें नाचत हैं अर्थात् हाथ मुंह टेढा नाहीं होए पावत है वा सुधंग शुद्ध अंग नृत्य के ॥१४॥ छंद औ प्रबन्ध औ गीत के पद राग तान वंधान पूर्वक उघटहिं अर्थात् गावहिं जैसे ध्रुपद तिलाना है तैसे छंद प्रबन्ध गीत भी है संगीत ग्रंथन में स्पष्ट वंधान कहैं लय अर्थात् गीत समाप्त पर्यन्त तान ताल वरावर चला जाय वार वरावर भी भेद न पड़ै सुनि के गंधर्व किन्नर सराहत हैं कि अस हम नहीं गाय सकते औ देवतन के विमान विशेष थकि गए अर्थात् अचल है गए भाव जो स्वर्ग में नहीं सुने रहे सो सुने तातें मोहि रहे ॥१५॥ तीखुर आदि से अति मेही औ अति लाल जो बनत

ताको गुलाल कहत हैं औ तेहि से कम लाल औ मोटा जो जोन्हरी आदि के पिसान से वनत है ताको अवीर कहत हैं। कोलाहल अधिक शब्द। मनभावती भीर जो भीर वहुत दिन से चाहत रहे सो भई ॥ १६ ॥ वड़ी वयस साठि हजार वरिस की अवस्था में गुरु औ देवता के आशीर्वाद ते विधाता दाहिनो भयो "षष्टि वर्षसहस्राणि जातस्य मम कौशिक" इति श्रीमद्रामायणे। महाराज दशरथ के सुकृत रूप जे अमृत के सब समुद्र हैं अर्थात् चारो समुद्र, ते मर्याद कहैं किनारा छोड़ि उमगै भाव जैसे समुद्र जो किनारा छोड़ि उमगै तो सब जग डूबि जाय सो एक को को कहै सब सुकृत समुद्र उमगे एहि तें यह व्यंजित किए कि सब ब्रह्माण्ड आनंद में डूबि गयो ॥ १७ ॥ विरदावली यश। लगि लगि कान कहिवे को यह भाव कि वेदादि धुनि तें जो महाशब्द भयो तातें सुनात नाहीं कान में लगि जब जोर सें वोलत हैं तव सुनात है ॥१८॥ मोती जवाहिर आदि श्री महाराज की पटरानी औ पुर की स्त्रीगन समान नेवछावर करहिं। एहि तें यह जनाए कि पुरवासिनिनि को भी आनंद महारानिन के तुल्य भयो नेवछावर करत में जो गिरे मनिसमूह ते वगरे कहैं छितिराने नगर में ज्वार जोन्हरी औ जव धान के समान ॥ १९ ॥ मंदिर में परम हुलास पूर्वक वेद लोक रीति महाराज कीन्हे अर्थात् वेदरीति जातसंस्कार अभ्युदयिक श्राद्धादि पूतना रक्षणादि, लोकरीति नार गाड़व औ राई नोन वारव औ चौकी हेतु आगि आदि राखव, सव रनिवास कौशल्या कैकेई सुमित्रा आदि रहसविवश कहिए हर्ष के विशेष बस भई ॥ २० ॥ सहन कहैं संपूर्ण कवार कहैं यश ॥ २१ ॥ सुआसिनि कहैं सावित्री कन्यावर्ग, जन दासादि, पुरजन पुरवासी, अवनीश दशरथ महाराज ईश शिव रमेश विष्णु ॥ २२ ॥ आठो सिद्धि औ नवो निधि सव ऐश्वर्य युक्त महाराज के भवन में कमाहिं कहैं परिचर्या करत हैं। लोकप इन्द्रादि। "अणिमा महिमा चैव गरिमा लघिमा तथा। प्राप्तिःप्राकाम्यमीशित्वं वशित्वञ्चाष्टसिद्धयः॥ पद्मो स्त्रियां महापद्म शङ्खोमकरकच्छपौ। मुकुन्दकुन्दनीलाश्च खर्वश्च निधयोनव॥ इति शब्दार्णवे"२३ गिरीश शिव अगम शास्त्र निगम वेद इन्द्र को अथाह हैं व शिवादि को अगम वेद को अथाह है २४।२५।२

राग बिलावल—आजु महामंगल कोसलपुर सुनि नृप के सुत चारि भये। सदन सदन सोहिलो सुहावन नभ अरु नगर निसान हये ॥ १ ॥ सजिसजि जान अमर किन्नर मुनि जानि समयसम गानठये। नाचहिं नभ अपछरा मुदित मन पुनिपुनि बरषहिं सुमनचये ॥ २ ॥ अति सुख बेगि बोलि गुर भूसुर भूपति भीतर भवन गये। जातकर्म करि कनक बसन मनि भूषित सुरभिसमूह दये ॥ ३ ॥ दल रोचन फल फूल दूब दधि जुवतिन्ह भरिभरि थार लये। गावत चलीं भीर भइ बीथिन्ह बंदिन बांकुरि बिरद बये ॥ ४ ॥ कनककलस चामर पताक ध्वज जहंतहं बंदनवार नये। भरहिं, अबीर अरगजा छिरकाहिं सकललोक एकरंग रये ॥५॥ उमगि चल्यो आनंद लोक तिहुं देत सबनि मंदिर रितये। तुलसिदास पुनि भरेइ देखियत रामकृपाचितवनि चितये ॥ ६ ॥ ३ ॥

हये कहे बजे ॥ १ ॥ समैसम गान ठये अर्थात् सोहरादि गान ठाने, चये समूह ॥ २ ॥ सुरभी धेनु ॥ ३ ॥ बांकुरिबिरद उत्कृष्ट यश, बये कहे बदे ॥४॥ रए रंगे ॥५॥ रितये खाली किये ॥६॥ टिप्पणी–जान बिमान। अमर देवता। सुमनचये सुमन के समूह। भूसुर ब्राह्मण। जातकर्म नंदीमुख श्राद्ध। दल तुलसी। रोचन हलदी। फल सुपारी नारियल। जुवतिन्ह युवा स्त्रीगण। बीथिन्ह गलियों में। बये कहे वा किये। कनककलस सोने का कलस। तीनों लोक में आनंद उमड़ चला। सभी अपना २ घर खाली करके दान देने लगे। तुलसी दास जी कहते हैं कि श्री रामचन्द्र की कृपा दृष्टि से फिर भरे के भरे देख पड़ते हैं।

राग जयतश्री—गावैं विमल विबुध बरबानी। भुवन कोटि कल्यान कंद जायो पूत कोसिलारानी ॥ १ ॥ मास पाख

तिथि बार नषत ग्रह योग लगन सुभ ठानी। जल थल गगन प्रसन्न साधु मन दसदिसि हिय हुलसानी ॥ २ ॥ बरषत सुमन बधाव नगर नभ हरष न जात बषानो। ज्यों हुलास रनिवासनरेसहिं त्यों जनपद रजधानी ॥ ३ ॥ अमर नाग मुनि मनुज सपरिजन बिगतबिषाद गलानी। मिलेहि मांझ रावन रजनीचर लंकसंक अकुलानी ॥ ४ ॥ देवपितर गुरुबिप्र पूजि नृप दियेदान रुचि जानी। मुनि बनिता पुर-नारि सुआसिनि सहसभांति सनमानी ॥ ५ ॥ पाइ अघाइ असीसत निकसत जाचकजन भए दानी। यों प्रसन्न कैकई सुमित्रहिं होहुमहेस भवानी ॥ ६ ॥ दिन दूसरे भूप भामिनि दोउ भईं सुमंगलषानी। भयो सोहिलो सोहिलो सो जनु सृष्टि सोहिले सानी ॥ ७ ॥ नाचत गावत मो मनभावत सुष सुअवध अधिकानी। देत लेत पहिरत पहिरावत प्रजा प्रमोद अघानी ॥ ८ ॥ गान निसान कोलाहल कौतुक देषत दुनी सिहानी। हरि बिरंचि हरपुर सोभा कुलि कोसलपुरी लुभानी॥ ९ आनंद अवनिराजरवनी सब मागहु कोषि जुडानी। आसिष दैदै सराहहिं सादर उमा रमा ब्रह्मानी ॥ १० ॥ बिभवबिलास बाढि दसरथकी देषि न जिनहिं सोहानी। कीरति कुसल भूति जय रिधि सिधि तिन्ह पर सबै कोहानी ॥ ११ ॥ छठी बारहौ लोकवेदबिधि करि सुबिधानबिधानी। राम लषन रिपुदमन भरत धरे नाम ललित गुरज्ञानी ॥ १२ ॥ सुकृत सुमन तिल मोद बासि बिधि जतन जंत्र भरि घानी। सुषसनेह सब दियो दसरथहिं षरि षलेल थिर थानी ॥ १३ ॥ अनुदिन उदय उछाह उमग जग घरघर अवधकहानी। तुलसी

रामजन्मजस गावत सो समाज उर पानी ॥ १४ ॥ ४ ॥

विबुध देवता कल्यान कंद कल्यान के मूल या मेघ जायो उत्पन्न कियो ॥ १ ॥ सुभ ठानी शुभस्थानी। जल थल आकाश औ साधुन के मन प्रसन्न होत भयो औ दशो दिशा को हृदय हुलसत भयो। शंका। जलादि प्रसन्न कैसे भए। उत्तर। जल निर्मल भयो पृथ्वी कृषी संपन्न भई, गगन मेघादिरहित भयो, सोई प्रसन्न होना है ॥ २ ॥ जनपद देश राजधानी अयोध्या ॥ ३ ॥ देवता नाग मुनि मनुज परिवार सहित, विषाद गलानि रहित भए औ रावण राक्षसों के मिलेहिं माझा अर्थात् फुट बिना लंका शंका तैं अकुलात भई 'मिलेहिं माझविधि बात बिगारी' जैसे यह चौपाई में मिलेहिं माझ का अर्थ है तैसे इहां जानना। वा जब देवता आदि विषाद गलान रहित भए सो विषाद गलानादि रावन रजनीचर के माझ मिलेहिं ते अर्थात् डेरा किए ते लंका शंका तें अकुलात भई ४।५।६ दूसरे दिन महाराज की दोऊ भामिनी कैकेयी जू सुमित्रा जू सुमंगल की खानि भई अर्थात् श्री राम जी के दूसरे दिन दशमी को पुष्य नक्षत्र मीन लग्न में श्री भरत जी को प्रादुर्भाव भयो। भरत जी के दूसरे दिन एकादशी को श्लेषा नक्षत्र कर्क लग्न में लक्ष्मण जी शत्रुघ्न जी को प्रादुर्भाव भयो। उत्सव में उत्सव भयो मानो सृष्टि उत्सव में सानी है श्री मद्रामायणे "पुष्येजातस्तुभरतो मीनलग्ने प्रसन्नधीः सार्पे जातौ तु सौमित्री कुलीर भ्युदिते रवौ। पाश्चेऽन्येद्युःपाञ्चजन्यात्मा कैकेय्यां भरतोऽभवत्। तदन्येद्युःसुमित्राया मनन्तात्मा च लक्ष्मणः। सुदर्शनात्मा शत्रुघ्नो द्वौ जातौ युगपत्प्रिये ॥" अतएव श्री गोसाईंजी छठी तीन दिन में स्पष्ट लिखे त्यों आजु कालि हूं परों जागर होहिंगे नेवते दिए। शंका। पहिले तेहि अवर सुत तीन प्रगटभए मंगल मुद कल्यान एहि पद में एकै दिन सब भाइन का जन्म जनाए औ इहां तीन दिन में कहे सो कैसे। उत्तर। कल्पांतर करि याको व्यवस्था जानना ॥ ७ ॥ प्रमोद आनंद ॥ ८ ॥ दुनी संसार, कुलि सब ॥ ९ ॥ पृथ्वीपति की रानी आनंदित भई भाग कोख ते जुड़ात भई। भाव भाग तो पति ते जुड़ानै रह्यो पर पुत्र भए ते कोखिउ करि जुड़ानी वा आनंद की भूमि जे सब महाराज की रानी ते भाग औ कोखि ते जुड़ात भई। रमा उमा ब्रह्मानी

के सराहिबे को यह भाव कि विश्व के पिता को पुत्र बनाए तातें धन्य हैं ॥ १० ॥ विभव का विस्तार औ बंश की बृद्धि दशरथ महाराज की देखि के तिन को न सोहानी तिन्ह पर यश मंगल ऐश्वर्य जय रिद्धि औ अणिमादिक सिद्धि सर्व कोहानी भाव ए सब ताको त्याग किए॥११ गुरु ज्ञानी विधानी जो श्री वशिष्ठ जू सो छट्ठी औ बरही की लोक वेद विधि कों सुंदर विधान नें करि राम लषन रिपुदवन भरत सुंदर नाम धरे। इहां छन्दोनुरोध ते क्रमपूर्वक नाम न लिखे ॥१२॥ पहिले तिल फूल में बासा जात है फेर पेरा जात है तब फुलेल होत है ताको रूपक कहत हैं ब्रम्मा ने सुकृत रूप सुगंध दार फूल में आनंद रूप तिल को वासि कै यत्न रूप कोल्हू मे घानी भरि पेरिकै सुख रूपी फुलेल दशरथ महाराज कों दिए औ खरी औ खलेल कहै फोकट जो सो थिरयानी कहि देवता तिन को दिए ॥१३॥ मति दिन उछाह को उदै औ उमंग है औ जगत में घर घर अयोध्या जी की कहानी है रही है सो समाज उर में आनि कै तुलसी रामजन्मयश गावत हैं। भाव जाते हमारे हृदय में भी उछाह को उमंग उदय होय ॥ १४ ॥ ४ ॥

टिप्पणी—महाराज ने देव पितर गुरु और ब्राह्मणों को पूजि के रुचि जान अर्थात् रुचि अनुकूल दान दिये। मुनिपत्नियों को और पुर की नारियों और सुआसिनियों का अनेक प्रकार से सम्मान किया याचकों को इतना दान दिया कि वे लोग आशीर्वाद देते हुए दानी होकर राजद्वार से निकलते हैं अर्थात् इतना अधिक दान मिला और ऐसा आनन्द कि वे लोग भी दानी हो गये। आशीर्वाद में कहते हैं कि हे महेश भवानी! ऐसेही केकई और सुमित्रा पर प्रसन्न होहु।

रागकेदारा—अवध बधावने घर घर मंगल साज समाज। सगुन सोहावने मुदित करत सब निज निज काज ॥ छंद ॥ निजकाज सजत संवारि पुर नर नारि रचना अनगनी। गृह अजिर अटनि बजार बीथिन्ह चारुचौके बिधिबनी ॥ चामर पताक बितान तोरन कलस दीपावलि बनी। सुख सुकृत सोभामयपुरी बिधि सुमति जननी जनु जनी ॥ दो०—चैत

चतुरदश चांदनी, अमल उदित निसिराजु। उडगन अव
लसी दस दिसि, उमगत आनन्द आजु॥ छन्द। आन
उमगत आजु बिबुध विमान विपुल बनायकै। गावत बजा
नटत हरषत सुमन बरषत आइकै॥ १॥ नर निरखि
सुर पेखि पुर छवि परस्पर सचुपाइकै। रघुराज साज सर
लोयनलाहु लेत अघाइकै॥ २॥ दो०—लागिय राम छ
सजनोरी, रजनी रुचिर निहारि। मंगल मोद मढी मूर
जहं नृपबालक चारि॥ छंद—मूरति मनोहर चारि बि
बिरंचि परमारथमई। अनुरूप भूपहि जानि पूजन योग बि
संकर दई। तिन की छठी मंजुल मढी जगसरस निन्द
सरसई। किए नींद भामिनि जागरन अभिरामिनी जामि
भई॥ ३॥ दो०—सेवक सकल भये समय, सुसाधनस
सुजान। मुनिवर गुरु सिषये लौकिक, वैदिक बिबि
बिधान॥ छंद। वैदिकबिधान अनेक लौकिक आचरत
जानिकै। बलिदान पूजा मूलिकासनि साधि राखी आनि
जो देव देवी सेइयत हितलागि चितसनमानिकै। ते तंत्र
सिपाइ राखत सवन सो पहिचानिकै॥ ४॥ दो०। स
सुआसिनि गुरजन, पुरजन पाहुने लोग। बिबुध बिला
सुरमुनि, जाचक जो जेहि जोग॥ छंद। जेहि जोग जे
भांति ते पहिराइ परिपूरन किए। जे कहत देत अ
तुलसीदास ज्यौं हुलसतहिए॥ ज्यौं आजुकालिहु परव ज
कोहिंगे नेवते दिए। ते धन्य पुन्यपयोधि जे तेहिसमैसुपजी
जिए।५। दो०।भूपतिभागबली सुरनर, नाग सराहि सिहा
तियबरबेष अली संपति, सिधिअनिमादिक माहिं॥ छं

निमादि सारद सैलनंदिनि वाल लालहि पालहीं। भरि नम जे पाये न ते परितोष उमा रमा लही॥ निजलोक वसरे लोकपनि घर कौन चरचा चालहीं। तुलसी तपत तेहुताप जग जनु प्रभु छठी छाया लही॥ ६॥ ५॥

अब छठी लिखत हैं, कवि की उक्ति है। अवध में मंगल साज समाज औ बधावा घर घर है औ निज निज काज करत सगुन सोहाने होत ताते सब मुदित हैं। पुर नर नारि अगनित रचना संवारि कै जाको जो काज ताको सजत हैं। गृह आंगन अटारिन बजार औ गलिन में घनी विधि ते सुंदर चौकें औ चवंर पताका चंदवा बंदनवार कलश औ दीपावली घनी है। सुख सुकृत सोभामय पुरी जो श्री अयोध्या जू तिन को ब्रह्मा जू की सुंदर मति रूपा जननी ने मानो उत्पन्न करी है॥ अब सखी प्रति सखी की उक्ति है। आज उजेरी चैत चतुर्दशी को निर्मल अर्थात् धूम मेघ आदि रहित निशिराज कहैं चन्द्रमा प्रकाशमान हैं औ तारागण की पंक्ति सोभित भई है औ दशो दिशा में आनंद उमगत है आजु देवता अनेक बिमान बनाय के आनंद उमगत गावत बजावत नाचत हर्षित होत आय के सुमन वर्षत हैं॥१॥ नर आकाश देखि औ देवता पुरछवि देखि परस्पर आनंद पाय रघुराज को साज सराहि अघाय के लोचन लाभ लेत हैं॥२॥ री सखी राम छठी की राति सुंदर निहारि के जागिए। मंगल औ मोद सोई मंदिर है मंदिर में मूरति रहति है, इहां महाराज के चारों बालक सोई मूर्ति हैं परमार्थ रूप मनोहर चारि मूर्ति ब्रह्मा सुंदर रचिकै ताके अनुरूप महाराज ही को पूजन योग्य जानि ब्रह्मा शिव मिलि दई तिन की छठी सुंदर मंदिर में है वा तिन की छठी मंजुल कहैं सुंदर मंदिर है औ जिन्ह की सरसई करि जगत सरस है सो नींद किए औ भामिनि जागरन किए ताते रमणीया रात्रि भई वा जिन्ह की सरसई ते जगत सरस है तिन्ह की छठी रूप सुंदर मही में और को को कहै नींद रूपा भामिनि भी जागरन किये ताते रमणीया रात्रि भई॥३॥ सेवक समय के सुंदर साधनहारे औ सचिव सुजान सब सजग भए तिन के

मुनिवर जे गुरु ते लौकिक वैदिक अनेक प्रकार के विधान। तब मुनि जानि कै अनेक वैदिक लौकिक विधान को आचरन हैं वलिदान पूजाहेतु औ जड़ी औ मणि आनि कै साधि राखी हित लागि चित ते सनमानि कै जे देव देवी सेइयत हैं ते देव देवी तंत्र मंत्र सबनि सो पहिचानि के सिखाय राखत । पहिचानि कै को यह भाव कि जेहि देवता में जाकी प्रीति है वा ते देव देवी मुनिवरन सों पहिचान करि के अपना २ जंत्र मंत्र सिखाय राखा सिखाइबे को यह भाव कि जो एहिवार न पूजे जाहिंगे तो फेर कोऊ पूजैगो ॥४॥ संपूर्ण सोहागिनि श्रेष्ठवर्ग पुरजन पाहुन विलासिनि कहैं देवपत्नी देवता मुनि औ याचक लोग जो जेहि के हैं तेहि को तेहि भांति वस्त्र भूषणादि पहिराय परिपूरण किए तुलसीदास को हृदय हुलसत है तैसे हुलसत हिए जय कहत असीस देत हैं औ नेवता दिए कि ज्यौं आजु जागरन भयो है अर्थात् श्री राम की छठी को तैसे काल्ह श्री भरतकी छठी को औ परों श्रीलखन शत्रुहन की छठी को जागरन होहिंगे, अब गोसाईं जी कहत हैं ते धन हैं औ पुन्य के समुद्र हैं जे तेहि समय में सुखपूर्वक जीवन ते थि अर्थात् वहि उत्सव में जे रहे ॥५॥ संपाति कहैं लक्ष्मी औ सिद्धि अणि मादि ते स्त्री सखी को श्रेष्ठ वेष करि कमाति हैं अर्थात् दासीपना करति हैं औ अणिमादि सिद्धि औ सरस्वती औ पार्वती श्री बालरान को लालत पालत हैं जन्म भरि में जे परितोष न पाए ते परितोष उमा रमा लहहु भई अर्थात् पुत्र खेलायबे को सुख न पाए रहीं सो पाईं औ इंद्रादिक अपने लोक को भूले, जावे को को कहैं घर की चरचा तक नहीं चलावत हैं। गोसाईं जी कहत हैं मानो तीनों ताप में तपत संसार मधुछठी की छाया पाई है ॥ ६॥५ ॥

राग जयतश्री—बाजत अवध गहागहे आनंद बधाये। नामकरन रघुबरनि के नृप सुदिन सोधाए। पाय रजायसु राय को रिषिराज बोलाए ॥ सिष्य सचिव सेवक सखा सादर सिरनाए। साधु सुमति समरथ सबै सानंद सिधाए।

हल दूग फल मनि मूलिका कुलि काज लिपाए ॥ १ ॥ गनप गौरि हर पूजिके गोहन्द दुहाए। घर घर मुद मंगल महागुनगान सुहाए। तुरित मुदित जहं तहं चले मन के भए भाए। सुरपति मामनु घन मनो मारुत मिलिधाए ॥२॥ गृह आंगन चौहट गली बाजार बनाए। कलस चमर तोरन बजा सुबितान तनाए ॥ चित्र चारु चौके रची लिपि नाम तनाए। भरि भरि सरवर बापिका अरगजा सनाए ॥ ३ ॥ नर नारिन्ह पल चारि मे सब साज सजाए। दशरथपुर छवि आपनी सुरनगर लजाए ॥ विबुध बिमान बनाइके आनंदित पाए। हरषि सुमन बरषन लगे गये धनु जनु पाए ॥४॥ वरे विप्र चहुं वेद को रविकुल गुर ज्ञानी। आपु वशिष्ट अथर्वनी महिमा जग जागी ॥ लोकरीति विधिवेद की करि कह्यौ सुबानी। सिसु समेत वेगि बोलिये कौसल्या रानी ॥ ५ ॥ सुनत सुधासिनि लै चलीं गावत बडभागी। उमा रमा सारद सची देषि सुनि अनुरागी। निज निज रुचि वेष विरचियो हिलि मिलि संग लागीं। तेहि अवसर तिहुंलोक की मुदसा जनु जागीं ॥ ६ ॥ चारु चौक वैठत भई भूप भामिनि सोहैं ॥ गोद मोद मूरति लिये सुकृती जन जोहैं। सुष सुषमा कौतुक कला देषि सुनि मुनि मोहैं। सो समाज कहि वरनिके ऐसो कवि कोहैं ॥ ७ ॥ लगे पठन रघारिचा रिषिराज बिराजे। गगन सुमन झरि जय जये बहु बाजनी बाजे ॥ भए अमंगल लंक मे संक संकट गाजे। भुअन चारिदस के वडे दुष दारिद भाजे ॥ ८ ॥ बाल विलोकि अथर्वनी

हंसि हरषि 'बनायो। सुभ को सुभ मोद मोद को राम
सुनायो ॥ आल वाल कल कोकिला दल बरन सुहा
कंद सकल आनंद को जनु अंकुरि आयो ॥ ८ ॥ बोलि वा
वदि जोरिकै करपुट सिर नाये। जय जय जय करुनानि
सादर सुर माये ॥ सत्यसंध सांचे सदा जे आखर भाये॥ प्रन
पाल पाये सही जे फल अभिलाये ॥ १० ॥ भूमिदेव
देषि कै नरदेव सुधारी। बोलि सचिव सेवक सषा पटधा
भंडारी ॥ देहु जाहि जेहि चाहिए मन मानि संभारी। ल
देन हिय हरषिकै हेरि हेरि हंकारी ॥ ११ ॥ राम नेवछाव
लेन को हठि होत भिषारी। बहुरि देत तेहि देषिये मान
धनधारी ॥ भरतलषनरिपुदमनहूं धरे नाम विचारी। फ
दायक फल चारि के दसरथ सुतचारी ॥ १२ ॥ भये भू
बालकनि के नाम निरुपम नीके। गये सोच संकट मिटे त
तें पुरती के ॥ सुफल मनोरथ विधि किये सब विधि सबहीके
अब ह्वैहैं गाये सुने सब के तुलसी के ॥ १३ ॥ ६ ॥

कवि की उक्ति। आनंद बधावा अवध में गहागह बाजत है। गहाग॰
यह अनुकरण है चारो भाइन के नामकरण के हेतु। महाराज सुंदर दिन
सोधावत भए। महाराज की आज्ञा पाय श्री वशिष्ट जू के शिष्य औ
महाराज के मंत्री दास सखा बोलवावत भए वे आइ सादर शिर नवाए
ते सब साधु समर्थ को वशिष्ट जू आनंद सहित सिखावत भए। भाव
वस्तु आने की विधि समुद्रादि जल तुलसी दुर्वा बिल्वादि दल सोपारी
आदि फल पंच रत्न आदि मणि सतावरि आदि जड़ी और जे संपूर्ण
साज के वस्तु लिखाइ दिए ॥ १ ॥ गनेश गौरी श्री शिव जी को पूजि
कै गाइन को दुहाए। घर घर में महा आनंद मंगल औ गुन के गान छंदर
५। मन के भाए भए ते सचिव सेवकादि जहां तहां त्वरित हर्षित

चले मानो इंद्र की आज्ञा तें मेघ पवन मिलि करि-धाए ।२। गृह आदि सुगम। विचित्र सुंदर चौकें रचि कै नाम लिखि जनावत भए अर्थात् यह चौक श्री राम की है यह श्री भरतादि भैयन की है औ तलाव बावली में अरगजा भरि भरि के सनाए ॥ ३ ॥ एतना बड़ा काज सो चारि पल में नर नारि सब सजाए । दशरथपुर ने अपनी छवि तें इन्द्रलोक को लज्जित किए अतएव देवता विमान बनाय के आनंदित आए । भाव लजीली पुरी में रहना उचित नहीं। हर्षि के फूल बरखन लगे, मानो गए धन पाए ॥४॥ वशिष्ट जी ने बरे कहैं नेवता दिए चारो वेद के ब्राह्मणों को औ आप वशिष्ट जो अथर्वनी हैं जाकी महिमा जगत जानत है सो लोकरीति औ वेद की विधि करि सुन्दर बानी ते कहे । सिसुइ० सु० ॥५॥ सुनत मात्र सुआसिनी बड़िभागिनी गावत ले चली । पार्वती लक्ष्मी सरस्वती इन्द्रानी स्वरूप देखि गान सुनि कै अनुरागत भई । अपनी २ रुचि अनुसार वेख बनाय हिलि मिलि संग लागत भई तेहि अवसर में तीनों लोक की मानो सुंदर दशा जागी । भाव चौकठ के बाहर होते सुंदर दसा जागी तो जब घर के बाहर निकसैंगे तब क्या जानै क्या होयगो, बरही के दिन आगन में निकालबे की रीति है ॥ ६ ॥ सुंदर चौके में भूपभामिनी बैठत भई गोद में आनंद की मूर्ति लिए सोभत हैं जेहि मूर्ति को सुकृतीजन देखत हैं, सुख औ परम शोभा औ कौतुक की कला देखि मुनि के मुनि मोहत हैं । सो इ० मु० ॥७॥ विराजे सोभे संक संकट गाजे कहैं संका औ संकट गाजत भए ॥ ८ ॥ बालक को देखि अथर्वणी ने शिव को जनायो जो शुभ को शुभ मोद को मोद राम नाम है, सो हंसि के सुनायो माता पिता आदि को सुनायो, हंसने को यह भाव कि, इन का नित्य नाम जो है, ताको अब धरत हौं । पाद्मे-"श्रियः कमलवासिन्याः रमणोऽयं यतो हरिः । तस्मात् श्रीराम इत्यस्य नाम सिद्धं पुरातनम् ॥ सहस्रनामसदृशं स्मरणान्मुक्तिदं नृणाम् ॥" वशिष्ट को अथर्वनी रघुवंश में भी लिखा है। "अथाथर्वनिधेस्तस्य विजितारिपुरः पुरः । अर्घ्यामर्घ्यपति र्वाच माददे वदतां वरः ॥" अथर्वनी कहिबे ते, पुरोहित कृत्य के ज्ञाता जनाये, तथा च कामन्दके—"त्रय्यां च दण्डनीत्यां च कुशलः स्यात्पुरोहितः । अथर्वविहितं कुर्यान्नित्यं शांति-

कर्पौष्टिकम् ॥" तीनों वेद में, औ राजनीति में, प्रवीन होय, सो पुरोहि
अथर्वण वेद करि विहित शांतिक पौष्टिक कर्म करै। थाल्हा रूप सुंदर
कौशल्या जू हैं, तिन में सकल आनंद को मूल, मानो अंकुर आयो
इहां अंकुर के स्थान में बाल श्री राम हैं, अंकुर ते दुइ दल निकसत
सो इहां राम नाम के सुंदर दोऊ अक्षर हैं ॥९॥ श्री रामजी को देखि
औ वशिष्ट जी के कहिबे ते, नाम जानि के ताको जपि कै हस्तपुट जो
सिर पर राखे, अर्थात् प्रणाम किए, हे करुणानिधे, हे सत्यसंध, हे प्र
तपाल, आप की जय होय जय होय, आदर सहित देवता भाषे, आप
आपर आपे कहैं, कहे अर्थात् "जनि डरपहु मुनि सिद्ध सुरेसा। तुम
लागि धरिहौं नरवेसा ॥" इत्यादि ते सदा सांचे, जे फल अभिलाषे
ते ठीक पाए, अर्थात् आप के अवतार के अभिलाषे रहे सो पाए ॥१
ब्राह्मण औ देवतन को देखि कै सुखी जो नरदेव सो संचित सेव
सखापटधारी बस्त्रन के अधिकारी, औ भैडारी अन्नादिक के अधिका
बोलाय के आज्ञा दिए ॥ ११ ॥ धनधारी कुबेर ॥ १२ ॥ भूप के
बालकन के उपमा रहित नीके नाम भए, तब ते पुरतियन के सोच गये,
औ संकट मिटे, भाव सूतिकागृह में अनेक विघ्न को भय रहत है, औ
स्त्रियन को भीरु सुभाव भी होत है, ताते डरी रहीं सो बरही कुशलपूर्वक
समाप्ति भई, ताते सोच गयो, या शुभ को शुभ मोद को मोद राम नाम
सुनि सोच रहित भई ॥ १३ ॥ ६ ॥

राग बिलावल—सुभग सेज सोहति कौसल्या रुचिर राम सिसु गोद लिये। बार बार बिधु बदन बिलोकति लोचन चारु चकोर किये ॥ १ ॥ कबहुं पौढ़ि पय पान करावति कबहुं राखति लाय हिये। बालकेलि गावति हल-रावति पुलकित प्रेम पियूष पिये ॥ २ ॥ बिधि महेस मुनि सुर सिहात सब देखत अंबुद ओट दिये। तुलसिदास ऐसो सुख रघुपति पै काहूं तो पायो न बिये ॥ ३ ॥ ७ ॥

कवि की उक्ति। बिधु चंद्र ॥१॥ श्री राम प्रेम रूप अमृत को पिए,

जो श्री कौशल्या जू ने बाललीला के पद गावति, औ श्री रघुनाथ को हाथ पर झुलावति, औ रोमांचित होति हैं, भाव हर्ष तें ॥ २ ॥ बाहर के ओट ह्वै देखिबे को यह भाव कि, प्रत्यक्ष होय देखिबे से माता हम लोगों के ओर दृष्टि करेंगी, तो यह सुख जात रहेगो, ऐसो सुख रघुपति से दिये कहं, दूसरे ने न पायो ॥ ३ ॥ ७ ॥

राग सोरठ —ह्वैहो लाल कबहिं बड़े बलि मैया । राम लषन भावते भरत रिपुदमन चारु चार्यो भैया ॥ १ ॥ बाल विभूषन बसन मनोहर अंगनि विरचि बनैहौं । सोभा निरषि निछावरि करि उरलाय वारने जैहौं ॥२॥ छगन मगन अंगना षेलिहौ मिलि ठुमुकि ठुमुकि कब धैहौं । कलबल वचन तोतरे मंजुल कहि मा मोहि बुलैहौं ॥ ३ ॥ पुरजन सचिव राउ रानी सब सेवक सषा सहेली । लैहै लोचनलाहु सुफल लषि ललित मनोरथ बेली ॥ ४ ॥ जो सुष को लालसा लटू सिव सुक सनकादि उदासी । तुलसी तेहि सुष सिन्धु कौसिला मगन पै प्रेम पियासी ॥ ५ ॥ ८ ॥

मैया बलिजाय, हे लाल, कब बड़े हैं हो। भावते कहें सोहाते ॥१॥ बाल विभूषन कठुला जामे बजर बट्टू बघनहा आदि रहत है, औरो पदिक हारादि अनेक, औ बसन झिंगुलिया चौतनी आदि मन के हरैया अंगन में विरचि के बनावोंगी, वा अंगनि को भी विशेष रचि बनै हौं भाव चोटी गांठि उबटि डिठौना आदि दै शोभा देखि नेवछावर करि उरलाय फिरि आप नेवछावरि होय जैहों ॥ २ ॥ छगनमगन एक खेल विशेष है, कल बल जो बुद्धि के बहुत कला औ बल से बुझाय तोतरे आधे और के और कहे सोई स्पष्ट करत हैं, कहि मा मोहि बुलै हो अर्थात् माय स्पष्ट न कहि मा कहि बोलैहो ॥ ३ ॥ पुरजन सचिव आदि सुंदर मनोरथ रूप लता में सुंदर फल देखि लोचन लाहु लेइ हैं, इहां सचिव पद से आठो मंत्री जानना, बाल्मीकीये—

" धृष्टि जयंतो विजयः सुराष्ट्रो राष्ट्रवर्द्धनः । अशोको धर्मपाल सुमंत्रश्चाष्टमो महान्" ॥४॥ लालसा मे लट्टू हैं, भाव जैसे एकै ठांव घूम झूमत लट्टू अचल रहत ॥ ५ ॥ ८ ॥

पछनि कब चलिहौ चारो भैया । प्रेम पुलकि उर ला सुभन सब कहत सुमित्रा मैया ॥ १ ॥ सुंदरतन सिसु बस विभूषन नष सिष निरषि निकैया । दलिचिन प्रान नेछावरि करि करि लैहै मातु बलैया ॥ २ ॥ किलकनि नटनि चलनि चितवनि भजि मिलनि मनोहर तैया । मनिषंभनि प्रतिबिंब झलकछबि छलकिहि भरि अंगनैया ॥ ३ ॥ बाल विनोद मोद मंजुल बिधु लीला ललित जुन्हैया । भूपति पुन्य पयोधि उमगि घर घर आनंद बधैया ॥ ४ ॥ ह्वै हैं सकल सुकृत सुष भाजन लोचन लाहु लुटैया । अनायास पाइ हैं जनम-फल तोतरे बचन सुनैया ॥५॥ भरत राम रिपुदमन लषन के चरित सरित अन्हवैया । तुलसी तब के से अजहुं जानिबे रघुवर नगर बसैया ॥ ६ ॥ ९ ॥

निकैया सुंदराई । तृन तोरिबे को यह भाव कि अपनों नजर न लगै ॥२॥ नटनि नाचनि भजि मिलनि भागि के मिलना मणिखंभनि में जो प्रतिबिंब परैंगे तिन की छवि की झलक भरि अंगनाई छलकिहि भाव प्रतिबिंब का प्रतिबिंब भरि अंगनाई परिहि वा अवहीं जो घर में रहिवे ते मणि खंभनि में प्रतिबिंब के झलक की छबि है, सो जब बाहर खेलिहैं, तब भरि अंगनाई झलकहि, भाव आंगन भरि बालकै बालक देखि परेंगे ॥ ३ ॥ चारो भैयन के लरिकखेल जो आनंद, सो चन्द्रमा औ सुंदर खेलना जो है, सो तेहि चंद की चांदनी, तेहि चन्द प्रकाश युक्त को देखि के पुण्य के समुद्र जे भूपति ते उमगिहैं, जब समुद्र उमगत है, तब चन्द करत है, इहां घर घर में आनंद ने जो बधाई

होना है, सो शब्द है ॥ ४ ॥ तोतरे वचन के सुननहारे वेपरिश्रम जन्म के फल को पावैंगे, भाव वेद वेदांत के श्रवण मनन निदिध्यासन बिना जन्म को फल अर्थात् मोक्ष पावैंगे, इहां माधुर्यपक्ष मे स्पष्ट है ॥ ५ ॥ श्री गोसांई जी कहत हैं, भरत राम रिपुदवन लपन के चरित्र रूपी नदी के स्नान करैया जे हैं तिन को तब के सरिस अबो रघुवरनगर बसैया जानना ॥ ६ ॥ ९ ॥

राग केदार—चुपरि उवटि अन्हवाय कै नयन आंजेरचि रुचि तिलक गोरोचन को कियो है। भू पर अनूप मसिबिंदु वारे वारे वार विलसत सीसपर हेरिहरै हियो है ॥१॥ मोद भरि गोदलिये लालति सुमित्रा देपि देव कहैं सबको सुकृत उपवियो है। मातु पितु प्रिय परिजन पुरजन धन्य पुन्यपुंज पेपि पेपि प्रेम रसपियो है ॥ २ ॥ लोहित ललित लघु चरन कर कमल चाल चाहि सो छवि सुकवि जियजियो है। वाल केलि वातवस झलकि झलमलत सोभा की दीयटि मानो रूपदीप दियो है ॥ ३ ॥ राम सिसु सानुज चरित चारु गाय सुनि सुजननि सादर जनमलाहु लियो है। तुलसी विहाइ दसरथ दसचारिपुर ऐसे सुप योग विधि विरच्यो न वियो है ॥ ४ ॥ १० ॥

उवटन लगाय तेल चुपरि नहवाय के नेत्र में काजर दिये औ रुचि पूर्वक रचि कै गोरोचन को तिलक कियो औ भौंह पर उपमा रहित स्याम बिंदु दियो, अर्थात् ढिठौना औ छोटे छोटे बार सिर पर शोभित हैं, देखे से हृदय हरि लेत हैं ॥ १ ॥ आनंद में भरि कै गोद में लिये सुमित्रा जू को दुलारत देखि देवता कहत हैं, कि सब को सुकृत उदै भयो है, औ माता पिता प्रिय परिवार के जन औ पुरजन धन्य औ पुन्य के पुंज हैं, काहे ते कि देखि देखि के प्रेम रस को पी लियो है ॥२॥ सुंदर लाल छोटे २ चरन औ कर कमल का चाल कहैं चलावना जो

सो छबि देखि कै सुंदर कवि को जीव जी उठ्यौ है, इहां चाल शब्द ते हाथ पैर का चलावना लेना क्योंकि वंकइआं चलना अवहीं आगे कहेंगे मानो सोभा रूप दीवट पर रूप रूपी दीया धर्यौ है सो चाल केलि रूप वायु के वस झलकि के झलमलात है ॥ ३ ॥ गोसांई जी कहत हैं कि चौदहो भुअन में ऐसे सुख के योग्य महाराज दशरथ को छोड़ि के ब्रह्मा ने दूसरे को नहीं बनायो है ॥ ४ ॥ १० ॥

राम सिसु गोद महामोद भरे दशरथ कौसिलहु ललकि लषन लाल लिये हैं । भरत सुमित्रा लये कैकई सत्रुसमन तन प्रेम पुलकि मगन मन भये हैं ॥ १ ॥ मेंढ़ी लटकन मनि कनक रचित बाल भूषन बनाइ आछे अंग अंग ठये हैं। चाहि चुचुकारि चूंबि लालत लावत उर तैसी फल पावत जैसे सुबीज बये हैं ॥ २ ॥ घन ओट विबुध बिलोकि बरषत फूल अनुकूल वचन कहत नेह नये हैं । ऐसे पितु मातु पूत पुर परिजन बिधि जानियत आयुभरि एई निरमये हैं ॥ ३ ॥ अजर अमर होहु करो हरि हर छोहु जरठ जठेरिन्हि आसिर्वाद दिये हैं । तुलसी सराहे भाग तिन्ह के जिन्ह हिये डिंभ राम रूप अनुराग रंग रये हैं ॥ ४ ॥ ११ ॥

बालराम गोद में हैं, ताते दशरथ महाराज महामोद में भरे हैं औ श्री कौसल्या जू भी ललकि कै लषन लाल को लिये हैं, भरत जू को श्री सुमित्रा जू औ शत्रुहन जू को कैकई जू लिये हैं, प्रेम तें तन पुलकि करि कै सब के मन मगन भये हैं ॥ १ ॥ भालपर के बाल कों चोटी सरिस दूनो ओर से गूंथि के पीछे के ओर ले जात हैं, ताको मेंढ़ी कहत हैं, तामे लटकने लटकत हैं, और मणि सोना ते रचित, अर्थात् जड़ाऊ बाल समयके भूषन आछे बनाय के अंग अंग में ठाने हैं, अर्थात् पहिराये हैं, देखि चुचुकारि चूमि के दुलारत औ हृदय में लगावत हैं तैसे फल पावत जैसे सुंदर बीज बोए हैं, इहां सुंदर बीज सुंदर कर्म

हैं ॥ २ ॥ मेघ के गोद ते देवता देखि के फूल बर्षत हैं औ नये नेह से अनुकूल वचन कहत हैं या नेह ते देव नम्र है गए हैं वा अनुकूल वचन कहत हैं कि इन के नेह नवीन हैं अर्थात् अस न देखे। पिता माता नगर परिजन को जानियत हैं कि विधाता आयुष भरि में ऐसे इनहीं को बनाए हैं ॥ ३ ॥ जरठ जठेरिन्ह वृद्ध औ बूढ़िया डिंभ बालक रये रंगे ॥ ४ ॥ ११ ॥

राग चमायरी—आजु अनरसे हैं भोर के पय पियत न नीके। रहत न बैठे ठाढ़े पालने भूलतहु रोवत राम मेरो सो सोचु सबही के ॥ १ ॥ देव पितर ग्रह पूजिये तुला तौलिये घी के। तदपि कबहु कबहु सखी ऐसही अरत जब परत दृष्ट दुष्ट ती के ॥ २ ॥ बेगि बोलि कुलगुरु छुयो माथे हाथ अमीके। सुनत आइ रिषि कुसहरे नरसिंहमंत्र पढ़ि जो सुमिरत भय भी के ॥ ३ ॥ जासु नाम सर्वस सदा सिव पारवती के। ताहि झरावति कौसिला यह रीति प्रीति की हिय हुलसति तुलसी के ॥ ४ ॥ १२ ॥

अनरसे हैं खनमनाए हैं ॥ १ ॥ घृत को तुला दान सुख कारक रोगहारक है, अरत छैलात ॥ २ ॥ शीघ्र बोलाइये कुलगुरु को कि माथ को अमृत रूप हाथ ते छुवैं सुनत मात्र में ऋषि आय कै नरसिंह मंत्र जो सुमिरत भय को भय होत सो पढ़ि कै कुशहरे कुश ते मार्जन किये ॥ ३ ॥ १२ ॥

माथे हाथ जब दियो ऋषि राम किलकन लागे। महिमा समुझि लीला बिलोकि गुरु सजल नयन तन पुलकि रोम रोम जागे ॥१॥ लिये गोद धाए गोद ते मोद मुनि मन अनुरागे। निरषि मातु हरषीं हिये आली घोट कहति मृदु-बचन प्रेम कैसे पागे ॥ २ ॥ तुम सुरतरु रघुबंस के देत अभि-

मत भागे। मेरे विसेपगति रावरी तुलसी प्रसाद जाके सक अमंगल भागे ॥ ३ ॥ १३ ॥

माता के गोद तें धाए तब मुनि गोद में लिए औ हर्ष मुनि मन में अनुरागे ॥ २ ॥ सुरतरु कल्पवृक्ष, अभिमत वांछि फल ॥ ३ ॥ १३ ॥

अमिअ विलोकनि करि कृपा मुनिवर जब जोए। तब राम अरु भरत लपन रिपुदमन सुमुपि सपि सवाल सुष सुपसोये ॥ १ ॥ जाय सुमित्रा लिए हिए फनिमनि ज्य गोए। तुलसी नेवछावरि करति मातु अतिप्रेममगन मन सजल सुलोचनकोए ॥ २ ॥ १४ ॥

अमिय विलोकनि अमृत दृष्टि जोए देखे ॥ १ ॥ सुमित्रा जू हृदय में लगाय लिए जैसे सर्प मणि को छपावत कोय कहैं कोर ॥ २ ॥१४

मातु सकल कुलगुरुवधू प्रियसषी सुहाई। सादर सब मंगल किए महि मनि महेस पर सवनि सुधेनु दुहाई ॥१॥ वोलि भूप भूसुर लिये अति विनय वडाई। पूजि पांय सनमानि दानदिये लहि असीस मुनि वरषैं सुमन सुरसांई ॥ २॥ घरघर पुर बाजन लगे आनंदवधाई। सुष सनेह तेहि समै को तुलसी जानै जाको चोरो है चित चहुंभाई ॥ ३ ॥ १५

सकल माता कुलगुरु वधू अरुंधती औ सुंदर प्रिय सखी आद सहित मंगल किए। भूमि में जो मणि कहैं श्रेष्ठ महेश तिन पैं वा माहि स्तोत्र ते सबनि ने सुंदर धेनु दुहाई। अयोध्या खंड में क्षीरेश्वर महादे पर दूधदुहावना लिखा है ॥ १ ॥ ब्राह्मणों को महाराज बोलाय लि अति विनय बड़ाई ते पाय पूजि सनमानिकै दान दिए तब आसी पाय सो मुनि के देवतन के स्वामी फूल बर्षत भए ॥ २ ॥ ३ ॥१५

राग धनाश्री—या सिसु के गुन नाम बड़ाई। कोकहि सकै सुनहु नरपति श्रीपतिसमान प्रभुताई ॥ १ ॥ यद्यपि बुधि बय रूप शील गुन समै चारु चारयौ भाई। तदपि लोक लोचन चकोर ससि राम भगत सुपदाई ॥२॥ सुर नर मुनि करि अभय दनुजहति हरिहि धरनि गरुआई। कीरति बिमल बिस्वअघ मोचनि रहिहि सकल जगछाई ॥ ३ ॥ या की चरन सरोज कपटतजि जो भजिहै मनलाई। सो कुल जुगुल-सहित तरि है भव एह न कछू अधिकाई ॥४॥ सुनि गुरुवचन पुलकितन दंपति हरष न हृदय समाई। तुलसिदास अव-लोकि मातुमुष प्रभुमन में मुसुकाई ॥ ५ ॥ १६ ॥

समै बराबर ॥ ५ ॥ १६ ॥

टिप्पणी—राक्षसों को मार कर सुर नर मुनि को अभय करेंगे। और पृथ्वी की गरुआई कहें बोझ उतारेंगे, सो अघ पाप को हरनेवाली विमल कीर्ति संसार में छाये रहेगी। ॥ १६ ॥

राग बिलावल—अवध आजु आगमी एकु आयो। कर-तल निरषि कहत सबगुनगन बहुतनि परिचो पायो ॥ १ ॥ बूढ़ो बडो प्रमानिक ब्राह्मण संकर नाम सुहायो। संग सिसु सिष्य सुनत कौसिल्या भीतर भवन बुलायो ॥ २ ॥ पाय-पपारि पूजि द्यो आसन असन बसन पहिरायो। मेले चरन चारु चारों सुत माथे हाथ दिवायो ॥३॥ नरपसिष बाल बिलोकि बिप्र तनु पुलक नयन जल छायो। लैलै गोद कमल कर नि-रषत उरप्रमोद अनमायो ॥ ४ ॥ जन्म प्रसंग कह्यो कौसिक मिसि सीयस्वयंवर गायो। राम भरत रिपुदमन लषन को जय सुष सुजन सुनायो ॥ ५ ॥ तुलसिदास रनिवास रहसबस

भयो सब को मन भायो। सनमान्यो महिदेव असीसत सा-
नंद सदन सिधायो ॥ ६ ॥ १७ ॥

शिव जी जोतषी बनि कै रांग में सुंदर शिष्य काग भशुंड जी के बनाय कै इष्ट दर्शन हेतु आए हैं। उर ममोद अनमायो हृदय में आनंद नहीं अमात है ॥ १७ ॥

टिप्पणी—आगम जानने वाले को आगमी अर्थात् ज्योतषी कहते हैं। करतल तलहथी। परिचो परिचय अर्थात् शिवरूपी ज्योतिषी जी ने जिन २ को जैसा फल कहा सो सच देख पड़ा। शिव जी वार वार राम जी को गोद में ले कर कमल समान कर देख देख कर इतने प्रसन्न हुए कि हृदय में आनन्द नहीं अंटा अर्थात् आनन्द हृदय से उमड़ गया ॥ १७ ॥

राग केदार—पौढ़िये लाल पालने हौं झुलावौं। कर पद मुष चष कमल लसत लषि लोचन भंवर भुलावौं ॥ १ ॥ बालबिनोद मोद मंजुल मनि किलकनि षानि षुलावौं। तेइ अनुराग ताग गुहिबे कहुं मति मृगनयनि बुलावौं ॥२॥ तुलसी भनित भलो भामिनि उर सो पहिराइ फुलावौं। चारु चरित रघुबर तेरे तेहि मिलि गाइ चरन चित लावौं ॥ ३ ॥१८॥

हे लाल पालने पौढ़िए हम झुलावैं। कर पद मुख नेत्र रूप कमल शोभित देखि कै अपने नेत्र रूप भ्रमर को भुलावैं ॥ १ ॥ बालक्रीड़ा को आनंद सोई सुन्दर मणि है। मणि खानि ते निकसत है सो कहत हैं कि किलकनि रूपी खानि से खुलावों अर्थात् प्रगटावों तेहि मणि को अनुराग रूपी धागा में गुहिबे को मति रूपी मृगनैनी अर्थात् पटहारिन को बुलाय लेउं ॥ २ ॥ गोसाईं जी कहत हैं कि भनित भली रूपी भामिनी के उर में सो मणि का हार पहिराय के फुलावों अर्थात् आनंदित करों। हे रघुवर तेरे सुन्दर चरित्र को तेहि भनित रूपी भामिनी के संग मिलि गाइकै चरण में चित्त लगावों ॥ ३ ॥ १८ ॥

सोइए लाल लाडिलेरघुराई । मगनमोद लिए मोद-ऋमिवा वारवार वलिजाई ॥१॥ हँसे हँसत अनरसे अनरसत प्रतिबिंबनि ज्यौं भाई । तुम्ह सब के जीवन के जीवन सकल सुमंगलदाई ॥ २ ॥ मूलमूल सुरवीथि वेलि तमतोम सुदल अधिकाई । नपत सुमन नभ विटप बोंडि मानो छपा छिटकि छविछाई ॥ ३ ॥ हौ जभांत अलसात तात तेरी बानि जानि मै पाई । गाइ गाइ हलराइ बोलिहौं सुपनीदरी सुहाई ॥४॥ बाछरू छबीले छौना छगन मगन मेरे कहति मल्हाइ मल्हाई । सानुजहिय हुलसति तुलसी के प्रभु कि ललित लरिकाई ।५।१९

हंसिबे ते हंसत हैं औ उदास होवे ते उदास होत है बिंबनि प्रति जैसे परिछाहीं। तुम सब के जीवन के जीवन औ सब सुमंगल देनिहार हौ ॥ २ ॥ मूल मूल नक्षत्र है सुरवीथी लता है औ तमसमूह सुंदर दलों की अधिकाई हैं औ नक्षत्र कहैं तारागण फूल हैं सो आकाश रूप वृक्ष पर छिटकि औ बोंड़ि कहैं फैलि कै मानो रीति छवि छाई है। मूल लिखिवे को यह भाव कि जइ में एक मुसरा रहत है तामें महीन महीन बहुत सोर रहत है। मूल नक्षत्र के ग्यारह तारे हैं तेहि में से एक मुसरा के स्थान है औ दस महीन महीन सोरों के हैं ॥ ३ ॥ हे तात अलसात जम्हात हौ, तुम्हारी बान हम जान पाई, भाव जब अस करत हौ तब सोभत हौ हाथ पैर हिलाय गाय गाय सुखनिंदिया को बोलैंहौं ॥ ४ ॥ मल्हाई मल्हाई रगिआय रगिआय ॥ ५ ॥ १९ ॥

ललनलोने लैरुआ वनि मैआ । सुप सोइअै नीदवेरिआ भइ चारु चरित चाख्यौ भइआ ॥ १ ॥ काहति मल्हाइ लाइ उर छनछन छगन छबीले छोटे छैया । मोदकंद कुलकुमुदचंद मेरे रामचंद्र रघुरैआ ॥ २ ॥ रघुवरबाल केलि संतन की सुभग सुभद सुरगैआ । तुलसी दुहि पीवत सुपजीवत पयसुपेमघनोधैया ॥ ३ ॥ २० ॥

लेरुआ घछरा चारु चरित सुंदर हैं चरित्र जेहि के ॥ १ ॥ छैया बालक मोद कंद आनंद के मूल औ कुल रूप कुमुद के चंद्रमा ॥ २ ॥ रघुवर की बालकेलि संतन की सुंदर शुभ देनिहारी कामधेनु है। तेहि कामधेनु ते सुंदर प्रेम रूप दूध जामे घना घीव है ताको तुलसी दुहि कै पीवत है ताते सुखयुत जीवत है ॥ ३ ॥ २० ॥

सुपनीद कहति आलि आइहौं। रामलषन रिपुदमन भरत सिसु करि सबसुमुष सोआइहौं ॥ १ ॥ रोवनि धोवनि अनषानि अनरसनि डीठि मूठि निठुर नसाइहौं। हंसनि षेलनि किलकानि आनंदनि भूपतिभवन बसाइहौं ॥२॥ गोद बिनोद मोदमय मूरति हरषि हरषि हलराइहौं। तनु तिल तिलकरि वारि राम पर लैहौं रोगबलाइ हौं ॥ ३॥ रानी राउ सहित सुत परिजन निरषि नयनफल पाइहौं। चारु चरित रघुबंसतिलक के तहं तुलसिहि मिलि गाइहौं ॥ ४ ॥२१॥

अब माता फुसिलावति हैं कि सुखनींद कहति है कि हे आली मैं आइ हौं, सुमुख प्रसन्न ॥ १ ॥ रोआनि धोआनि रूढि है रोइवे के अर्थ में अनखानि खनमनानि, अनरसनि उदासीनता, दीठि नजर, मूठि टोना ताको निठुरता ते नसाओंगी। भाव दया न करोंगी वा ए सब जो निठुर तिन्ह को नसाओंगी भूपति भवन बसाइवे को यह भाव कि जब बालक सुखपूर्वक सोअत है तब उठे पर आनंदपूर्वक खेलत है ॥ २ ॥ क्रीड़ा औ आनंदमय मूरति को गोद में लै कै हरखि हरखि के हलराओंगी तन को तिल तिल करि कै श्री राम पर नेवछावरि करि रोग बलाय हम लै हौं ॥ ३ ॥ रानी राजा को पुत्र परिवार समेत देखि कै नैननि को फल पाओंगी सुंदर चरित रघुवंशतिलक के तहां तुलसी के संग मिलि गाओंगी ॥ ४ ॥ २१ ॥

राग असावरी—कनक रतनमय पालनो रच्यो मनहुं मारसुतहार। बिबिध षेलौना किंकिनी लागे मंजुल मुकाहार।

रघुकुल मंडन रामलला ॥ १ ॥ जननी उबटि अन्हवाइकै मनिभूषन सजि लिये गोद । पौढाये पटुपालने सिसु निरषि मगन मनमोद ॥ दसरथनंदन रामलला ॥ २ ॥ मदनमोर की चंद्रिका झलकनि निदरति तनजोति । नील कमल मनि जलद की उपमा कहै लघमति होति ॥ मातु सुकृतफल रामलला ॥ ३ ॥ लघु लघु लोहित ललित है पद पानि अधर एकरंग । को कवि जो छवि कहि सकै नषसिष सुन्दर सब अंग ॥ परिजनरंजन रामलला ॥ ४ ॥ पगनूपुर कटि किंकिनी करकंजन पहुंची मंजु । हिय हरिनष अद्भुत बन्यो मानो मनसिज मनिगनगंजु । पुरजनसुरमनि रामलला ॥५॥ लोचन नीलसरोज से भूपर मसिबिंदु बिराज । जनु बिधुमुषछवि अमिय को रच्छक राख्यो रसराज ॥ सोभासागर रामलला ॥ ६ ॥ गभुआरी अलकावली लसै लटकन ललित ललाट । जनु उड़गन बिधु मिलन को चले तम बिदारि करि बाट ॥ सहजसुहायन रामलला ॥७॥ देषि षेलवना किलकहिं पद पानि बिलोचन लोल । बिचित्र बिहंग अलि जलज ज्यों सुषमासर करत कलोल ॥ भक्तकल्पतरु रामलला ॥८॥ बाल बोलि बिनु अरथ के सुनि देत पदारथ चारि । जनु इन बचनन्हि ते भये सुरतरु तापस त्रिपुरारि ॥ नाम कामधुक रामलला ॥ ९ ॥ सषी सुमित्रा वारहीं मनिभूषन बसन बिभाग । मधुर झुलाइ मल्हावई गावै उमगि उमगि अनुराग । हैं जग मंगल रामलला ॥ १० ॥ मोती जायो सीप में अरु अदिति जन्यो जग भानु । रघुपति जायो कौसिला गुन मंगल रूप निधानु । भुवनबिभूषन रामलला ॥११॥ राम

प्रगट भए तें भये गये मयाक अमंगल मूल। सोत सुमित्र हिये उदित हैं नित बैरिनि के उर सूल॥ भवभयभंजन रामलला॥१२॥ अनुज भया सिसु संग लै खेलन जैहैं चौगान। लंका परभर परैगो सुरपुर बाजिहैं निसान॥ रिपु गनगंजन रामलला॥१३॥ राम अहेरे चलैंगे जब गज र बाजि संवारि। दसकंधर उर धकधकी जनि धावै धर धारि॥ अरि करि केहरि रामलला॥१४॥ गीत सुमित्रा सखिन के सुनि मुनि सुर मुनि अनुकूल। दै असीस जै जै कहि हरषैं बरषैं फूल॥ सुर सुखदायक रामलला॥१५॥ बालचरित मय चंद्रमा यह सोरह कला निधान। चित चकोर तुलसी कियो करै प्रेम अमिय रसपान॥ तुलसी को जीवन रामलला॥ १६॥ २२॥

श्री सुमित्रा जू औ सखिन की उक्ति है। रघुकुलमंडन रामलला जे हैं तिन्ह को मानो काम रूप बढ़ई कनक रतन में पालना रचत भये। तामें बहुत रंग के खेलवना औ घुंघुरू औ सुंदर मोतिन की माला लगे हैं॥ १॥ दसरथनंदन रामलला को माता ने उबटि अन्हवाइ के मणिन के गहना सजि के गोद लिये फेर सुंदर पालना में पौढ़ाए। बालक को देखि के मन आनंद में मगन भयो॥ २॥ मातुसुकृतफल रामलला के तन की जोति काम के मोर की वा काम रूप मोर की चंद्रिका के झलकनि को निरादर करति है। नील कमल औ नील मणि औ नील मेघ की उपमा कहे तुच्छ मति होति है॥ ३॥ परिजनरंजन रामलला के छोटे२ पद हाथ ओठ एक रंग सुंदर लाल हैं। नख सिख सुंदर सब अंग की जो छवि सो कवन कवि कहि सकै॥ ४॥ परिजन के चिंतामणि रूप रामलला के पग में घुंघुरू कमर में किंकिनी औ हस्त कमलन में सुंदर पहुंची औ हृदय में बघनहा आश्चर्य बना है मानो ए सब भूषण काम के मणि समूहों को निरादर करनिहारे हैं॥५॥ सोभा-

सागर रामलला के नेत्र नील कमल सम हैं औ भौंह पर काजर को बिंदु सोभत है सो मानो काजर को बिंदु नहीं है शृंगार रस है ताको मुख चंद्र के छवि रूप अमृत को रक्षक राख्यो है ॥ ६ ॥ सहज सोहावन रामलला के गभुवारी अलकावली औ सुंदर लटकन ललाट पर लसत है मानो चंद्रमा के मिलन को तारागन तम बिदारि राह करि चले । इहां लटकन उडगन हैं मुख शशी है तम अलकावली है दूनो तरफ बाल अलगाए ते जो लकीर है गई है सो राह है ॥ ७ ॥ भक्तकल्पतरु राम लला जो हैं सो खेलवना देखि कै किलकत हैं पग हाथ नेत्र चंचल हैं मानो विचित्र पक्षी भ्रमर औ कमल परम सोभा रूप सर में कलोल करत हैं इहां विचित्र विहंग बालकन के पग में महावराद से चिरई लिखी जाति है सो है नेत्र भ्रमर कर कमल हैं ज्यौं का मानो अर्थ किया है सो भी होत है । कुवलयानंदे "मन्ये शंके ध्रुवंप्रायोनूनमित्येवमादिभिः । उत्प्रेक्षा व्यज्यते शब्दैरिवशब्दोऽपितादृशः ॥" ज्यौंइवपर्याय है ॥८॥ नाम कामधेनु है जेहि के तेहि रामलला के बिनु अर्थ के बालबचन जो सो सुने से चारो पदार्थ देत हैं भाव आप तो बे अर्थ को है औ सब अर्थ देत है वा बाल बोल बिनु अर्थ को जो है ताको सुनि कै सुनैया चारो फल देइबे को समर्थ होत है मानो इन बचनन ते भए हैं कल्पवृक्ष औ तपस्वी औ शिव जी भाव देखिबे में बेअर्थ के एऊ हैं पर सब अर्थ देत हैं सो क्यों न होहिं कारण को गुन कार्य में रहतही है ॥ ९ ॥ जगमंगल जो रामलला हैं तिन को सखी औ सुमित्रा जू मणिभूषण बसन पृथक २ नेवछावर करत हैं धीरे २ झुलाय अनुराग ते उमगि २ रंगिभाए गावत हैं ॥ १० ॥ मोती सीप में जन्म्यो औ जगत में अदिति ने भानु को जन्मायो औ गुन मंगल मोद के पात्र रघुकुल के पति औ भुवन के विशेष भूषण करनेवाले रामलला को कौशल्या जू उत्पन्न किये ॥११॥ श्री राम प्रगट जब ते भए तब ते सब अमंगल के मूल गए मित्र आनंदित औ हित कहि नातेदार उदय के प्राप्त भए हैं और बैरिन के उर में नित ही शूल है सो क्यों न होय भव भय के भंजनिहार रामलला हैं ॥ १२ ॥ रिपुगनगंजन रामलला जो हैं सो अनुज सखा सिसु संग लै के जब चौगान खेलन जैहैं जद्यपि जेहि इंडा से गेंदा खेला

जात है ताको चौगान कहत हैं पर इस खेल का भी नाम चौगान है, लंका में खरभर औ सुरपुर में नगारा बाजिबे को यह भाव कि बाल काल में इतनी फुरती है तो आगे क्या जानै कैसी होयगी ॥१३॥ जब श्रीराम हाथी रथ घोड़ा संवारि सिकार को चलैंगे तब दसकंधर के उर में धकधकी होयगी कि अब इहां भी धनुधारन करि के जनि दौड़ें सो क्यों न होय, अरि रूपी हाथी के सिंह रामलला हैं ॥१४॥ सुमित्रा औ सखिन के गीत अनुकूल सुर मुनि सुनि के असीस देइ जय जय कहत हर्षत हैं औ फूल बर्षत हैं सो क्यों न सुखी होंहिं सुरन के सुख-दायक रामलला हैं। अनुकूल गीत को यह भाव कि जस चाहत रहे तस गीतो में सुनत हैं ॥१५॥ तुलसीजीवन रामलला जो हैं सो यह षोड़श-कलानिधान बालचरितमय चंद्रमा है या तुलसी के जीवन जे रामलला हैं तिन के षोड़शकलानिधान बालचरित्रमय जो यह चंद्रमा है ताको तुलसी अपने चित्त को चकोर कियो सो प्रेम रूपी जो अमृत रस ताको पान करत है। चंद्रमा के षोड़स कला अमृतादि है तेहि के अनु-सार रघुकुलमंडनादि षोड़श विशेषण किए। चंद्रकला यथा—"अमृतामा-नदातुष्टिपुष्टिप्रीतिरतिंतथा । लज्जांश्रियंस्वधांरात्रिंज्योत्स्नांहंसवतींततः॥ छायांचपूर्णींवामामममांचद्रकलाइमाः । स्वबीजाद्यानमेताश्च क्रमात्संपूज-येत्सुधीः ॥१॥" शारदातिलकादि तंत्र में शंखस्थापनप्रकरण में प्रसिद्ध है। रघुकुलमंडन रामलला को अमृत कला कहिबे को यह भाव कि वंश बिना मृतक सरीर सम जो रघुकुल भया रहा ताको जिआय लिए। दसरथ-नंदन को मानदा कला कहिबे को यह भाव कि जो जगत के कारण सो पुत्र भए एहि ते अधिक बचन सन्मान देहिंगे। महिमा अवधि राम पितु माता। औ। विधि हरिहर सुरपति दिसिनाथा। बरनहिं सब दसरथ गुनगाथा॥ मातुसुकृतफल रामलला को तुष्टिकला कहिबे भाव कि अपने सुकृत को फल पाए तोष होत है सो सुकृत फल को पाय संतुष्ट भईं। "आनंद अवनिराजरवनी सब मागहुं नी"। परिजन रंजन को पुष्टिकला कहिबे को यह भाव कि के जन को पोषण करि रंजित किए। कछुक काल बीते सब बड़े भए परिजन सुखदाई। पुरजन सुरमणि रामलला को प्रीति-

कला कहिवे को यह भाव कि प्रीति तें चिंतामणि सम सब कों मनोवांछित फल देत हैं। प्रगवों पुर नर नारि बहोरी। ममता जिन पर प्रभुहि न थोरी॥ सोभासागर को रति अर्थात् रमणोद्दीपनकारिणी कला कहिवे को यह भाव कि बालस्वरूपों में सखी देखि कै ठगि गई। अवलोकि हौं शोचविमोचन कों ठगि सी रही जो न ठगे धिग से। सहज सोहावन रामलला को लज्जा अर्थात् लज्जादायिनी कला कहिवे को यह भाव कि जेतने सोहावने रहें सब लजाय गए। भुजनि भुजग सरोज नयनानि बदन विधु जित्यौ लरनि॥ औ॥ लाजहिं तन शोभा निरषि, कोटि कोटि शत काम। भक्त कल्पतरु को श्री कला कहिबे को यह भाव कि भक्तन को सब प्रकार की श्री देत हैं। राम सदा सेवक रुचि राखी॥ औ॥ राखत भले भाव भक्तन को कछुक रीति पारथहिं जनाई। नाम कामधेनु है जाको तेहि रामलला को स्वधा पितृगणतृप्तिजनिका कला कहिवे को यह भाव कि संतान के नाम की बड़ाई सुनि के पितर लोग तृप्ति होत हैं। रामरूप गुन शील सुभाऊ। प्रमुदित होंहि देषि सुनि राऊ॥ जगमंगल रामलला को रात्रिकला अर्थात् विश्रामदायिनी कहिवे को यह भाव कि रात्रिउ विश्राम देतु है औ एऊ हैं। सो सुषधाम राम अस नामा। अषिललोक दायक बिश्रामा॥ भुवनविभूपन रामलला को ज्योत्स्ना कला कहिवे को यह भाव कि भुवन को विभूपन ज्योत्स्ना कला है एऊ हैं। सहज प्रकास रुप भगवाना। औ। पुरुष प्रसिद्ध प्रकाश निधि। भवभयभंजन रामलला को हंस कहिए सूर्य सो रहैं जेहि में सो हंसवति कला ताको कहिवे को यह भाव कि सूर्य तमनाशक हैं औ एऊ अज्ञानतमनाशक हैं वा हंस जो सूर्य ताको कला चंद्रमा में रहत औ एऊ सूर्यवंशी हैं॥ राम कस न तुम्ह कहहु अस, हंसवंश अवतंस। रिपुगनगंजन रामलला को छायाकला कहिवे को यह भाव कि छाया ताप हरत औ एऊ रिपुगण के मारि भक्तन को ताप हरत। शीतल सुपद छाह जेहि कर की मेटत पाप ताप माया। अरिकरि केहरि राम लला को पूरणी कला कहिवे को यह भाव कि रावणादि शत्रुन को मारि जगत् के सुख ते परि पूर्ण किए। जय रघुनाथ

समर रिपु जीते । सुर नर मुनि सब के भय बीते ॥ सुरसुखदायक रामलला को थामा कहैं सुंदरी कला कहिबे को यह भाव कि चंद्रमा की सुंदरी कला सुखदायक है एऊ देवतन के सुखदायक है । तुलसी को जीवन राम लला को अमा अर्थात् परिमाणरहित कला कहिबे को या भाव कि परिमाण रहित कला जीवनदाती औ एऊ जीवनदाता ॥ मान मान के जीव के जिव सुप के सुप राम । चंद्रमा की चौदहकला प्रगट है अमावस परिवा की दुइ कला गुप्त है तेहि ते गोसाईं जी चौदह तुक से बाललीला प्रगट राखे दुइ तुक में गुप्त किए अर्थात् पहिले औ अंत में ॥ १६ ॥ २२ ॥

राग कान्हरा—पालने रघुपतिहि झुलावै । लैलै नाम सप्रेम सरस स्वर कौसल्या कल कीरति गावै ॥१॥ केकिकंठ दुति स्यामबरन बपु बाल बिभूषन बिरचि बनाए । अलकैं कुटिल ललित लटकन भ्रू नीलनलिन दोउ नयन सुहाए ॥२॥ सिसु सुभाय सोहत जब कर गहि बदन निकट पदपल्लव ल्याए । मनहुं सुभग जुग भुजग जलज भरि लेत सुधा ससि सौं सचु पाए ॥ ३ ॥ उपर अनूप बिलोकि खिलौना किलकत पुनि २ पानि पसारत । मनहु उभय अंभोज अरुन सो बिधु भय बिनय करत अति आरत ॥४॥ तुलसिदास बहु बास बिबस अलि गुंजत सो छबि नहिं जात बखानी । मनहु सकल स्रुति ऋचा मधुप ह्वैबिसद सुजस बरनत बरबानी ॥५॥२३॥

पालना में रघुपति को झुलावति हैं, कौशल्याजू प्रेम सहित मधुरस्वर से नाम ले लै के अर्थात् यथा मैना तोता छगन मगन आदि कहि कहि के सुंदर कीर्ति गावति हैं ॥ १ ॥ मोर के कंठ की द्युति समान श्याम बरन शरीर है तामें बाल समय के विभूषण विशेष रचि कै बनाये गए हैं टेढ़े अलक हैं भौंह पर सुंदर लटकन हैं औ नील कमल सम सुंदर दोऊ नयन हैं । "अलकाश्चूर्णकुंतला अलकः" टेढ़े बार को अलक कहत हैं ॥२

बाल सुभाव ते जब कर तें गहि कै मुख के निकट पल्लव इव अर्थात् पल्लवसमकोमल औ लाल पद को ले आवत भए तब अस सोहत मनो सुंदर दुइ सर्प सचुपाय कई आनंदित चंद्रमा से कमल से भरि के सुधा लेत हैं इहां दोऊ हाथ सर्प हैं, पद कमल है, मुख चंद्रमा है, छवि सुधा है ॥ ३ ॥ ऊपर उपमा रहित खेलौना देखि कै किलकारी मारत औ पुनि पुनि हाथ पसारत हैं मानो दुइ कमल चंद्रमा के भय से अति आर्त सूर्य से विनय करत हैं। इहां खेलौना सूर्य हैं लाल रंग से औ हाथ दोऊ कमल है औ पुनि पुनि पसारना आर्तता है ॥ ४ ॥ गोसाईं जी कहत हैं कि बहु सुगंध ते विबस जो भ्रमर गुंजत है सो छवि बखानी नहीं जाति है मानों सकल वेदन की ऋचा भ्रमर है कै श्रेष्ठ बानी ते उज्ज्वल सुयश रघुनाथ को बरनत हैं ॥ ४ ॥ २३ ॥

झूलत राम पालने सोहैं भूरि भाग जननी जन जोहैं। अधर पानि पद लोहित लोने सर सिंगार भव सारस सोने ॥२॥ किलकत निरखि बिलोल खिलौना मनहुं बिनोद लरत छवि छौना ॥ ४ ॥ रंजितअंजन कंजविलोचन भ्राजत भाल तिलक गोरोचन ॥ ५ ॥ लसै मसिबिंदु वदन विधु नीको चितवत चित चकोर तुलसी को ॥ ६॥२४ ॥

जोहैं देखत हैं ॥ १ ॥ तन कोमल के सुन्दर श्यामता में बाल समय के विभूषणन की परिछाही झलकति है ॥ २ ॥ ओठ हाथ पद सुंदर लाल हैं मानो शृंगार रूप तडाग में लाल रंग के कमलैं उत्पन्न भए हैं इहां लुप्तोत्प्रेक्षा है इहां सर शृंगार से श्याम शरीर लेना काहे ते कि शृंगार रस भी श्याम है ॥३॥ खेलौना देखि चंचल है किलकत हैं मानो खेलवार में छवि के बालक लरत हैं। इहां हाथ पर हाथ पांव पर पांव का फेकना सो लरना हैं कमलवत् नेत्र जो अंजन से रंजित हैं औ भाल में गोरोचन के तिलक शोभत है ।।५।। सुंदर विधु वदन में डिठौना लसत है तेहि मुखचंद्र को चित रूप चकोर तुलसी को चितवत ॥६॥२४॥

रागकल्यान—राजत सिसुरूप राम सकलगुननिकाय

धाम कौतुकी कृपाल ब्रह्म जानु पानिचारी। नीलकंज जलद पुंज मरकतमनि सदृश स्याम कामकोटि सोभा अंग अंग ऊपर वारी ॥ १ ॥ हाटक मनि रत्नखचित रचित इन्द्र मंदिराभ इंदिरानिवास सदन विधि रच्यो सँवारी। विहरत नृपअजिर अनुजसहित बालकेलिकुसल नील जलजलोचन हरि मोचन भय भारी ॥ २ ॥ अरुन चरन अंकुस ध्वज कंज कुलिस चिन्ह रुचिर भ्राजत अति नूपुर वर मधुर मुखर कारी। किंकिनी विचित्र जाल कंबु कंठ ललित माल उर विसाल केहरिनखकंकन कर धारी ॥ ३ ॥ चारु चिबुक नासिका कपोल भालतिलक भृकुटि श्रवन अधर सुंदर द्विज छबि अनूप न्यारी। मनहु अरुन कंजकोस मंजुल जुग पांति प्रसव कुंदकली जुगल जुगल परम शुभ्र वारी ॥४॥ चिक्कन चिकुरावली मनो षडंघ्रिमंडली बनी बिसेषि गुंजत जनु बालक किलकारी। एकटक प्रतिबिंब निरषि पुलकत हरि हरषि हरषि लै उछंग जननी रसभंग मन विचारी ॥५॥ जाकहं सनकादि संभु नारदादि शुक मुनिंद्र करत विविधि जोग काम क्रोध लोभ जारी। दसरथ गृह सोइ उदार भंजन संसार भार लीलाअवतार तुलसिदासत्रास हारी ॥ ६॥२५ ॥

सकल गुणसमूह के धाम कृपाल ब्रह्म कौतुकी शिशुरूप राम बकैंइँआं है शोभत है। रूप पद से यह जनाए कि रूप मात्र से शिशु। सकल गुणनिधान से वात्सल्यादि सकल गुण संपन्न जनाए। अर्थात् केवल निर्गुण नहीं, कौतुकी ते स्वतंत्र जनाए। कृपाल ते यह जनाए कि हैं तो ब्रह्म पै लोगन के सुख देने हेतु घुटुरुअन तें चलत हैं, नील कंज जलद पुंज मरकत मणि सदृश स्याम, इहां तीन उपमा दिए ताते मालोपमा अलंकार है वा कमलवत् कोमल औ मेघवत् गंभीर मरकतवत्

औ स्यामता नीलनिहू को, अपर सुगम ॥ १ ॥ जेहि नृप को सदन सुवर्ण मणि रत्न से जटित औ रचित इंद्र मंदिर के सदृश लक्ष्मी को वासस्थान विधाता ने संवारि के रच्यो तेहि नृप के आंगन में अनुज सहित हरि विहरत हैं सो कैसे हैं बालकेलि में कुशल हैं औ नीलकमल सम लोचन हैं जिन को औ भारी भय के नाशनिहारे हैं, मणि रत्न को भेद मणि नागादि ते होत है औ रत्न पर्वत ते, वह रत्न शब्द श्रेष्ठ वाचक है "रत्नं स्वजातिश्रेष्ठेऽपि इत्यमरः" अर्थात् श्रेष्ठ मणि ॥२॥ लाल चरण हैं तामें अंकुश ध्वज कमल वज्र के सुंदर चिन्ह हैं औ मधुर शब्द करनिहारा श्रेष्ठ नूपुर अतिही शोभत हैं औ कटि में विचित्र किंकिनिन को जाल कहे समूह औ शंखवत्कंठ वा "रेखात्रयान्विता ग्रीवा कंबुग्रीवेति कथ्यते"। औ विशाल उर है तामें सुंदर माला औ बघनहा है हाथ में कंकन धारण किए हैं ॥ ३ ॥ ठोढ़ी नासिका कपोल भालतिलक भौंह कान औ ओष्ठ सुंदर हैं औ सुंदर उपमा रहित दांतन की छबि न्यारी है मानो लाल कमल के कोश में सुंदर दुइ पांति की मसव कहें उत्पत्ति है तिन्ह में परम शुभ्र वारी कहें छोटी कुंदकली दुइ दुइ हैं। इहां लाल कमल के कोश मुख है तामें ऊपर नीचे के दंतस्थान अर्थात् डाढ़ ते युग पांति हैं ता में छोटी छोटी दुइ दुइ जो दंतुली तेई कुंदकली हैं ॥४॥ चिक्कन जे बालन की पांति हैं ते मानो विशेष बनी भई भंवरन की मंडली है औ जो बालक की किलकारी है सोई मानो तिन का शब्द है एक टक ते प्रतिबिंब को देखि हरषि हरषि कै पुलकत जो हरि तिन को माता रसभंग जिय में विचारि कै गोद में लै लिए भाव अबहीं तो हरषत हैं अस न होय कि डरि उठैं वा हरि तो हरषि हरषि पुलकत हैं पर माता ने डर ते पुलकना विचारा ताते उठाय लिए ॥ ५ ॥ लीला अवतार लीला के हेतु अवतार है जेहि को ॥ ६ ॥ २५ ॥

राग कान्हरा—आंगन फिरत घुटुरुवनि धाए। नील-जलद तनु स्याम राम सिसु जननि निरखि मुख निकट बुलाए ॥१॥ बंधुक सुमन अरुन पद पंकज अंकुश प्रमुख चिन्ह बनि आए। नूपुर जनु मुनिवर कलहंसनि रचे नीड़ दै बांह-

बसाए ॥२॥ कटि मेखल वर हार ग्रीव दर रुचिर बाहु भूषन पहिराए। उर श्रीवत्स मनोहर हरिनख हेम मध्य मनिगन बहु लाए ॥३॥ सुभग चिबुक द्विज अधर नासिका श्रवन कपोल मोहि अति भाए। भ्रू सुंदर करुनारसपूरन लोचन मनहुं जुगल जलजाए ॥४॥ भाल बिसाल ललित लटकन वर बाल दसा के चिकुर सोहाए। मनो दोउ गुरु सनि कुज आगे करि ससिहि मिलन तम के गन आए ॥५॥ उपमा एक अभूत भई तब जब जननी पट पीत ओढ़ाए। नील जलद पर उडगन निरखत तजि सुभाव मानो तड़ित छपाए ॥६॥ अंग अंग पर मारनिकर मिलि छबिसमूह लै लै जनु छाए। तुलसिदास रघुनाथरूप गुन तौ कहौं जौ बिधि होहि बनाए ॥ ७॥२६ ॥

घुटुरुवनि बकैयां ॥१॥ दुपहरिआ के फूल सम लालचरन हैं तामें कमल अंकुश आदि चिन्ह बने हैं औ नूपुर हैं मानों रघुबर ने नूपुर रूप खोता रचे तेहि में मुनिवर रूप कलहंसनि कों बांह दै बसाए। भाव इहां कोई भय नहीं होयगो इहां बसना ध्यान करना है अंकुशादि चिन्ह यथा महारामायणे। रेखोर्द्धावर्त्तते मध्ये दक्षिणस्यांघ्रिपंकजे॥ पादादौ स्वस्तिकंज्ञेयमष्टकोणस्तथैवच ॥१॥ श्रियंहलंचमुशलंसर्पोबाणांबरेत्तथा। पद्ममष्टदलंचैवस्यंदनंवज्रमुच्यते ॥२॥ यवोंगुष्ठे तथाप्येतारेखोर्द्धावामतःस्थिताः। रेखोर्द्धादक्षिणेचैवस्वस्तिकाधोब्जपादपः ॥ ३ ॥ अंकुशंचध्वजंचैवमुकुटंचक्रमेवच। सिंहासनंमृत्युदंडंचामरंछत्रमुद्यतं ॥ ४ ॥ नृचिन्हंयवमालेपेचतुर्विंशतिलक्षणाः। क्रमेणैवमवर्तन्तेश्रीरामस्यांघ्रिदक्षिणे ५ ऊर्द्धरेखायथासव्येऽपसव्येसरयूतथागोष्पदंपादमूलेचतदधःसागरांबरा ॥६॥ कुंभंचैवपताकांचजम्बूफलमथोद्यतं। अर्द्धचंद्रोदरश्चैवषट्कोणंचात्रिकोणकं ॥७॥ गदातथाचजीवात्माबिंदुरंगुष्ठमध्यगः। सरय्वादक्षिणेकोणेलक्षणंशेषमुत्तमं ॥ ८ ॥ गोपदाधस्तथाशक्तिःसुधाकुंडमथोद्यतं। त्रिवलीकामपत्रं-

च पूर्णः सिंधुसुतस्तथा ॥९॥ वीणा वंसी धनुस्तूणोमरालश्चार्द्धकेति च। चतुर्विंशतिरामस्य चरणेवामके स्थिता ॥१०॥ चतुर्विंशतिरामस्येति छान्दसोदीर्घाभावः स्थितेति स्थितानीत्यर्थः। सुपांसुलुगितिसुपोडादेशः परमेव्योमन्सर्वाभूतानीत्यादिवत्। तानि सर्वाणि रामस्य पादे तिष्ठंति वामके। यानि चिन्हानि जानक्यादक्षिणे चरणे स्थिता ॥११॥ यानि चिन्हानि रामस्य चरणे दक्षिणे स्थिता। तानि सर्वाणि जानक्याः पादे तिष्ठंति वामके ॥१२॥ ऊर्द्धरेखारुणा ज्ञेया स्वस्तिकंपीतमुच्यते। सितारुणंचाष्टकोणंश्रीश्च बालार्कसन्निभा ॥ १३ ॥ हलंच मुशलंचैव श्वेतधूम्रमितिस्मृतं। सर्पोऽसितस्तथा बाणः श्वेतपीतारुणोहरित् ॥ १४ ॥ नभोवदंबरं ज्ञेयमरुणं पंकजंस्मृ। रथंविचित्रवर्णंच युक्तं वेदहयैः सितैः ॥ १५ ॥ वज्रंतडिन्निभंज्ञेयं स्वेतरक्तं तथायवं। कल्पवृक्षं हरिद्वर्णमंकुशं श्यामसुच्यते ॥ १६ ॥ लोहिता च ध्वजा तस्यां चित्रवर्णाभिधीयते। सुवर्णं मुकुटं चक्रंरत्नसिंहासनाभकं ॥ १७ ॥ कांस्यवद्यमदंडं स्याचामरं धवलंमहत्। छत्रंचिन्हं शिवंशुक्लं नृचिन्हं सितलोहितम् ॥ १८ ॥ बाणवच्चेच माला च वामे च सरयू सिता। गोष्पदश्च सितारक्तः पीतरक्तसिता मही ॥ १९ ॥ स्वर्णवर्णोऽसितं किंचित्कुंभोऽप्येवं प्रवर्तते। चित्रवर्णा पताकाच श्यामंजंबूफलंतथा ॥ २० ॥ धवलश्चार्द्धचंद्रोऽतिरक्तर्दपत्रासितोदरः। षट्कोणंच महास्वच्छं त्रिकोणोऽरुणएवच ॥२१॥ श्यामला तु गदा ज्ञेया जीवात्मा दीप्तिरूपकः। विंदुःपीतःतथा शक्तीरक्तस्यामसितापिच ॥ २२ ॥ सितरक्तं सुधाकुण्डंत्रिवलीच त्रिवेणीव। वर्तते रौप्यवन्मीनोधवलःपूर्णसिंधुजः ॥ २३ ॥ पीतरक्तसिता वीणा वेणुश्चित्रविचित्रकः। हरित्पीतोरुणश्चैव त्रिविधंधनुरुच्यते ॥ २४ ॥ वेणुवद्वर्तते तूणोहंसईषत्सितारुण। सितपीतारुणा ज्योत्स्ना सर्वतोरंगमद्भुतं ॥ २५॥२। कटि में किंकिनी पंचु कंठ में सुंदर हार औ सुंदर बाहु में भूषण पहिराए हैं उर में मनोहर श्रीवत्स औ बहु मणिगणयुक्त सुवर्न के मध्य में जो हारिनरा सो उर में है "पीतं मदक्षिणावर्तं विचित्रंरंगमराजितं। विष्णोर्वक्षसियद्रोम श्रीवत्सेंतन्मकीर्तितम्" ॥३॥ करुणा रस पूर्न जो लोचन हैं सो मानो दुइ कमल हैं॥४॥ सुंदर विशाल भाल है तामें सुंदर ल्टकन औ बाल दशा के सुंदर बार हैं मानो दोऊ गुरु अर्थात् बृहस्पति शुक्र औ सनैश्चर मंगल आगे बारि

बसाए ॥२॥ कटि मेषल बर हार ग्रीव दर रुचिर बाहु भूषन पहिराए। उर श्रीवत्स मनोहर हरिनष हेम मध्य मनिगन बहु लाए ॥३॥ सुभग चिबुक द्विज अधर नासिका श्रवन कपोल मोहि अति भाए। भ्रू सुंदर करुनारसपूरन लोचन मनहुं जुगल जलजाए ॥४॥ भाल बिसाल ललित लटकन बर बाल दसा के चिकुर सोहाए। मनो दोउ गुरु सनि कुज आगे करि ससिहि मिलन तम के गन आए ॥५॥ उपमा एक अभूत भई तब जब जननी पट पीत वोढाए। नील जलद पर उडगन निरषत तजि सुभाव मानो तड़ित छपाए ॥६॥ अंग अंग पर मारनिकर मिलि छबिसमूह ले ले जनु छाए। तुलसिदास रघुनाथरूप गुन तौ कहौ जौ बिधि होहि बनाए ॥ ७॥२६ ॥

घुटुरुवनि वकैयां ॥१॥ दुपहरिआ के फूल सम लालचरन है तामें कमल अंकुश आदि चिन्ह बने हैं औ नूपुर है मानो रघुबर ने नूपुर रूप खोता रचे तेहि में मुनिवर रूप कलहंसानि कों बांह दै बसाए। भाव इहां कोई भय नहीं होयगो इहां बसना ध्यान करना है अंकुशादि चिन्ह यथा महारामायणे। रेखोर्द्धाविर्त्तते मध्ये दक्षिणस्यांघ्रिपंकजे॥ पादादौ स्वस्तिकंज्ञेयमष्टकोणस्तथैवच ॥१॥ श्रियंहलंचमुशलंसर्पोवाणांवरेतथा। पद्ममष्टदलंचैवस्यंदनंवज्रमुच्यते ॥२॥ यर्वोगुष्ठे तथाप्येतारेखोर्द्धावामतःस्थिताः। रेखोर्द्धादक्षिणेचैवस्वस्तिकाधोब्जपादपः ॥ ३ ॥ अंकुशंचध्वजंचैवमुकुटंचक्रमेवच । सिंहासनंमृत्युदंडंचामरंछत्रमुद्यतं ॥ ४ ॥ नृचिन्हंयचमालेमेचतुर्विंशतिलक्षणाः। क्रमेणंवमवर्तन्तेश्रीरामस्यांघ्रिदक्षिणे ५ ऊर्द्धरेखायथासव्येऽपसव्येसरयूतथागोष्पदंपादमूलेचतदधःसागरांबरा ॥६॥ कुंभंचैवपताकांचजम्बूफलमथोद्यतं । अर्द्धचंद्रांदरश्चैवषट्कोणंचात्रिकोणकं ॥७॥ गदातथाचजीवात्माबिंदुरंगुष्ठमध्यगः। सरव्वादक्षिणेकोणेलक्षणंह्येतमुत्तमं ॥ ८ ॥ गोपदाधस्तथाशक्तिःसुधाकुंडमथोद्यतं । त्रिवल्लीकामपत्रं-

रघुबर की बालछबि बर्नन करि कहत हौं सो छबि कैसी है कि सब सुन्दरता की मर्यादा है औ कोटि काम की शोभा हरनिहारी है ॥ १ ॥ मानो अगनता मृग को छोड़ि कै चरण कमलन में आय बसी औ सुंदर नूपुर औ किंकिनी की रुनझुन बरनि मन हरति है ॥ २ ॥ सुंदर श्याम कोमल तनु के योग्य भूषणन की भरनि है अर्थात् भराव है मानो सुंदर शृंगार रूप बाल तरु अद्भुत फरनि से फर्यो है इहां । शृंगार रूप छोटा तरु रघुनाथ हैं औ भूषण जे शरीर में भरे हैं ते फल हैं अनुहराति कहिबे को यह भाव कि श्याम तन में जो रंग शोभा पावै । शृंगार तरु कहिबे को यह भाव कि शृंगार का रंग भी श्याम है । अद्भुत कहिबे को यह भाव कि छोटा तरु फरत नाहीं कदापि फरत भी है तो अनेक रंग का फल नहीं ॥ ३ ॥ भुजों ने सर्प को औ नैनों ने कमल को औ मुख ने चंद्रमा को समर में जीत्यो ते सब बिल, जल औ आकाश में रहे अर्थात् बिल में सर्प औ जल में कमल, आकाश में चंद्रमा रहे और अपर जेती उपमा ते डरनि से छपि रहीं भाव हमारी भी न दुर्दशा होय ॥ ४ ॥ घुटुरुअनि चलनि से मनि आंगन में हाथ को प्रतिबिंब सोहत है सो प्रतिबिंब नहीं है कमल को संपुट है तेहि में सुंदर छबि भरि भरि के मानो धरनी अपने उर में धरति है । इहां चाल प्रति जो परिछाहीं मेटात आवत है सोई उर में धरना है ॥ ५ ॥ श्री कौशल्या जू पुत्र को देखि कै अपने पुन्य फल को अनुभव कराति हैं औ तेहि समय की किलकनि औ लरखरनि प्रभु की तुलसी के हृदय में बसति है ॥ ६ ॥२७॥

नेकु बिलोकु धौ रघुबरनि । चारि फल त्रिपुरारि तोको दिये कर नृप घरनि ॥१॥ बाल भूषन बसन तनु सुंदर रुचिर रज भरनि ।परस्पर पेलनि अजिर उठि चलनि गिरि गिरि परनि ॥ २ ॥ झुकनि झांकनि छांह सों किलकनि नटनि हठि लरनि । तोतरी बोलनि बिलोकनि मोहनी मन हरनि ॥ ३ ॥ सखि बचन सुनि कौसिला लखि सुढर पासे ढरनि । लेत भरि भरि अंक सैतति पैंत जनु दुहुकरनि ॥४॥

कै चंद्रमा के मिलवे को तम के समूह आए हैं इहां पोखराज हीरा नीलम मानिक के जो चारो लटकन हैं सोई वृहस्पति शुक्र शनि मंगल हैं मुख चंद्र है बिखरे बार जे मुख पर परे हैं ते तमगन हैं आगे करि आइवे को यह भाव कि अंधकार से चंद्रमा से बैर है ताते चंद्रमा के मान्य वर्ग कों आगे करि लिये अर्थात् वृहस्पति गुरु हैं शुक्र उपकारी हैं जब गुरुपत्नी से चंद्रमा ने कुचाल किया रहा तब शुक्र सहाय किए रहे भारत में ख्यात है औ शनि ग्रहराज जे सूर्य तिन के पुत्र हैं ताते एऊ मान्य हैं औ मंगल मित्र हैं ॥ ५ ॥ जब जननी पट पीत ओढ़ाए तब एक अद्भुत उपमा भई अब सो उपमा कहत हैं कि मानो- श्याम मेघ पर तारागण को देखत माल चंचलता सुभाव छोड़ि कै बिजुरी ने छिपाय लिए अर्थात् तारागण को भाव तारागण की अयोग्यता करना देखिवे ते बिजुरी ने भी अयोग्यता किया ॥ ६ ॥ मानो अनेक काम मिलि कै छवि समूह को लैलै कै अंग अंग पर छावत भए गोसाईं जी कहत हैं कि रूप गुण रघुनाथ को तौ कहौं जौं ब्रह्मा के बनाए होंहिं वा जौं रघुनाथ ब्रह्मा के बनाए होंहिं तौ रूप गुण कहौं ॥ ७॥२६ ॥

राग केदारा । रघुवर बालछवि कहौं बरनि । सकल सुख की सीव कोटिमनोजशोभाहरनि ॥ १ ॥ बसी मानहु चरन-कमलनि अरुनता तजि तरनि । रुचिर नूपुर किंकिनी मनु हरनि रुनझुन करनि ॥२॥ मंजु मेचक मृदुल तनु अनुहरति भूषन भरनि । जनु सुभग सिंगार सिसुतरु फरयो है अद्भुत फरनि ॥३॥ भुजनि भुजग सरोज नयननि वदन विधु जित्यौ लरनि। रहैं कुहरनि सलिल नभ उपमा अपर दुरि डरनि॥४॥ लसत कर प्रतिबिंब मनि आंगन घुटुरुवनि चरनि । जलज संपुट सुछवि भरि भरि धरति जनु उर धरनि ॥५॥ पुण्यफल अनुभवति सुतहि विलोकि दसरथघरनि। बसत तुलसी हृदय प्रभु किलकनि ललित लरखरनि ॥ ६॥२७ ॥

रघुवर की बालछवि वर्नन करि कहत हौं सो छवि कैसी है कि सब सुख की मर्यादा है औ कोटि काम की शोभा हरनिहारी है ॥ १ ॥ मानो अरुनता सूर्य को छोड़ि कै चरण कमलन में आय बसी औ सुंदर नूपुर औ किंकिनी की रुनझुन करनि मन हराति है ॥ २ ॥ सुंदर श्याम कोमल तनु के योग्य भूषणन की भरनि हैं अर्थात् भराव है मानो सुंदर शृंगार रूप बाल तरु अद्भुत फरनि से फर्यो है इहां । शृंगार रूप छोटा तरु रघुनाथ हैं औ भूषण जे शरीर में भरे हैं ते फल हैं अनुहराति कहिबे को यह भाव कि श्याम तन में जो रंग शोभा पावै । शृंगार तरु कहिबे को यह भाव कि शृगार का रंग भी श्याम है । अद्भुत कहिबे को यह भाव कि छोटा तरु फरत नाहीं कदापि फरत भी है तौ अनेक रंग का फल नहीं ॥ ३ ॥ भुजों ने सर्प को औ नैनों ने कमल को औ मुख ने चंद्रमा को समर में जीत्यो तें सब बिल, जल औ आकाश में रहे अर्थात् बिल में सर्प औ जल में कमल, आकाश में चंद्रमा रहे और अपर जेती उपमा ते डरनि से छपि रहीं भाव हमारी भी न दुर्दशा होय ॥ ४ ॥ घुटुरुअनि चलनि मे मनि आंगन में हाथ को प्रतिबिंब सोहत है सो प्रतिबिंब नहीं है कमल को संपुट है तेहि में सुंदर छवि भरि भरि के मानो धरनी अपने उर में धराति है । इहां चाल प्रति जो परिछाहीं मेटात आवत है सोई उर में धरना है ॥ ५ ॥ श्री कौशल्या जू पुत्र को देखि कै अपने पुन्य फल को अनुभव कराति हैं औ तेहि समय की किल-कनि औ लरखरनि प्रभु की तुलसी के हृदय में बसति है ॥ ६ ॥२७॥

नेकु बिलोकु धौं रघुबरनि । चारि फल त्रिपुरारि तोको दिये कर नृप घरनि ॥१॥ बाल भूषन बसन तनु सुंदर रुचिर रज भरनि । परस्पर पेलनि अजिर उठि चलनि गिरि गिरि परनि ॥ २ ॥ झुकनि झांकनि छांह सों किलकनि नटनि हठि लरनि । तोतरी बोलनि बिलोकनि मोहनी मन हरनि ॥ ३ ॥ सखि बचन सुनि कौसिला लखि सुटर पासे ढरनि । लेत भरि भरि अंक सैंतति पैंत जनु दुहुं करनि ॥४॥

चरित निरषत विबुध तुलसी ओट दे जल धरनि। चहत सुर सुरपति भयो सुरपति भयो चह तरनि ॥ ५॥२८॥

कौशल्या जू को और काम में लगी देखि सखी कहति है हे नृप-घरनि चारो भैअन को नेकु देखु तौ मानो त्रिपुरारि ने चारो फल तोको हाथ पर दिए हैं इहां लुप्तोत्प्रेक्षा है ॥ १ ॥ अजिर आंगन-॥ २॥ नटनि नाचनि ॥ ३ ॥ सखी के वचन सुनि कै औ सुंदर पासे की ढरनि लखि के अर्थात् सुकृत को फल जानि कै कौशल्या जू चारो भैअन को गोदी में उठाय उठाय लेत हैं मानो उठाय नहीं लेत हैं पैत कहैं दाव ताको दोऊ हाथ से वटोरत हैं। भाव जीत के जब पासा देखत है तब खेलारी जो दांव पर द्रव्य धरा रहत है ताको दूनो हाथ से वटोरि लेत है ॥ ४ ॥ देवता इंद्र भयो चाहत है औ इन्द्र सूर्य भयो चाहत हैं। भाव देवता हजार नेत्र तें देखिवे हेतु इन्द्र भयो चाहत हैं औ इन्द्र विश्व भरि के नेत्र तें देखिवे हेतु सूर्य भयो चाहत हैं अर्थात् सूर्य सब के नेत्र में रहत हैं ॥ ५॥२८॥

रागजैतश्री—भूमितल भूप के वडे भाग। राम लषन रिपु-दमन भरत सिसु निरषत अति अनुराग ॥१॥ बाल विभूषन लसत पाइ मृदु मंजुल अंग विभाग। दसरथ सुकृत मनोहर बिरवनि रूप करह जनु लाग ॥ २ ॥ राज मराल बिराजत बिहरत जे हर हृदय तड़ाग। ते नृप अजिर जानु कर धावत धरन चटक चल काग ॥३॥ सिद्ध सिहात सराहत मुनि मन कहैं सुर किन्नर नाग। ह्वै वर बिहग बिलोकिये बालक बसि पुर उपवन बाग ॥४॥ परिजन सहित राय रानिन्ह कियो मज्जन प्रेम प्रयाग। तुलसी फल चारो ताके मनि मरकत पंकज राग ॥ ५॥२८ ॥

सुंदर कोमल अंगन के बिभाग पाइ कै बाल भूषन को बिभूषन

शोभत हैं मानों श्री दशरथ महाराज के सुकृत रूपी मनोहर बिरवानि में रूप रूपी करहा लगा। बिरवा बाल्ह तरु को कहत हैं ॥२॥ जे राज मराल हर के हृदय रूपी तडाग में विहरत विराजत ते दशरथ महाराज के आंगन में चंचल काग के धरन को थकैयां ते शीघ्र धावत हैं। इहां चंचल काग भुशुंडी जी हैं "किलकत मोहि धरन जब धावहिं। चलौं भागि तब पूप देखावहिं" या चटक गंवरा औ चंचल काग के धरन को धावत हैं ॥ ३ ॥ सिद्धि सिहात हैं, भाव अस भाग हमारो न भयो औ मुनिगन सराहत हैं, भाव कहत हैं कि महाराज सब ते धन्य हैं औ सुर किन्नर नाग कहत हैं वरु पुर के उपवन और बाग में विहंग ह्वै बसि बालकानि को विलोकिए। पुर के समीप सो उपवन दूरि सो बाग ॥४॥ परिवार सहित राजा औ रानिन्ह ने प्रेमरूपी प्रयाग में मज्जन कियो तेहि मज्जन के फल चारिउ बालक हैं। मरकत मणि औ पद्मराग मणि के सम अर्थात् नीलमणि सम श्री राम जू औ भरत जू, पंकज राग सम लक्ष्मण जू औ शत्रुघ्न जू हैं ॥ ५॥२९ ॥

राग असावरी—छगन मगन आंगन खेलत चारु चार्यो भाई। सानुज भरत लाल लखन राम लोने लोने लरिका लखि मुदित मातु समुदाई ॥१॥ बाल बसन भूषन धरे नख सिख छवि छाई। नील पीत मनसिज सरसिज मंजुल मालनि मानो हृन्द देहनि ते दुति पाई ॥ २ ॥ ठुमुकि ठुमुकि पग धरनि नटनि लरखरनि सोहाई। भुजनि मिलनि रूठनि टूठनि किलकनि अवलोकनि बोलनि बरनि न जाई ॥ ३ ॥ जननि सकल चहुं वोर आल बाल मनि अंगनाई। दसरथ सुकृत विबुध बिरवा विलसत विलोकि जनु विधि वर वारि बनाई ॥ ४ ॥ हर विरंचि हरि हेरि राम प्रेम परवसताई। सुख समाज रघुराज के बरनत विसुद्ध मन सुरनि सुमन झरिलाई ॥ ५ ॥ सुमिरत श्रीरघुबरनि की लीला लरिकाई।

तुलसिदास अनुराग अवध आनंद अनुभवत तब को सो अजहुं अघाई ॥ ६॥३० ॥

सुगम ॥ १ ॥ राम को नील पीत कमल की मालों ने मानहुं इन देहन ते द्युति पाई है ॥२॥ दृगनि प्रसन्न होनि ॥ ३ ॥ मणि का आंगन नहीं है थाला है चारों भैया नहीं हैं दशरथ सुकृत के थाल्ह कल्पवृक्ष हैं ताको विलसत देखि के ब्रह्मा ने माना रूपी अष्टवारि चारों ओर बनाई हैं वारि रूथानि ॥ ४ ॥ शिव ब्रह्मा विष्णु राम की मेघ ते परवसनाई देखि के दशरथ महाराज के सुख समाज को विशुद्ध मन ते वर्नत हैं औ देवतो ने फूलनि की झरिलाई है ॥ ५ ॥ श्री मान् चारों भैयन की लरिकाई की लीला सुमिरत मात्र तुलसीदास अनुराग रूप अवध में तब के ऐसो आनंद अजहु अघाय के अनुभव करत हैं ॥ ६ ॥ ३० ॥

राग बिलावल· आंगन खेलत आनदकंदा। रघुकुल कुमुद सुषद चारु चंदा ॥१॥ सानुज भरत लषन संग सोहै। सिसु भूषन भूषित मन मोहै ॥२॥ तनु दुति मोर चंद जिमि झलकै। मनहुं उमगि अंग अंग छवि छलकै ॥ ३ ॥ कटि किंकिनी पाय पैजन बाजै। पंकज पानि पहुंचिया राजै ॥४॥ कठुला कंठ बघनहा नीके। नयन सरोज मयन सरसीके ॥५॥ लटकन लसत ललाट लटूरी। दमकत द्वैद्वैदंतुरिआ रूरी ॥६ मुनिमन हरत मंजु मसि बुंदा। ललित बदन बलि बाल मुकुंदा ॥ ७ ॥ कुलही चित्र बिचित्र झँगूली। निरषत मातु मुदित प्रतिफूली ॥ ८ ॥ गहिमनिषंभ डिंभ डगि डोलत। कलबल बचन तोतरे बोलत ॥ ९ ॥ किलकत झुंकि झांकत प्रतिबिंबनि। देत परम सुष पितु अरु अंबनि ॥१०॥ सुमिरत सुषमा हियहुलसी है। गावत प्रेम मगन तुलसी है॥११॥३१॥

१ । २ । ३ । पंकज पाणि कर कमल ॥ ४ ॥ मानो नेत्र काम के

तड़ाग के कमल हैं वा काम रूप तड़ाग के ॥ ५ ॥ रूरी भली ॥६॥७॥ कुलही टोपी औ झंगुली अंगरखी, मातु बलिहारी जात संते हरषहिं बलि जो पूर्व पद में है ताको अन्वय इहां करना ॥ ८ ॥ डिंभ बालक ।९।१० सुषमा परमा शोभा ॥ ११ ॥ ३१ ॥

राग कान्हरा—ललित सुतहि लालति सचुपाये। कौसल्या कल कनक अजिर महं सिखवत चलन अंगुरिया लाये ॥ १ ॥ कटि किंकिनो पैजनिआ पायेन बाजत रुनझुन मधुर रिंगाए। पहुंची करनि कंठ कठुला बन्यौ केहरिनख मनि जरित जराये ॥ २ ॥ पीत पुनीत बिचित्र झंगुलिया सोहत स्याम सरीर सोहाये। दंतिया द्वै द्वै मनोहर मुख-छवि अरुन अधर चित लेत चुराये ॥ ३ ॥ चिबुक कपोल नासिका सुंदर भाल तिलक मसिबिंदु बनाये। राजत नयन मंजु अंजनयुत खंजन कंज मीन मदनाये ॥ ४ ॥ लटकन चारु भृकुटियां टेढ़ी मेढ़ी सुभग सुदेस सुभाये। किलकि किलकि नाचत चुटकी सुनि डरपति जननि पानि छुटकाये ॥ ५ ॥ गिरि घुटुरुनि टेकि उठि अनुजनि तोतरि बोलत पूप देखाये। बालकेलि अवलोकि मातु सब मुदित मगन आनंद अनमाये ॥ ६॥ देखत नभ घन वोट चरित मुनि जोग समाधि बिरति बिसराये। तुलसिदास जे रसिक न येहि रस ते नर जड़ जीवत जग जाये ॥ ७ ॥ ॥ ३२ ॥

लालतिकरै दुलारति, सचुपाए आनंद पाए, कल सुंदर ॥ १ ॥ मधुर रिंगाए धीरे धीरे चलाए औ इहां जो जड़ाए शब्द है ताको रूढ़ि लक्षणा करि पहिराये अर्थ करना ॥ २ ॥ ३ ॥ खंजन कमल मीनों के मद को नीचे किए अंजन युत सुंदर नयन शोभत हैं ॥ ४ ॥ मेढ़ी आदि को अर्थ पहिले लिखि आए, पानि छुटकाए हाथ छोड़ाए में जननी डरपति

ह या आप श्री राम दरपत हैं ॥ ५ ॥ पूप देखाए माता के माल्पूआ देखाए से तोतर बोलन अर्थात् तोतराय के मागत बालकेलि देखि के माता सब हर्षित हैं औ भनभाए कहैं जो न अमाय अर्थात् अपार आनंद तेहि में मगन हैं ॥ ६ ॥ विरति वैराग्य जाए वृथा ।७॥३२॥

राग ललित । छोटी छोटी गोड़िया अंगुरियां छोटी छबीली । नष जोति मोती मानो कमल दलनि पर । ललित आंगन पेले ठुमुकि ठुमुकि चले झुंझुन झुंझुन पाय पैंजनी मृदु मुपर ॥ १ ॥ किंकिनी कलित कटि हाटक रतन जटि मंजु कर कंजनि पहुचिया रुचिरतर । पियरी झीनी झंगुली सांवरे सरीर पुली बालक दामिनि ओढी मानो वारे वारि-धर ॥२॥ उर बघनहा कंठ कठुला झंगूले केस मेढी लटकन मसिबिंदु मुनिमन हर । अंजन रंजित नैन चित चोरै चित-वनि मुप शोभा परवारों अमित असमसर ॥ ३ ॥ चुटकी बजावति नचावति कौसल्या माता बालकेलि गावति मल्हावत प्रेम सुभर । किलकि किलकि हंसे द्वै द्वै दंतुरियां लसै तुलसी के मन बसै तोतरे वचन बर ॥ ४॥३३ ॥

मृदु मुखर कोमल शब्द से ॥ १ ॥ कटि में किंकिनी शोभित है औ सोना रत्न से जड़ी अतिशय सुंदर पहुंचियां सुंदर कर कमलनि में हैं औ बालक के सांवरे शरीर में खुले वाली पीत रंग की झीनी झंगुली है मानो बालक नहीं है छोटे मेघ हैं झिंगुली नहीं है दामिनि है ताको ओढ़ि लई है ॥ २ ॥ झंगुले केश बिखरे वार असमसर कहैं पंचबाण अर्थात् काम ॥ ३ ॥ प्रेम सुभर प्रेम में सुंदर भारि ॥ ४॥३३ ॥

सादर सुमुषि बिलोकि राम सिसु रूप अनूप भूप लिये कनियां । सुंदर स्याम सरोज बरन तन सब अंग सुभग सकल सुप दनियां ॥ १ ॥ अरुन चरन नष जोति जग-

सगति रुनझुन करति पांय पैंजनियां। कनक रतन मनि जटित रटति कटि किंकिनि कलित पीतपटतनियां ॥ २ ॥ पहुंची करनि पदिक हरि नप उर कठुला कंठ मंजु गज-मनियां। रुचिर चिबुक रद अधर मनोहर ललित नासिका लसति नथुनियां ॥ ३ ॥ विकट भृकुटि सुषमानिधि आनन कल कपोल कानन नगफनियां। भाल तिलक मसिबिंदु विराजत सोहत सीस लाल चौतनियां ॥ ४ ॥ मन मोहनी तोतरी बोलनि मुनिमन हरनि हसनि किलकनियां। बाल सुभाय विलोल विलोचन चोरति चितहि चारु चितवनियां ॥ ५ ॥ मुनि कुलवधू झरोखनि झांकति रामचंद्रछवि चंद्र वदनियां। तुलसिदास प्रभु देषि मगन भई प्रेमविवस कछु सुधि न अपनियां ॥ ६॥३४ ॥

हे सुमुखि रूप है अनूप जेहि को तेहि राम शिशु को भूप गोद में लिए हैं ते देखु, सखी को उक्ति है ॥ १ ॥ पीत पटतनियां करिके कलित कहैं युक्त जो कटि तेहि में रतन माणिन से जड़ित जो कनकमयी किंकिनी सो रटति है। पीतपट तनियां कहैं पीत रंग के वस्त्र की कछनी, मारवाड़ में लंगोटी को तनियां कहत हैं पर इहां राजकुमार हैं ताते कछनी जानना ॥ २ ॥ पदिक धुकधुकी गजमनियां गजमुक्ता रद दांत ॥ ३ ॥ विकट टेढ़ कल सुंदर नगफनियां कान को भूषण प्रसिद्ध है जाको काशी आदि देश में दुर्वचा भी कहत हैं, चौतनियां टोपी ॥ ४ ॥ विलोल चंचल ॥ ५ ॥ यह सखी को वचन सुनि चंद्रवदनी कुलवधू झरोखनि तें झाकति हैं। यह कथा सत्योपाख्यान में स्पष्ट है ॥ ६॥३४ ॥

राग विलावल। सोहत सहज सोहाये नयन। षंजन मीन कामल सकुचत तव जव उपमा चाहत कवि दैन ॥१॥ सुंदर सब अंगनि सिसुभूषन राजत जनु सोभा आये लैन।

बडो लाभ लालची लोभबस रहि गए लखि सुषमा बहु मैन ॥२॥ भोर भूप लिए गोद मोद भरे निरषत बदन सुनत कल बैन। बाल रूप अनूप राम छबि निवसति तुलसिदास उर चैन ॥ ३। ३५ ॥

सहज सोहाए अर्थात् अंजनादि बिना ॥ १ ॥ सुंदर सब अंगन में बालभूषण शोभत हैं। मानों भूषण नहीं हैं बहु काम हैं ते शोभा लेबे को आवत भए पर सुषमा रूप बड़ो लाभ लखि लालची काम लोभ वस रहि गए ॥२॥ निवसति उर अन हृदय रूपी गृह में वसति ॥३।३५

राग बिभास—भोरभयो जागहु रघुनंदन गतव्यलीक भगतनि उरचंदन। ससिकर हीन छीन दुतितारे तमचर मुपर सुनहु मेरे प्यारे ॥ १ ॥ बिकसत कंजकुमुद बिलपाने। लै पराग रस मधुप उडाने। अनुज सषा सब बोलनि आए। बंदिन्ह अतिपुनीत गुनगाए ॥ २ ॥ मनभावतो कलेऊ कीजै। तुलसिदास कहं जूठन दीजै ॥ ३ ॥ ३६ ॥

माता की उक्ति है। हे रघुनंदन भोर भयो जागहु। तुम कैसे हौ कि व्यलीक कहैं कपट तेहि करि रहित जो भक्त तिन के उर के चंदन हौ अर्थात् शीतल करनिहारे ॥ १ ॥ चंद्रमा किरन रहित भए औ तारन की द्युति छीन भई औ मुरुगा बोलि रहे हैं तेहि शब्द को सुनहु ॥ २ ॥ कमल फूले औ कोई सम्पुटित भई औ कमलन की धूरी रस लैके भ्रमर उड़त भए ॥ ३।३६ ॥

प्रात भयो तात बलि मातु बिधुवदन पर मदनवारौ कोटि उठो प्रानप्यारे। सूत मागध बंदी बदत बिरदावली द्वारसिसु अनुज प्रियतम तिहारे ॥ १ ॥ कोकगत सोक अवलोकि ससि छीन छवि अरुनमय गगन राजत रुचिर तारे। मनहु रवि बाल मृगराज तमनिकर करि दलित अति ललित मनिगन

विचारे ॥२॥ सुनहु तमचर मुदर कीर कलहंस पिक केकि रव कलित बोलत विहंगवारे । मनहुं मुनिवृन्द रघुवंसमनि रावरे गुनतगुन आश्रमनि सपरिवारे ॥ ३ ॥ सरनि विकसति कंजपुंज मकरंद वर मंजुतर मधुर मधुकर गुंजारे । मनहुं प्रभुजन्म सुनिचयन अमरावती इंदिरानंद मंदिर संवारे ॥४॥ प्रेम संमिलित वर वचन रचना अकनिराम राजीव लोचन उधारे । दास तुलसी मुदित जननि करैं आरती सहज सुंदर अजिर पांउ धारे ॥ ५ ॥ ३७ ॥

हे तात ! प्रात भयो, मैं माता बलि जाउं औ तुम्हारे मुख चन्द्र पर कोटि मदन वारों । हे प्राणप्यारे उठो, पौराणिक कथक भांट विरदावली कहत हैं औ तुम्हारे अतिशय प्रिय बालक और अनुज द्वार पर खड़े हैं ।१॥ चंद्रमा की छवि छीन देखि कै चक्र वाक शोक रहित भए औ लाल रंग मय आकाश में सुंदर तारे राजत हैं । मानो बाल रवि रूप सिंह ने तमसमूह रूप हाथिन को विदारि करि अति सुंदर मणि गणन को छितिराय दिये । इहां मणिगण तारा हैं मुरगा बोलत हैं औ सुगा औ राजहंस औ कोइलि औ मोर रव कलित कहे शब्दयुक्त हैं औ बचौ पच्छिन के बोलत हैं सो सुनहु पक्षी औ पक्षिन के बच्चा नहीं बोलत हैं हे रघुवंशमणि मानो मुनिगन परिवार सहित आश्रमन में आप के गुण वर्णत हैं, इहां आश्रम खोंता है । ३ । तड़ागन में कमलन के समूह प्रफुल्लित हैं तिन में श्रेष्ठ रस है तापर भ्रमर अति सुंदर मधुर गुंजार करत हैं मानो भ्रमर गुंजार नहीं करत हैं प्रभु को जन्म सुनि के इन्द्र के पुरी में चयन है अर्थात् देवता लोग नृत्यगान करत हैं प्रफुल्लित कमल नहीं हैं लक्ष्मी ने आनंद को मंदिर बनायो है ॥ ४ ॥ प्रेमयुक्त श्रेष्ठ वचन रचना सुनि श्रीराम कमल सम नेत्र उघारत भए । गोसाईं जी कहत हैं कि हरषित जननी आरती करति हैं औ सहज सुंदर जो रघुनाथ सो आंगन में पधारत भए ॥ ५ ॥ ३७ ।

जागिये कृपानिधान जानि राय रामचन्द्र जननी कहै

न अर्थात् शोभाहीन औ सब तारन की द्युति मलीन मानो सूर्य हीं उए पूर्ण ज्ञान को प्रकाश भयो औ रात्रि नहीं बीती भव का ल्लास अहंता ममतादि बीलो औ आश त्रास रूप अंधकार को लोप प सूर्य के तेज ने जगाय दिये ॥ २ ॥ हे प्राण जीवन धन मेरे वारे धुर शब्द ते पक्षीन के समूह बोलत हैं, हमारे बचन को विश्वास करि वन तें तुम सुनहु मानो पक्षी नहीं बोलत हैं वेद रूप बंदी औ मुनि- द रूप सूत मागधादि जय जय जय जय जयति कंठ भारे कहि यश कहत हैं ॥३॥ कमल समूहों के फूलत मात्र कमलन के लागि के पृथक ह्वै भ्रमरन के समूह सुंदर कोमल धुनि तें गुंजत चले भाव सायंकाल में कमलन के संपुटित होने तें भीतर परि गए रहे ते उड़ि चले ते भ्रमर कमल विहाय गुंजार करत नहीं उड़त हैं मानो वैराग्य पाय सब शोक रूप गृह कूप छोड़ि के तिहारे सेवक गुण को गुणन प्रेम में मत्त फिरत हैं। संपुटित कमल का गृह कूप में उत्प्रेक्षा करने का यह भाव कि संपुटित कमल से भी निकलना कठिन है औ गृह कूप से भी निकलना कठिन है औ संपुटित भए पर भ्रमर को केवल कमलै देखि परत है तैसे गृहकूप में जे पड़े हैं तिन को केवल घरै देखि पड़त है । इहां कमल के प्रफुल्लित होए से भ्रमर छुट्टी पावत हैं इहां प्रभु कृपा करि जब निकालें तब छुट्टी पावै ॥ ४ ॥ रसाल प्रिय बचन सुनत मात्र अतिशय दयाल जे श्री राम ते जागे । जंजाल भागत भए औ अनेक दुःखन के समूहन के टारत भए । गोसाईं जी कहत हैं कि दास मुखार- विंद देखि के अति अनंद भए तातें माया के परम मंद भारे भ्रम फंद छूटे ॥ ५ ॥ ३८ ॥

बोलत अवनिपकुमार ठाढे न्रप भवन द्वार रूप सील गुन उदार जागहु मेरे प्यारे । बिलपित कुमुदिनि चकोर चक्रवाक हरष भोर करत सोर तमचर पग गुंजत अलि न्यारे ॥ १ ॥ रुचिर मधुर भोजन करि भूपन सजि सकल अंग संग अनुज बालक सब विविधिविधि सँवारे । करतल गहि ललित चाप भंजन रिपुनिकरदाप कटितट पटपीत

सोभा चकित चितवहिं सात। हरष बिबस न जात कहि निजभवन बिहरहु तात ॥ ५ ॥ देषि तुलसीदास प्रभुछवि रहे सब पल रोकि। थकित निकर चकोर मानहु सरद इंदु बिलोकि ॥ ६ ॥ ४० ॥

सखा औ प्रिय जे बालकन के अनेक युत्थें ते, नृपद्वार में खड़े हैं वा सखा औ प्रिय औ बालकन के अनेक युत्थं नृपद्वार में खड़े हैं, तुम्हारे दरस के कारन, चतुरदास रूप चातक जे त्रिषित हैं तिन को सरीर रूप मेघ ते छबि रूप जल बरषि कै नेत्रन की प्यास हरहु ॥२। बिनीत नम्र केहरि बालक कहे सिंह को बालक ॥३॥ परम शोभा पुंज जो आंगन है तेहि में चलत संते पद की परिछाहीं शोभति है सो परिछाहीं नहीं है मानो प्रेमवस चरण प्रति पृथ्वी कमलन के आसन देति है ॥ ४ ॥ हर्ष के विशेष बस है ताते नहीं कहिजात है कि हे तात निज भवन में बिहरहु अर्थात् बाहर न जाहु ॥ ५ ॥ गोसाईं जी कहत हैं कि प्रभुछावि देखि कै सब पलक रोकि रहे मानो चकोरन के समूह सरद पूनो के चंद को देखि थकित भए ॥ ६ ॥ ४० ॥

बिहरत अवध बीथिन्ह राम। संग अनुज अनेक सिसु नव नील नीरद स्याम ॥ १ ॥ तरुन अरुन सरोजपद बनि कनकमय पद त्रान। पीत पट कटि तून बर कर ललित लघु धनुबान ॥ २ ॥ लोचननि को लहत फल छवि निरषि पुर-नरनारि। बसत तुलसी दास उर अवधेस के सुत चारि ॥३॥४१

नवीन स्याम मेघ सम स्याम श्रीराम अनुज औ अनेक शिशुन के संग अवध की गलिन में बिहरत हैं ॥ १ ॥ तरुण जो लालकमल तद्वत चरण हैं तामें सुवर्ण मयी पनही बनी है अर्थात् पहिरे हैं, पीतपट औ तरकस कटि में है, श्रेष्ठ करनि में सुंदर छोटे धनुष औ बान हैं ॥ २ ॥ लोचन इ० सु० ॥ ३ ॥ ४१ ॥ करतल सोहत बान धनुहिया। यह पद छेपक है ताते न लिखा

जैसी राम ललित तैसी लोने लषन लालु। तैसेई भरत सील सुषमा सनेहनिधि तैसई सुभ प्रसंग सत्रुसालु ॥१॥ धरें धनु सर कर कसे कटि तरकसी पीरे पट वोढे चलें चारु चालु। अंग अंग भूषन जराय के जगमगत हरत जन के जी को तिमिर जालु ॥२॥ पिलत चौहटा घाट वीथी बाटकनि प्रभु सिव सुप्रेम मानस मरालु। सोभा दान देदै सनमानत जाचक जन करत लोक लोचन निहालु ॥३॥ रावन दुरित दुष दलै सुर कहे आजु अवध सकल सुष को सुकालु। तुलसी सराहै सिद्ध सुकृत कौसल्या जू के भूरिभाग भाजन भुआलु ॥ ४॥४२ ॥

ललित सुंदर, लोने सुंदर, सील सुखमा सनेह निधि सील औ परम सोभा औ स्नेह के समुद्र, शत्रुशालु शत्रुहन जी ॥१॥ तरकसी तरकस जराय के जड़ाऊ के तिमिर जाल अंधकार समूह ।२। शिव जी के सुंदर प्रेम रूप मानस सर के हंस जो प्रभु हैं सो चौहटा औ घाट गली औ फुलवारिन में खेलत हैं औ लोक के लोचन रूप जाचक जन के सोभा दान दै दै के सनमानत हैं औ निहाल करत हैं ।। ३ ।। देवता कहत हैं कि अवध में सकल सुख को सुकाल है पर रावन पाप रूप दुख को आजुऐ मारैं, भाव अवध के सुख में न भूलैं हमारे दुख को देखि शीघ्रता करैं वा देवता कहत हैं कि आजु कहैं या समै में रावन पाप रूप जो दुख है ताको मारैं तो अवध में सकल सुख को सुकाल होय। भाव फेर दुकाल का भै न रहि जाय। गोसाईं जी कहत हैं कि बड़े भाग्य के पात्र जो महाराज दशरथ औ कौशल्या जू तिन के सुकृत को सिद्ध सराहत हैं ।४।४२।।

राग ललित। ललित ललित लघु लघु धनु सर कर तैसि तरकसि कटि कसे पट पियरे। ललित पनहि पांयं पैंजनी किंकिनि धुनि सुनि सुष लहै मनु रहै नित निअरे ॥१॥

पहिरो अंगद चारु हृदय पदिक हारु कुंडल तिलक छबि गडो कवि जिअरे। सिर सिटे पारो लाल नीरज नयन बिसाल सुंदर बदन ठाढ़े सुरतरु सिअरे ॥ २ ॥ सुभग सकल अंग अनुज बालक संग देखि नर नारि रहैं ज्यों कुरंग दिअरे। खेलत अवध खोरि गोली भौंरा चकडोरि मूरति मधुर बसै तुलसी के हिअरे ॥ ३ ॥४३॥

ललित० इ० मु० ॥ १ ॥ अंगद बिजायठ पदिक धुकधुकी हार माला या सात पदिक के माला का नाम पदिक हार है सिर सिटे पारे लाल शिर में लाल टोपी है नीरज कमल । सुरतरु सियरे कल्पवृक्ष के छाया में ॥ २ ॥ ज्यों कुरंग दियरे जैसे मृगा दीपक को देखि कै। संका । मृगा तो गान सुनि मोहित होत है दीपक ने कैसे लिखे ? उत्तर। व्याधा दीपक बारि कै कुछ गान करत हैं तब मृगा उहां आवत है यह प्रसिद्ध है चकडोरी चकई ॥ ३ ॥ ४३ ॥

छोटि ऐ धनुहिया पनहिया पगनि छोटी छोटि ऐ कछोटी कटि छोटि ऐ तरकसी । लसत झंगुली झीनी दामिनि की छबि छीनो सुंदर बदन सिर पगिया जरकसी ॥ १ ॥ बय अनुहरत बिभूषन बिचित्र अंग जोहे जिय आवति सनेह की सरकसी । मूरति की मूरति कही न परै तुलसी पै जानैं सोई जाके उर कसकै करकसी ॥ २॥४४ ॥

कछोटी कछनी ॥ १ ॥ अवस्था के अनुहार बिचित्र भूषण अंग में हैं देखिये तें जिय में स्नेह की सरकसाई आवति है तुलसी पै मूरति की मूरति नहीं कहि परै है जा के हृदय में करक ऐसी कसकै है अर्थात् मूरति सोई जानै ॥ २ ॥ ४४ ॥

राग टोड़ी राम लषन एक ओर भरत रिपुदमन लाल एक ओर भए । सरजु तीर सम सुखद भूमिथल गनि गनि

गोइया बाँटि लये ॥ १ ॥ कंदुक केलि कुसल हय चढ़ि चढ़ि मन कस कसि ठोंकि ठोंकि पये। करकमलनि विचित्र चौगानै खेलन लगे खेल रिझये ॥२॥ व्योम विमाननि विबुध विलोकत खेलक पेखक छांहछये। सहित समाज सराहि दसरथहि बरषत निज तरु कुसुमचये ॥ ३ ॥ एक लै बढ़त एक फेरत सब प्रेम प्रमोद विनोद मये। एक कहत भइ हाल राम जू की एक कहत भइया भरत जये ॥ ४ ॥ प्रभु बकसत गज बाजि बसन मनि जय धुनि गगन निसान हये। पाइ सखा सेवक जाचक भरिजीव न दूसरे द्वार गये ॥ ५ ॥ नभ पुर परति निछावरि जहँ तहँ सुरसिद्धनि बरदान दये। भूरिभाग अनुराग उमगि जे गावत सुनत चरित नित ये ॥६॥ हारे हरष होत हिय भरतहि जिते सकुचि सिर नयन नए। तुलसी सुमिरि सुभाव सील सुकृती तेइ जे एहि रंग रए॥१४॥

राम इ० सु० ॥ १ ॥ गेंदा के खेल में जे कुशल हैं ते घोड़न पर चढ़ि चढ़ि कै मन को ठोंकि ठोंकि मजबूत करि करि के खड़े भए ठोंकि ठोंकि मजबूत करिबे को यह भाव कि हम हारैंगे नहीं अवश्य जीतैंगे अस निश्चै करि करि वा मन को फेरि फेरि के अर्थात् मिलाप छोड़ि छोड़ि के ताल ठोंकि २ के खड़े भए वा मन भरि घोड़न को कसि कसि के याल ठोंकि ठोंकि के चढ़ि चढ़ि खड़े भए हस्त कमलन में विचित्र दण्डा है रिझावनवाले खेल खेलन लगे यह खेल या भांति ते खेला जात है दूनो ओर गोइंया खडे होत हैं बीच में एक सींवां बनावत हैं जमीन में गेंदा को धरि घोड़े पर से दंडा मारि मारि के गेंदा को सींवा के ओर बढ़ावत हैं औ दूसर ओर से दंडा मारि मारि के गेंदा को फेरत हैं जेहि ओर से सींवा पार होय तेहि की हाल होय अर्थात् जीत होय ॥ २ ॥ आकाश तें विमानन पर देवता देखत हैं खेलनेवाले और देखनेवालों की छाया छाय रही वा खेलनेवालों पर देखनेवालों की

छाया छाय रही वा खेलनेवालों की छाया सम देखनेवाले अर्थात् देवता छाजे समाजसहित राजा दशरथ को सराहि के अपनी तरु जो कल्पवृक्ष ताको पुष्प समूहैं वर्षत भए ॥ ३ ॥ सब प्रेम अनन्द औ कौतुक मैं जे हैं तिन में से एक गेंदा कों लै बढ़त औ एक रोकि कै फेरत एक कहत है कि राम जू की जीत भई औ एक कहत है कि भैया भरत जीते ॥ ४ ॥ हये कहँ हने अर्थात् बजाए ॥५॥ जहँ तहँ पुर तें औ आकाश तें नेवछावरि परति हैं अर्थात् आकाश तें देवता औ पुर तें पुरवासी नेवछावर करत देवता औ सिद्ध बरदान देत भए अनुराग में उमगि के जे ए चरित नित्य सुनत गावत हैं तिन के बड़े भाग हैं ॥६॥ सिर नैन नए सिर औ नैन नीचे के नवावत भए रए कहँ रंगे ॥७॥४५॥

खेलि खेलि सुखेलनिहारे। उतरि उतरि चुचुकारि तुरंनि सादर जाइ जोहारे ॥१॥ बंधु सखा सेवक सराहि सनमानि सनेह संभारे। दिए बसन गज बाजि साजि सुभ साजि भांति संवारे ॥२॥ मुदित नयन फल पाइ गाइ गुन सुर आनंद सिधारे। सहित समाज राज मंदिर कहं रामराउ पग धारे ॥ ३ ॥ भूपभवन घर घर घमंड कल्यान कोलाहल भारे। निरखि हरखि आरती निछावरि करत सरीर बिसारे ॥ ४ ॥ नित नये मंगल मोद अवध सब विधि सब लोग सुधारे। तुलसी तिन्ह सम तेउ जिन्ह के प्रभु ते प्रभुचरित पियारे ॥ ५॥४६ ॥

सुंदर खेलनेवारे खेल खेलि के ॥ १ ॥ बंधु सखा सेवक कों सराहि सनमानि के फिरि सनेह को सम्हारे अर्थात् सनेह में आप जो विहल है गए रहे ताको सम्हारे पुनि बसन औ घोड़ा हाथी साजि कै औ सुंदर भांति ते संवारे जे सुभ साज भाव सुंदर पोसाक ते दिए वा कल्यान साजि के सुंदर भांति ते संवारत भए औ बसनादि दिए वा सनेह सम्हारे यह सब दिए भाव जेहि की जेतनी प्रीति तेतनी दिए वा

सनेहको सम्हारे भए जो बंधु आदि हैं तिनकों सराहि सनमानि कै बसनादि दिए सनेह सम्हारे भए कहिबे को यह भाव कि सनेह को न सम्हारें तो देहाध्यास रहित ह्वै जाहिं ॥२॥ मुदित इ० सु० ॥३॥ भूपति के भवन में औ घर घर में कल्यान को घमंड है अर्थात् कल्यान पूरि रहा है वा कल्यान को अहंकार है ॥ ४ ॥ गोसांई जी कहत हैं कि तिन्ह अवध वासी सम तेऊ हैं जिन्ह के प्रभु तें प्रभु का चरित पिआरा है ॥५॥४६॥

राग सारंग—चहत महामुनि जाग जयो। नीच निसाचर देत दुसह दुख कृसतन ताप तयो ॥ १ ॥ सापे पाप नये निदरत खल तब यह मंत्र ठयो। बिप्र साधु सुर धेनु धरनि हित हरि अवतार लयो ॥२॥ सुमिरत श्रीसारंगपानि छन मै सब सोचु गयो। चले मुदित कौसिक कोसलपुर सगुननि साथ दयो ॥ ३ ॥ करत मनोरथ जात पुलकि प्रगटत आनंद नयो। तुलसी प्रभु अनुराग उमगि मग मंगलमूल भयो ॥ ४ ॥ ४७ ॥

महामुनि जे विश्वामित्र जू ते यज्ञ औ जय दोऊ चाहत हैं। महामुनि कहिबे को यह भाव कि तपबल याही देह भए क्षत्री ते ऋषिपति अस कोऊ मुनि नहीं भयो। नीच निसाचर दुःसहदुःख देत हैं तातें तन तापन ते तयो औ कृश भयो ॥ १ ॥ अब विश्वामित्र जू का विचार कहत हैं शाप देइबे में पाप है औ नवतई किए में खल निरादर करत हैं अस विचारि कै तब यह मंत्र ठान्यो कि विप्रादि के हित हरि अवतार लियो है इहां और नाम न कहे हरिहीं कहे ताको यह भाव कि या काल में अपना दुःख हराइबे पर दृष्टि है अर्थात् हरतीति हरिः ॥ २ ॥ सारंगपानि कहिबे को यह भाव कि सारंग अस धनुष हाथ में है तो क्यों न हमारे शत्रु को नाशैंगे। सगुननि साथ दयो कहिबे को यह भाव कि राह भरि सगुन होन लागे ॥ ३ ॥ पुलकि करि कै मनोरथ करत जात हैं औ नयो जो कबहूं न भयो आनंद सो प्रगटत हैं गोसाईं जी

कहत हैं कि प्रभु अनुराग के उमग करि कै मग मंगलमूल भयो। भाव जतनाई दश के ओर घर में लग रहे ततनाई न भयो औ प्रभु के ओर चलते राह मे भयो आगे क्या जाने केतना होयगो ॥ ४ ॥ ८७ ॥

आजु सकल सुकृतफल पाइहौं। सुख की सीव अवधि आनंद की अवध बिलोकिहौं जाइहौं ॥ १ ॥ सुतनि सहित दसरथहि देखिहौं प्रेम पुलकि उर लाइहौं। रामचन्द्रमुख चन्द्र सुधा छवि नयन चकोरनि प्याइहौं ॥ २ ॥ सादर समाचार नृप बूझिहैं हौं सब कथा सुनाइहौं। तुलसी ह्वै कृतकृत्य आस्रमहि राम लखन लै आइहौं ॥ ३ ॥ ४८ ॥

अब विश्वामित्र जी को मनोरथ कहत हैं सुख की सीमा औ आनंद की सीमा ऐसी जो अयोध्या जी हैं तिन को जाय मैं देखिहौं ॥ १ ॥ श्रीरामचंद्र के मुख रूप चन्द्र को जो छवि रूप अमृत है ताको नैन रूप चकोरन को पिआइहौं ॥ २ ॥ सादर इ० सु० दो०। बहुविधि करत मनोरथ, जात न लागी बार। करि मज्जन सरजू जल, गए भूप दरबार ॥ चौ०। मुनि आगमन सुना जब राजा। मिलन गएउ लै बिप्र समाजा ॥ करि दंडवत मुनिहि सनमानी। निज आसन बैठारिन्हि आनी ॥ चरन पखारि कीन्ह अति पूजा। मो सम आजु धन्य नहिं दूजा ॥ बिबिधि भाँति भोजन करवावा। मुनिवर हृदय हरष अति पावा ॥ पुनि चरनन मेले सुत चारी। राम देखि मुनि देह बिसारी ॥ भये मगन देखत मुख सोभा। जनु चकोर पूरन ससि लोभा ॥ इहां यतनी कथा छोड़ि दिए प्रसंग मिलाइबे हेतु हम लिखि दिया ॥ ३ ॥ ४८ ॥

राग नट—देखि मुनि रावरे पद आजु। भयो प्रथम गनती में अब तहां जहां लौं साधु समाजु ॥ १ ॥ चरन बंदि करजोरि निहोरत कहिय कृपा करि काजु। मेरे कछु न चहिय राम बिनु देह गेह सब राजु ॥ २ ॥ भलो कह्यो भूपति त्रि-भुवन मैं को सुकृती सिरताजु। तुलसी राम जनम तें जनि-यत सकल सुकृत को साजु ॥ ३ ॥ ४९ ॥

देखि इ० पद सुगम ॥ ३ ॥ ४९ ॥

राजन रामलषन जो दोजै । जस रावरो लाभ ढोटनिहु मुनि सनाथ सब कीजै ॥ १ ॥ डरपत हौ सांचेहु सनेहबस सुत प्रभाव बिनु जाने । बूझिये वामदेव अरु कुलगुरु तुम पुनि परम सयाने ॥ २ ॥ रिपुरन दलि मष राषि कुसल अति अलप दिननि घर ऐहैं । तुलसिदास रघुबंसतिलक की कबि कल कीरति गैहैं ॥ ३ ॥ ५० ॥

राजन इ० पद सुगम ॥ ३ ॥ ५० ॥

रहे ठगि से न्टपति सुनि मुनिबर के बैन। कहि न सकत कछु राम प्रेमबस पुलकगात भरे नीर नैन॥१॥ गुरु बसिष्ट समुझाय कह्यो तब हिय हरषाने जानि सेषसयन । सौंपे सुत गहि पानि पांय परि भूसुर उर चले उमगि चयन ॥ २ ॥ तुलसी प्रभु जोहत पोहत चित सोहत मोहत कोटि मयन । मधुमाधव मूरति दोउ संग मानो दिनमनि गमन कियो उत्तर अयन ॥ ३ ॥ ५१ ॥

रहे ठगि सु० ॥ १ ॥ विश्वामित्र जू चैन कहैं आनन्द में उमगि चले ॥ २ ॥ गोसांई जी कहत हैं कि कोटि काम के मोहत जो प्रभु सोभत हैं सो देखत मात्र चित्त कों पोहि लेत हैं अर्थात् अपने में लगाइ लेत हैं मानो चैत्र बैसाख रूप दोउ मूरति संग लै बिश्वामित्ररूप सूर्य उत्तर दिसा को गवन कियो भाव चैत्र बैसाख पाय सूर्य अति प्रतापयुक्त होत हैं तैसे इन दोऊ भैयन को पाय बिश्वामित्र जू भए ॥३॥५१॥

राग सारंग । रिषि संग हरषि चले दोउ भाई । पितु पद बंदि सीस लियो आयसु सुनि सिष आसिष पाई ॥१॥ नील पीत पाथोज बरन बपुबयकिसोर बनि आई । सर धनु पानि पीत पट कटितट कसे निषंग बनाई ॥ २ ॥ कलित कंठ

मनिमाल कलेवर चंदन खौरि सुहाई। सुंदर वदन सरोरुह लोचन मुख छवि वरनि न जाई ॥ ३ ॥ पल्लव पंष सुमन सिर सोहत क्यों कहौं वेष लोनाई। मनो मूरति धरि उभय भाग भई त्रिभुवन सुंदरताई ॥ ४ ॥ पैठत सरनि सिलनि चढ़ि चितवत षगमृग बन रुचिराई। सादर सभय सप्रेम पुलकि मुनि पुनि पुनि लेत बोलाई ॥ ५ ॥ एक तीर तकि हती ताडका विद्या बिप्र पढाई। राष्यो जज्ञ जीति रजनीचर भइ जग विदित बड़ाई ॥ ६ ॥ चरन कमल रज परसि अहल्या निज पति लोक पठाई। तुलसिदास प्रभु के बूझे मुनि सुरसरि कथा सुनाई ॥ ७ ॥ ५२ ॥

पिताकी शिक्षा आनि आज्ञा शिर धरि लिए फिर पद कों बंदि आशिष पाइ कै ऋषि के संग हरषि कै दोऊ भाई चले ॥१॥ श्याम पीत कमल के समान सरीर के वर्ण हैं औ किशोर अवस्था बनि के आई अर्थात् भली भांति आई है बान धनुष हाथ में है औ कटि देश में पीत पट है औ तामें तरकस बनाय कै कसे हैं ॥२॥ कंठ में मणिमाल शोभित है औ सरीर में सुंदर चंदन की खौरि है सुंदर मुख औ कमल सम लोचन हैं मुख की छवि बरनी नहीं जाति है ॥३॥ अपर पद सु० ॥४॥५॥६॥७॥५२॥

राग नट। दोऊ राजसुवन राजत मुनि के संग। नष सिष लोने लोने बदन लोने लोयन दामिनि वारिदवर बरन अंग ॥ १ ॥ सिरसि सिषा सुहाई उपवीत पीत पट धनु सर करकसि कटि निषंग। मानो मष रूज निसिचर हरिबे को सुत पावक के साथ पठये पतंग ॥ २ ॥ करत छांह घन बरषे सुर सुमन छवि वरषत अतुलित अनंग। तुलसी प्रभु बिलोकि मग लोग षग मृग प्रेम मगन रंगे रूप रंग ॥ ३॥५३ ॥

...छौने सुंदर लोचन नेत्र दामिनि वरण अंग श्रीलक्ष्मण जी के औ मेघवरण अंग श्री राम जी को है ॥ १ ॥ मानो मख के रक्षक रूप निशाचर हरिन को अग्नि के साथ पुत्र जो अश्विनी कुमार तिन को सूर्य पठए हैं इहाँ पावक विश्वामित्र जू हैं अश्विनी कुमार दोउ भाई हैं सूर्य चक्रवर्ती महाराज हैं ॥ २ ॥ मेघ छांह करत हैं देवता फूल वर्षते हैं औ अनेक अनंग सम छवि बरनत हैं या छवि वरनते में काम नहीं तुल्लित होत है या अतुलित जो छवि ताको काम वरनत है ॥३॥५३॥

राग कल्यान। मुनि के संग बिराजत बीर। काकपक्ष धर कर कोदंड सर सुभग पीत पट कटि तूनीर ॥१॥ वदन इंदु अंभोरुह लोचन स्याम गौर सोभा सदन सरीर। पुलकत रिषि अवलोकि अमित छवि उर न समात प्रेम को भीर ॥२॥ खेलत चलत करत मग कौतुक बिलमत सरित सरोवर तीर। तोरत लता सुमन सरसीरुह पियत सुधासम सीतल नीर ॥३॥ बैठत बिमल सिलनि बिटपनि तर पुनि पुनि बरनत छांह समीर। देखत नटत केकि कल गावत मधुप मराल कोकिला कीर ॥ ४ ॥ नयननि को फल लेत निरखि खग मृग सुरभी व्रजवधू अहीर। तुलसी प्रभुहि देत सब आसन निज निज मन मृदु कमल कुटीर ॥ ५ ॥ ५४ ॥

काक पक्ष जुलुफ कोदंड धनुष तूनीर तरकस ॥ १ ॥ इंदु चंद्रमा अंभोरुह कमल ॥ २ ॥ सरसीरुह कमल ॥ ३ ॥ नाचत जो मोर है औ सुंदर गावत जो भ्रमर हैं औ हंस कोकिल सुआ जे हैं तिन को देखत हैं ॥ ४ ॥ मृग पक्षी गौ औ पारकन के रखवाली जो स्त्री औ ... नयननि को फल लेत हैं गोसाई जी कहत हैं कि सब प्रभु को पाथोज मन रूप कुटी में कोमल कमल को आसन देत हैं भाव ... को कठोर जानि अस भावना करत हैं। ५ । ५४ ॥

...ग—सोहत मग मुनि संग दोउ भाई। ...

तमाल चारु चंपक छबि कबि सुभाय कहि जाई ॥ १ ॥ भूषन बसन अनुहरति अंगनि उमगति सुंदरताई। वदन मनोज सरोज लोचननि रही है लोभाइ लोनाई ॥ २ ॥ अंसनि धनु सर करकमलनि कटि कसे हैं निषंग बनाई । सकल भुवन सोभा सरबस लघु लागत निरपि निकाई ॥ ३ ॥ महि मृदु पथ घनछांह सुमन सुर बरषि पवन सुपदाई। जल-थलरुह फल फूल सलिल सब करत प्रेम पहुनाई ॥ ४ ॥ सकुच सभीत बिनीत साथ गुरु बोलनि चलनि सुहाई। पग मृग बिचित्र बिलोकत बिच बिच लसत ललित लरि-काई ॥ ५ ॥ बिद्या दई जानि बिद्यानिधि बिद्यहू लही डाई। ख्यात दली ताडका देपि रिषि देत असीस अघाई ६॥ बूझत प्रभु सुरसरि प्रसंग कहि निज कुल कथा सुनाई। ाधिसुअन सनेह-सुप सम्पति उरआस्रम न समाई ॥ ७ ॥ न बासी बड जती जोगि जन साधु सिद्धि समुदाई। पुलत ‍िपि प्रीति पुलकत तन नयनलाभ लुटि पाई ॥ ८ ॥ मप ाप्यो पलदल दलि भुजबल बाजत बिबुध बधाई। नित रघचरितसहित तुलसीचित बसत लषन रघुराई ॥९॥५५॥

सुंदर तरुण तमाल के वृक्ष सम श्रीरघुनाथ की औ चंपक सम श्रीलक्ष्मण की छबि यह कबि सुभाव ने कहि जात है। कबिसुभाव हिबे को यह भाव कि प्रायः जो न घटै सो घटावना। कबिन का सुभाव होत है ॥ १ ॥ अंगनि के अनुरूप भूषन बसन है अर्थात् श्रीरामजी को पीत बसन औ पीत मणि आदि को भूषन है औ श्रीलक्ष्मणजी को नीलबसन औ नीलमणि आदि को भूषण है औ सुंदर-ताई उमगति है औ मुखन पर काम की नैनन पर कमलन की शोभा लोभाय रही है ॥ २ ॥ अंसन कहे कांधन पर सरबस कहे सब ॥ ३ ॥

पृथ्वी कोमल पथ से, मेघ छाया से, देवता फूल बरषि के, पवन सुख से अर्थात् शीतल मंद सुगंध बहि के जल के वृक्ष स्थल के वृक्ष फल से औ सलिल सत्र से अर्थात् आत्मनिवेदन से प्रेमपूर्वक प करत हैं ॥ ४ ॥ गुरु के साथ में सकुचता सभीतता औ नम्रता बोलनि औ चलनि सोहाति है औ विचित्र पक्षी मृग जो देखत हैं बीच बीच में सुंदर लरिकाई लसत है ॥५॥ खेलही में ताड़का को ताको देखि के ऋषि अघाय के असीस देत भए औ विद्यानिधि विद्या दई भाव विघ्न के रहिबे को स्थान एही हैं विद्या ने भी लही भाव विद्यानिधि जो सोऊ हम को सीखे यह बड़ाई लही ताड़का का वध है फिर विश्वामित्र का विद्या देना है ताते पद का भांति अन्वय किया ॥ ६ ॥ प्रभु गंगा जी की कथा बूझत भए कहि के विश्वामित्र जू अपने कुल की कथा सुनाई । बालकाण्ड बा कीय रामायण में विश्वामित्र के कुल की कथा लिखी है विस्तार इहां नहीं लिखा विश्वामित्र जी को जो सनेह औ सुख रूप सम्प सो हृदय रूप आश्रम में नहीं समाति है ॥ ७ ॥ बानप्रस्थ ब्रह्म औ संन्यासी और अष्टांग योग साधनवारे जे जन औ साधु परकाज साधन करनिहारे औ सिद्ध अर्थात् जो साधन करि तिन की समुदाय देखि के पूजत हैं औ प्रीति तें तन पुलकत हैं नैनन ने लाभ की लूटि पाई है ॥ ८ ॥ बाजत विबुध बधाई दे की बधाई बाजत है ॥ ९॥५५ ॥

मंजुल मंगलमय नृपढोटा । मुनि मुनितिय मुनि विलोकि कहै मधुर मनोहर जोटा ॥ १ ॥ नाम रूप बेष वय राम लषनलाल लोने । इन्ह तें लही है मानो दामिनि दुति मनसिज मरकत सोने ॥ २ ॥ चरन पीत पट कटि तट तून तीर धनु धारी । केहरि कंध करिकरबर बिपुल बाहुबल भारी ॥ ३ ॥ दूषनर समय सम भूषन पाइ सुअंगनि सोहै । नवराजीव

रनबिधु बदन मदन मन मोहै ॥ ४ ॥ सिरनि सिपंड सुमन दल मंडन बाल सुभाय बनाये। केलि अंक तनु रेनु पंक जनु प्रगटत चरित चुराये ॥ ५ ॥ मख राखवे लागि भूमिरघ सो मागि आश्रमहि आने। प्रेम पूजि पाहुने प्रानप्रिय गाधिसुवन सनमाने ॥ ६ ॥ साधन फलसाधक सिद्धनि के लोचनफल सबही के । सकल सुकृतफल मातु पिता के जीवन धन तुलसी के ॥ ७॥५६ ॥

सुंदर मंगल मय नृपबालक हैं, मंजुल मंगल कहिवे को यह भाव के जेहि के नाम लेवे ते अमंगल नशि जात है, मुनि औ मुनि की पत्नी औ मुनि के बालक कोमल मनोहर जोड़ी देखि कै कहत हैं ॥ १ ॥ नाम औ रूप योग्य वेष औ अवस्था से श्रीराम लषन अति लोने हैं मानो मेघ दामिनि काम मरकत मणि औ सोना ने इनही तें छवि लही है ॥ २ ॥ कमल सम चरण है कटिदेश में पीतपट औ तरकस औ बान धनु धारन किए हैं। सिंघ सम कांध हैं, काम रूप हाथी के श्रेष्ठ सुंड सम विशाल भुजा औ पराक्रम भारी है ॥३॥ दूषनरहित जे समय सब भूषण ते सुअंगनि पाय सोभत हैं। दूषणरहित कहिवे को यह भाव कि बहुत मणि दोष सहितो होत हैं। नवीन कमल सम नेत्र हैं पूर्णचंद्र सम मुख है सो मदन को मन मोहत है ॥ ४ ॥ शिर पर मोरपंख औ फूल दल को भूषण बाल सुभाय ते बनाए हैं। खेल कै चिन्ह जो तनु में रेनु औ पंक सो मानहु चोराए चरित को प्रगटत है भाव विश्वामित्र जी को जो आंख बचाय कै खेले कूदे हैं ताकों प्रगटत हैं ॥५॥ विश्वामित्र जू यज्ञ राखिवे के हेतु चक्रवर्ती महाराज सों मांगि के आश्रम में ले आए मान ते प्रिय जो पाहुन दोऊ भाई तिन्ह कों प्रेम ते पूजि कै सन्मानत भए ॥६॥ साधन इ० सु० ॥७॥ ॥ ५६ ॥

राग सूहव । रामपद पदुम पराग परी । रिषितिय त्यागि तुरत पाहनतन छबिमय देह धरी ॥ १ ॥ प्रबल पाप पतिसाप दुसह दव दारुन जरनि जरी। कृपा सुधा सींची

विबुध बेलि ज्यों फिरि सुप फरनि फरी ॥ २ ॥ निगम अगम मूरति महेस मति युवति बराय बरी । सोइ मूरति भइ जानि नयनपथ एक टक ते न टरी ॥ ३ ॥ बरनत हृदय सरूप सील गुन प्रेम प्रमोद भरी । तुलसिदास ऐसे केहि आरत की आरति प्रभु न हरी ॥ ४॥५७ ॥

पराग धूरि पाहन पाखान ॥ १ ॥ प्रबल पाप से जो पतिशाप दुःसह अग्नि तेहि करि कठिन जरनि से जो जरी रही सो कृपारूपी अमृ से सींची गई फेरि कल्पलता के समान सुखरूप फरनि से फरी । पा "गच्छतस्तस्य रामस्य पादस्पर्शान्महाशिला । काचिद्योषाऽभवत्तस्यो विलि मुनिरब्रवीत् ॥ शापदग्धा पुरा भर्त्रा राम शक्रापराधतः । अहल्याख्या शि जज्ञे शतलिंगीकृतः स्वराट् ॥ त्वदंघ्रिस्पर्शनात्तस्यै शापान्तं प्राह गौत तस्मादियं ते पादाब्जस्पर्शाच्छुद्धाऽभवत्प्रभो'' ॥२॥ जो मूरति वेद अगम अर्थात् बरनन में औ महेश की मतिरूप युवती ने चुनि कै बरी बराय बरी कहिबे को यह भाव कि विष्णु नृसिंह वामनादि को तजि बरी सोई मूरति नयन गोचर भई जानि एक टक ते न टरी ॥३॥ शील गुण के हृदय में बरनत मात्र प्रेम औ आनंद से भरत भई। गोस जी कहत हैं कि प्रभु यहि प्रकार ते केहि आरत की आरति नहीं है। भाव सब की हरी हैं ॥४॥ ५७ ॥

परत पद पंकज रिषिरवनी । भई है प्रगट अतिदि देह धरि मानो त्रिभुवन छबिछवनी ॥१॥ देषि बडी आच पुलकि तन कहत मुदित मुनिभवनी । जौ चलि है रघुन पयादे सिला न रहि है अवनी ॥ २ ॥ परसि जो पाय पुनी सुरसरी सोहै तीनि पथ गवनी । तुलसिदास तेहि च रेनु की महिमा कहै मति कवनी ॥ ३ ॥ ५८ ॥

छवनी कन्या ॥ १ ॥ मुनिभवनी मुनिपत्नी ॥ २ ॥ तीनि स्वर्ग मर्त्य पाताल लोक ॥ ३ ॥ ५८ ॥

भूरि भाग भाजन भई। रूपरासि अवलोकि बंधु दोउ प्रेम सुरंग रई ॥ १ ॥ कहा कहौं केहि भांति सराहौं नहिं करतूति नई। बिनु कारन करुनाकर रघुबर केहि केहि गति न दई ॥ २ ॥ करि बहु बिनय राखि उर मूरति मंगल मोद मई। तुलसी ह्वै बिसोक पतिलोकहि प्रभुगुन गनत गई ॥ ३ ॥ ५९ ॥

भाजन पात्र, सुरंग रई सुंदर रंग में रंगी ॥ १ ॥ बिनु कारन बिनु हेतु ॥ २ ॥ करि इ० सु० ॥ ३ ॥ ५९ ॥

राग कान्हरा—कौसिक के मख के रखवारे। नाम राम अरु लखन ललित अति दसरथराज दुलारे ॥ १ ॥ मेचक पीत कमल कोमल कल काकपक्षधरवारे। सोभा सकल सकेलि मदन बिधि सुकर सरोज संवारे ॥ २ ॥ सहस समूह सुबाहु सरिस खल समर सूर भटभारे। केलि तून धनु बान पानि रन निदरि निसाचर मारे ॥ ३ ॥ रिषितिय तारि स्वयंवर पेखन जनक नगर पगधारे। मग नर नारि निहारत सादर कहि बड़भाग हमारे ॥४॥ तुलसी सुनत एक एकनि सो चलत बिलोकनि हारे। मूकनि बचन लाहु मानो अंधनि लहे हैं बिलोचन तारे ॥ ५ ॥ ६० ॥

अब मग के नर नारिन की उक्ति लिखत हैं कौसिक इ० सु० ॥१॥ ए बालक स्याम पीत कोमल कमल सम हैं औ सुंदर जुल्फ धारन किए हैं मानो सकल सोभा समेटि के काम रूप विधाना ने अपने कर कमल से संवारे हैं, इहां उत्प्रेक्षा है। २ ॥ समर में सूर बड़े योद्धा सुबाहु सरिस खल अनेक सहस निशाचरन को खेलवाड़ के तरकस औ धनुष बान जो हाथ में हैं तासों सो रण में निरादर करि के मारे ॥३॥ देखन कहैं देखन ॥ ४ ॥ मानो मूकनि ने बचन लाभ औ अंधनि ने नेत्रन की पुतरी लहे हैं ॥ ५ । ६० ।

राग टोड़ी--आए सुनि कौसिकु जनकु हरषाने हैं बोलि गुरु भूसुर समाज सो मिलन चले जानि बडे भा अनुराग अकुलाने हैं ॥ १ ॥ नाइ सीस पगनि असीस पा प्रमुदित पांवडे अरघ देत आदर सो आने हैं। असन.वस वास कै सुपास सब विधि पूजि प्रिय पाहुने सुभाय सनमा हैं ॥ २ ॥ विनय बडाई रिषि राजऊ परस्पर करत पुला प्रेम आनद अघाने हैं। देषे राम लषन निमिष विथकित भ प्रानहु ते प्यारे लागे बिनु पहिचाने हैं ॥ ३ ॥ ब्रह्मानंद हद दरस सुष लोयननि अनुभए उभय सरस राम जाने हैं। तुल सी बिदेह की सनेह की दसा सुमिरि मेरे मनमाने रा निपट सयाने हैं ॥ ४ ॥ ६१ ॥

कौशिक को आगमन सुनि अपने बड़े भाग जानि अनुराग विह्वल भए हैं औ हरषाने हैं जे जनक महाराज सचिव आदि तिन सहित मिलिवे को चले। शंका। गुरु को कैसे बोलाए ? उत्तर। श्रीजनव महाराज के गुरु जागवल्क जी हैं सतानंद जी पुरोहित हैं पुरोहित क भी गुरु कहत हैं ॥ १ ॥ प्रिय पाहुने बिश्वामित्र जी ॥ २ ॥ विनय इ सु० ॥ ३ ॥ ब्रह्मानंद उर से औ रामदरसन सुख नेत्रन तें दूनों अनुभ किए। तब सरस राम हैं यह जाने अर्थात् नेत्रसुख को अधिक माने गोसांई जी कहत हैं विदेह के स्नेह की दसा सुमिरि कै हमारे मन ने मान लिया कि महाराज अत्यंत चतुर हैं भाव ज्ञान में न भूले। "श्रेय श्रुतिं भक्तिमुदस्य ते विभो क्लिश्यन्ति ये केवलबोधलब्धये। तेषामसौके वलएवशिष्यते नान्यद्यथास्थूलतुषावघातिनाम्" ॥ ४॥६१ ॥

राग मलार—कोसल राय के कुंअरोटा। राजत रुचिर जनकपुर पैठत स्याम गौर नीके जोटा ॥१॥ चौतनी सिरनि कनककलि काननि कटि पट पीत सोहाए। उर मनिमाल विसाल विलोचन सीय स्वयंवर आए ॥ २ ॥ वरनि न जात

मनहि मन भावत सुभग अवहि वय थोरी। भए हैं मगन विधु बदन विलोकत वनिता चतुर चकोरी ॥ ३ ॥ कहं सिवचाप लरिकवनि बूझत विहंसि चिते तिरछो हैं। तुलसी गलिन भीर दरसन लगि लोग अटनि अवरोहैं ॥ ४ ॥ ६२ ॥

कुअरोटा कहँ कुअंर जोटा जोड़ी ॥ १ ॥ चौतनी टोपी कनककली सोना की कलिकाकार कुंडल या पीत रंग के पुष्प की कली कान र खोसे हैं ॥ २ ॥ घरनि इ० सु० ॥ ३ ॥ अटनि अवरो हैं अटारिन र चढ़े हैं ॥ ४ ॥ ६२ ॥

ए अवधेस के सुत दोउ। चढि मंदिरनि विलोकत सादर जनकनगर सब कोउ ॥ १ ॥ स्याम गौर सुंदर किसोर तन तून बान धनु धारी। कटि पट पीत कंठ मुकुतामनि भुज बिसाल बल भारी ॥२॥ सुष मयंक सरसीरुह लोचन तिलक भाल टेढी भौंहैं। कल कुंडल चौतनी चारु अति चलत मत्त गज गौहैं ॥३॥ विश्वामित्र हेतु पठए नृप इन्हहि ताडिका मारी। मष राख्यो रिपु जीति जानि जग मग मुनिबधू उधारी ॥ ४ ॥ प्रिय पाहुने जानि नर नारिन्ह नयनन्हि अयन दये। तुलसिदास प्रभु देषि लोग सब जनक समान भये ॥५॥६३

गजगौंहैं गज गति से, अयन गृह, जनक समान भए विदेह भए, अपर पद सुगम ॥ ५ ॥ ६३ ॥

राग टोड़ी—बूझत जनकनाथ ढोटा दोउ काके हैं। तरुन तमाल चारु चंपक बरन तनु कौने वडभागी के सुकृत परिपाके हैं ॥१॥ सुष के निधान पाये हिय के पिधान लाये ठग कैसे लाडूपाये प्रेम मधु छाके हैं। स्वारथरहित परमारथी कहावत हैं भे सनेहविवस विदेहता बिवाके हैं ॥२॥

सील सुधा के अगार सुखमा के पारावार पावत न पर पार पैरि पैरि थाके हैं। लोचन ललकि लागे मन अति अनुरागे एकरस रूप चित्त सकल सभाके हैं ॥ ३ ॥ जिय जिय जोरत सगाई राम लपन सो आपने आपने भाय जैसे भाय जाके हैं। प्रीति को प्रतीति को सुमिरवे को सेइवे को सरन को समरथ तुलसीहू ताकी हैं ॥ ४ ॥ ६४ ॥

जनक महाराज बूझत हैं कि हे नाथ ए दोउ बालक कोहि के हैं। ए जे नूतन तमाल औ सुंदर चंपा के बरन सम शरीर ते कौने बड़े भागी के सुकृत के फल हैं ॥ १ ॥ अब कवि की उक्ति है सुख के रासि पाए हृदय को पिधान कहैं ढपना लगावत भए भाव जब कोऊ धन पावत है तब गुप्त ठौर में तोपि कै धरत है, इहां गुप्त ठौर हृदय है, ताको पिधान देहाध्यास भूलना है, ठग के लडुआ अस खात भए अर्थात् बिख डारि कै लडुआ ठग खवावत हैं, तब खवइआ अचेत है जात है तस भए औ प्रेम रूपी मदिरा में छकि गए हैं। कहावत तो रहे स्वारथरहित परमारथी पर सनेह के विशेप वस भए तें विदेहता रहित है गए हैं। भाव सनेहविवस भए तातें स्वारथसहित औ विदेहता बिना के ताते परमारथ रहित। इहां गोसाईं जी यह जनाए कि परमार्थी के फल रूप राम है ॥ २ ॥ सकल सभा के एक रस रूप में चित्त हैं ताते लोचन ललकि के लागे औ मन अति अनुरागे ते लोचन मन शील रूप अमृत के गृह परम शोभा के समुद्र को पैरि पैरि थाके हैं पर पार नाहीं पावत हैं। शील सुधा के अगार कहिबे को यह भाव कि समुद्र सुधा को भवन है। औ यह परम शोभा रूप समुद्र शील रूप अमृत को भवन है। थाके हैं कहिबे को यह भाव कि अघाते नहीं हैं पारावार समुद्र का नाम है। "समुद्रोब्धिरकूपारः पारावारः सरित्पतिः" जाके जैसे जैसे भाव हैं तेहि भाव के अनुकूल अपने अपने जिय में राम लषन सों नाना जोरत हैं। प्रीति करिबे को विश्वास करिबे सुमिरिबे को सेवन करिबे को औ सरन जाइबे को योग्य जो ताको सिद्ध ते ताके हैं ॥ ४ ॥ ६४ ॥

राग मल्लार—ए कौन कहां ते आए। नील पीत पाथोज वरन मनहरन सुभाय सुहाये ॥ १ ॥ मुनिसुत किधौं भूप-बालक किधौं ब्रह्म जीव जग जाए। रूप जलधि के रतन सुछबि तिय लोचन ललित ललाये ॥ २ ॥ किधौं रविसुअन मदन रितुपति किधौं हरिहर वेष बनाए। किधौं आपने सुकृत सुरतरु के सुफल रावरेहि पाये ॥ ३ ॥ भए बिदेह बिदेह नेहवस देहदसा बिसराए। पुलकगात न समात हरष हिय सलिल सुलोचन छाए ॥ ४ ॥ जनकवचन मृदु मंजु मधुर भरे भगति कौसिकहि भाये। तुलसी अति आनंद उमगि उर राम लषन गुन गाये ॥ ५ ॥ ६५ ॥

श्यामपीत कमल सम वरन औ मन के हरनिहारे स्वाभाविक सुंदर जे ए ते कौन हैं औ कहां ते आए हैं ॥ १ ॥ कैधौं मुनिसुत हैं कैधौं राजा के बालक हैं। इहां मुनि के संग ते मुनिपुत्र का संदेह औ राजकुमार सम देखि राजपुत्र का संदेह वा विश्वामित्र जी के कोई पहिले के संबंधी तो नहीं हैं याते क्षत्री का संदेह कदापि अब के सम्बन्धी होहिं याते ब्राह्मण का संदेह है कैधौं जीव औ जगत को जो उत्पन्न किए जे सोई ब्रह्म हैं। मानसरामायन में स्पष्ट कारि लिखा। ब्रह्म जो निगम नेति कहि गावा। उभय वेष धरि की सोइ आवा॥ इहां अत्यंत शांत औ चमत्कार देखि ब्रह्म कहे। कोऊ अस अर्थ करत हैं कैधौं ब्रह्म जीव ही तो नहीं जगत में जन्मे हैं कैधौं रूप रूपी समुद्र के मणि हैं कैधौं ए लला सुंदर छवि रूप तिय के सुंदर लोचन हैं ॥ २ ॥ कैधौं रविसुअन कहैं हंस हैं, काऊ अस कहत कैधौं रविसुअन कहैं अश्वनीकुमार सो तो नहीं हैं, कैधौं काम वसंत हैं रूप जलधि के रत्न इहां से औ मदन रितुपति किधौं इहां लो अत्यंत रूप देखि संदेह है। कैधौं वेष बनाए भए हरि हर तो नहीं हैं। इहां अति तेजस्वी देखि हरि हर का संदेह है, कैधौं अपने सुकृत रूप कल्पवृक्ष के सुंदर फल आप ही ने

पाए हैं अर्थात् दोऊ भाइन के इहां विश्वामित्र जी को सर्वोत्कृष्ट तपस्वी जानि तप के फल रूप में संदेह है ॥ ३ ॥ नेहवस देहदसा को बिसराए ताते विदेह महाराज विदेह भए। इहां भए विदेह विदेह कहिबे को यह भाव कि अवताईं नाम मात्र रहा है सांचे विदेह आज भए हैं वा अब ताईं जगत में विदेह रहे अब ब्रह्मानन्द हूं ते विदेह भए। इहां स्वरूपानन्द की बड़ाई जानना, पुलकावली अंग में है, हृदै में हरष नहीं समात है औ नैनन ने आंसू छाए भाव जब हर्ष हृदय में न समायो तब नैन के राह बाहर भयो ॥ ४ ॥ जनक जी के सुंदर कोमल औ मीठे औ भगति भरे वचन कौशिक को भाए। गोसाईं जी कहत हैं अति आनंद जो सो हृदय ते उमगि के श्री राम लषन के गुन गावत भए अर्थात् जनक महाराज से सब कहि देत भए ॥ ५ ॥ ६५ ॥

कौसिक कृपाल हू को पुलकित तनु भो। उमगत अनुराग सभा के सराहे भाग देषि दसा जनक की कहिबे को मनु भो ॥ १ ॥ प्रीति के न पातकी दिए हू साप पाप वडो मष मिसि मेरो तब अवध गवनु भो। प्रानहू ते प्यारे सुत मागे दिये दसरथ सत्यसंध सोच सहे सूनो सो भवनु भो ॥२॥ काकसिषा सिरकर केलितूनु धनुसर वालक विनोद जातुधाननि सो रनु भो। वूझत विदेह अनुराग आचरज वस रिषिराज जाग भयो महाराज अनुभो ॥३॥ भूमि देव नरदेव सचिव परस्पर कहत हम को सुरतरु शिवधनु भो। सुनत राजा की रीति उपजी प्रतीति प्रीति भाग तुलसी के भले साहेब को मनु भो ॥ ४ ॥ ६६ ॥

कृपालु जो विश्वामित्र तिन हू को तन रोमांच युक्त भयो अनुराग उमगत भैंन सभा के भाग सराहे औ जनक जी की दसा देखि के [illegible] कहिबे को मनु भो ॥ १ ॥ अब वृत्तान्त कहत हैं पातकी ने [illegible] मे प्रीति के नहीं है औ साप दिए हू में वडो पाप है तव मख के

यहाने मे मेगे अवध में गमन भयो। भवन मूनो सो भयो शोच सहे पर मत्यमनिष्ठ जे दसरथ महाराज ते प्रान हू ते प्यारे सुत मांगिबे ते दिए॥२ निर विषे जुल्फ मात्र है अर्थात् कूंडी आदि नहीं तरकस औ हाथ में जे धनु बान ते खेलवाड़ के हैं। भाव युद्ध के नहीं औ बालविनोद से अर्थात् कोप मे नहीं औ युद्ध निशाचरन के नायकन में भयो, भाव साधारन मे नहीं। "जानूनिरक्षांमि दधानिपुरुमातीति जातुधानः। राक्षस नायक इत्यर्थः॥ अनुराग औ आश्चर्य के वस है विदेह महाराज पूछत हैं कि हे ऋषिराज यग्य भयो तब विश्वामित्र जू बोले कि हे महाराज अनुभो अर्थात् सम्यक भयो वा महाराज अनुभो है महाराज आप ही अनुभव करिए जो यग्य न पूर्ण होता तो हम आनंदपूर्वक इहां कैसे आवते ॥ ३ ॥ सुनत मात्र रघुनाथ में राजा की रीति उपजी भाव निश्चय भयो कि राजकुमार हैं ताते उपजी औ प्रीति प्रतीति उपजी भाव ऐसे राक्षसन के मारे हैं तो क्यों न धनु तोरेंगे औ ब्राह्मण राजा मंत्री परस्पर कहते हैं कि हम को शिवधनु कल्पवृक्ष भयो भाव यही शिवधनु के प्रसाद से यह दर्शन पाए। राजा की रीति कहे व्यवहार सुनत मात्र प्रतीति औ प्रीति उपजी कि भाग तुलसी के हैं कि भले साहेब को गुलाम भयो। भाव जेहि साहब के पाए ते ब्रह्मज्ञ जे जनक महाराज तेऊ अपने को कृतार्थ माने ॥ ५ ॥ ६६ ॥

चार्यो भले बेटा देव दसरथ राय के। जैसे राम लषन भरत रिपुहन तैसे सील सोभा सागर प्रभाकर प्रभाय के ॥१॥ ताडका संघारि मष राषि नीके पाले व्रत कोटि कोटि भट किए एक घाय के। एक बान बेगही उडाने जातुधान जात सूषि गए गात है पतउआ भये बाय के ॥ २ ॥ सिला छोर छुवत अहल्या भई दिव्य देह गुन पेषि पारस के पंकरुह पाय के। राम के प्रसाद गुरु गौतम षसमु भये रावरेहु सतानंद पूत भये माय के ॥ ३ ॥ प्रेम परिहास पोषे बचन परस्पर कहत सुनत सुष सबही सुभाय के । तुलसी सराहे भाग

कौसिक जनक जू की विधि के सुढर होत मुढर मुदाय वे......

हे देव हे महाराज राजा दशरथ के चारो बेटा भले हैं जैसे राम लषन तैसे भरत शत्रुहन शील शोभा के समुद्र औ प्रताप के सूर्य हैं। इहां चारो भाइन को वर्णन करि यह जनायें कि आप को अन्यत्र वर न ढूंढनो परैगो ॥ १ । ताड़कादि वध फेर कहत हैं ताड़क मारि कै यज्ञ राखे औ प्रतिज्ञा भले पाले कोटि कोटि भट एक एक चोट के किए तिन में एक चोट के जातुधानै बान के वेग से उड़ाने जात हैं ताते तिन के गात सूखि गए बवंडर के पत्ता सम भाव फिर भूतल में न आए ॥ २ ॥ शिला के कोर छुअत अहल्या दिव्य देह भई चरण कमल के पारस के गुण देखे भाव जैसे पारस के छुए लोहा सोना होत तैसे जड ते दिव्य भई श्रीराम के प्रसाद ते रावरे गुरु जो गौतम जी ते खसम भए। भाव रडुआपन छूटा औ सतानंद अपने माता के पूत भए। भाव वे महतारी के डुअर कहावत रहे सो छुटा ॥ ३ ॥ प्रेम औ परिहास तें पुष्ट भए जे सुंदर भाव के वचन परस्पर कहत हैं ते सुनत मात्र सब ही को सुख भयो। गोसांई जी कहत हैं कि कौशिक जनक जी को भाग सराहे औ कहे विधि अनुकूल से सुंदर दांव के पासा सुढार होत है इहां सुंदर पासा परना रघुनाथ का आगमन है ॥ ४॥६७ ॥

ए दोऊ दसरथ के बारे। नाम राम घनस्याम लषन लघु नप सिष चंग उज्यारे ॥ १ ॥ निज हित लागि मांगि आने मै धरम सेतु रषवारे। धीर बीर विरुदैत बांकुरे महा बाहु बल भारे ॥ २ ॥ एक तीर तकि हती ताडका किय सुर साधु सुपारे। जग्य राषि जग साषि तोषि रिषि निदरि निसाचर मारे ॥ ३ ॥ मुनितिय तारि स्वयंवर पेषन आए मुनि वचन तिहारे। राउ देषि है पिनाक नेक जेहि नृपति लाज जर जारे ॥ ४ ॥ सुनि सानंद सराहि सपरिजन वार्रहि

सिधारे ॥ ५ ॥ सोचत सत्य सनेह विवस निसि नृपहि गनत गएतारे । पठये बोलि भोर गुर के संग रंगभूमि पगुधारे ॥६॥ नगर लोग सुधिपाइ मुदित सबही सब काज विसारे । मनहुं मघा जल उमगि उदधि रुप चले नदी नद नारे ॥ ७ ॥ ए किसोर धनु घोर बहुत विलपाति विलोकनिहारे । टर्‌यो न चांप तिन्ह ते जिन्ह सुभटनि कौतुक कुधर उपारे ॥ ८ ॥ ए जाने बिनु जनक जानियत करिपन भूप हंकारे। नतरु सुधा-सागर परिहरि कत कूप पनावत पारे ॥ ९ ॥ सुपमा सील सनेह सानि मानो रूप विरंचि मँवारे । रोम रोम पर सोम काम सत कोटि वारि फेरि डारे ॥ १० ॥ कोउ कहै तेज प्रताप पुंज चितये नहि जात भियारे । छुयत सरासन सलभ जरे गो ये दिनकर वंस दियारे ॥ ११ ॥ एक कहै कछु होउ सुफल भए जीवन जनम हमारे । अवलोके भरि नयन आजु तुलसी के प्रानहुते प्यारे ॥ १२ ॥ ६८ ॥

उज्यारे कहे सुंदर ॥ १ ॥ धर्मसेतु के रक्षक धीर वीर विरदवाले बांके आजानु बांहु और भारी बल वाले जे श्री राम लपन तिन को निज हित लागि मैं मांगि आने ॥ २ ॥ ३ ॥ धनु तोरै सो वरै जानकी यह वचन सुनि नृपति लाज जरिजारे लाज रूप ज्वर ते राजनि को जिन्ह ने जारे हैं ॥ ४ ॥ सपरिजन परिवार सहित जनक जी ॥ ५ ॥ सत्य औ सनेह के विवस ते सोचत हैं । भाव न सत्य छोड़त बनत न रामसनेह। राजा को तारा गनते रात्रि गई। भाव कब विहान होयगो॥६॥ मानो मघा नक्षत्र के जल ते नदी नारे उमगि के समुद्र के ओर चले इहां सुधि पावना मघा को जल है, उदधि श्री राम को स्वरूप है, नदी नद नारे पुरवासी हैं ॥ ७ ॥ कौतुक में कुधर कहे पर्वत को जिन्ह उखारे अर्थात् रावणादि ॥ ८ ॥ हकारे बोलाए इहां सुधासागर रघुनाथ हैं औ खारा कूप प्रतिज्ञा है ॥ ९ ॥ परम शोभा शील औ स्नेह सानि

कि मानो इन के रूप ब्रह्मा ने संवारि फिरि राम राम पर मन कै
चंद्रमा औ काम नेवछावरि करि डारे ॥ १० ॥ कोऊ कहत हैं कि
भैया तेज औ प्रताप के पुंज हैं ताते निरए नहीं जात हैं। ए दिन
वंस दीपक के छुअत मात्र गरासन रूप फतिगा जरैगो ॥११॥ गोसाँ
जी कहत हैं आजु नयन भरि मान हूं ते प्यारे के अवलोके ॥१२॥६८

जनक विलोकि बार बार रघुबर को। मुनिपद
नाय आयसु असीस पाइ एई बातें कहत गवन कियो घर
को ॥ १ ॥ नींद न परत राति प्रेम पन एक भांति सोचत
सकोचत बिरंचि हरिहर को। तुम्ह ते सुगम सब देव देखिबे
को अब जसु हंस कियो जोगवत जुग पर को ॥ २ ॥ ल्याये
संग कौसिक सुनाये कहि गुनगन आए देखि दिनकर कुल
दिनकर को। तुलसी तज सनेह को सुभाउ बाउ मानो
चल दल को सो पात करै चित चर को ॥ ३॥६९ ॥

एई बाते कहत अर्थात् श्रीराम लक्ष्मण विषयक बातें कहत ॥ १ ॥
राति में नींद नाहीं परत जाते प्रेम औ प्रतिज्ञा एक भांतिहै। भाव ल्या
योग दूनो नाहीं ताते सोचत हैं औ ब्रह्मा विष्णु शिव को सकोच देत हैं
हे देव ! तुम ते सब सुगम सुनत आए सो अब देखिवे को है अब कवि
की उक्ति है कि श्री जनक महाराज अपने यस को हंस किए ताके दोऊ
पर के योगवत हैं इहां दोऊ पर प्रेम औ पन है ॥ २ ॥ कौशिक
ऐसे महात्मा अर्थात् अनहोनी करनिहारे ते संग लेआए औ रघुनाथ
के गुनगन मारीचादि वध औ अहल्या को पापान ते चैतन्य करन
कहि सुनाए औ आपो दिनकर कुल दिन कर को देखि आए । भा
जाके देख ब्रह्मानंदो भूलि गयो सो गोसाईं जी कहत हैं ताहू पर सने
को सुभाव मानों वायु है सो पीपर के पात के समान चित्त के
चल करत है ॥ ३॥६९ ॥

राग केदारा। रंगभूमि भोरे ही जाइकै। राम लख
...पि लोगलूटि है लोचन लाभ अघाइकै ॥ १ ॥ भूपभव

घर घर पुर बाहर इहै चरचा रही छाइकै। मगन मनोरथ मोद नारि नर प्रेम विबस उठै गाइकै॥ २॥ सोचत विधि गति समुझि परस्पर कहत वचन बिलखाइकै। कुअर किशोर कठोर सरासन असमंजस भयो आइकै॥ ३॥ सुकृत संभारि मनाइ पितर सुर सीस ईस पद नाइ कै। रघुबर कर धनुभंग चहत सब अपनो सो हितु चितु लाइकै। ॥ ४॥ लेत फिरत कानसुई सगुन सुभ बूझत गनक बुलाइ-कै। मुनि अनुकूल मुदित मन मानहु धरत धीरजहि धाइकै ॥ ५॥ कौसिक कथा एक एकनि सो कहत प्रभाउ जनाइ कै। सीय राम संयोग जानियत रच्यो बिरंचि बनाइकै॥६॥ एक सराहि सुबाहु मथन बर बाहु उछाह बढाइकै। सानुज राज समाज विराजिहै राम पिनाकु चढाइकै॥७॥ बडी सभा बडो लाहु बडो जसु बडो बडाई पाइकै। को सोहिहै और को लायक रघुनायकहि बिहाइकै॥ ८॥ गवनिहैं गंवहि गवाइ गरब गृह नृपकुल बलहि लजाइ-कै। भली भांति साहिब तुलसी के चलिहैं ब्याहि बजाइकै ॥ ९॥७०॥

रंग इ० सु० ॥१॥ मनोरथ जनित आनंद में नारि नर मगन हैं। प्रेम के विशेष वस हैं ताते गाय उठे ॥ २॥ शोचत इ० सु० ॥ ३॥ अपनो सो हितु चितु लाय कै अपने हित समान चित्त लगाय कै ॥४॥ कनसुई कानाफुसकी अर्थात् सलाह की बातें सुनत फिरत औ ज्योतिषी बोलाय कै शुभ सगुन बूझत अनुकूल सगुन सुनि मुदित होत हैं मानो सगुन नाहीं सुनत हैं धीरज को धाइ कै धरत हैं ॥५॥ प्रभाव जनाय कै कौशिक की कथा एक एकनि सों कहत। भाव जो नहीं होनिहार ताके करनिहारे विश्वामित्र जी हैं ताते सीताराम जू को संयोग

त्रिशंकु के सताप के हरवैया यह जानियत है ॥ ६ ॥ एक उदार बा
के सुबाहु के प्राणहारी जो रघुनाथ जी अस बाहु है ताको सराहि
करत हैं कि पिनाक तोड़ाय के अनुज सहित श्रीरामचन्द्र समाज में दी
हैं ॥ ७ ॥ यहां ह० पु० ॥ ८ ॥ नृपन के फूल कहै मयूर मनावहि
गर्व चन्द्र को संताप तजहि से अर्थात् शरद से राह की गति
॥ ९॥७० ॥

राग टोड़ी—भोर फूल बीनवे को गए फुलवाई है
सीसनि टिपारे उपवीत पीत पट कटि दोना बाम करी
सलोने से सवाई है ॥ १ ॥ रूप की अगार भूप के कुमार सु
मार गुरु के प्रान अधार रंग सियकाई है । नीच ज्यों टा
करे रूप राधे अनुजै कौसिक से कोही बस किये दुहु भा
है ॥२॥ सखिन सहित तेहि औसर विधि संजोग गिरिजा
पूजिवे को जानकी जू आई है । निरखि लखन राम जाने रि
पति काम मोहि मानो मदन मोहनो मूड़नाई है ॥ ३
राघो जू श्री जानकी लोचन मिलिवे को मोद कहिवे व
जोग न मैं बाते सी बनाई है । स्वामी सीय सखिन्ह लख
तुलसीको तैसो तैसो मनभयो जाको जैसीयै सगाई है॥४॥७

भोरहीं फूल बीनिवे को फुलवारी में गये हैं शिरन पर टोपी
औ पीत यज्ञोपवीत है और पीत पट कटि में है इहां देहली दिपक न्या
करि के पीत को दूनो के संग करना औ बाम हाथन में दोना है
सवाई सलोने भए हैं। सवाई होवे को यह भाव कि अंग आवरण री
हैं वा कदापि कोऊ आए अपने रूप से दबाय न लेय ताते सवाई भ
वा कुछ मदन महीप का भी रंग आय पड़ा है ताते वा विदेह महारा
की वाटिका की छबीली फूली फलीन ते बाम अंग भूषित है त
सवाई सलोने भए हैं सो जब कालिन ते एतना भए तब आगे न
जानते कि केतना होहिंगे वा दोना लेने से एक मुद्रा विचित्र क

ताते बनाई कहे एक तो रूप के गृह हैं भाव रूप मात्र के आधारभूत हैं ताहू पर भूप के कुमार हैं अर्थात् काहू साधारन के नहिं ताहू पर सुकुमार हैं औ गुरु के प्राण आधार हैं तथापि संग में सेवकाई करत हैं कैसे करन सो लिखत हैं नीच जैसे टहल करें तस करत औ रूप गाये काम करत हैं। कौशिक ऐसे क्रोधी को दोऊ भाइ वस किए हैं॥२॥ श्रीलखनलाल श्रीराम जू को निरखे जाने कि यह राजकुमार नहीं हैं वसंत औ काम हैं ताते मोहि गई मानो देखि न मोही काम ने मूड पर मोहनी नाई है ताते मोही ॥३॥ श्रीराघव जू औ श्रीजानकी जू के नजरि मिलबे को जो आनंद सो कहिबे योग्य नहीं है। हम ने बनाई तें ऐसी कही हैं रघुनाथ जी को औ जानकी जू को सखिन को औ खनलाल जू को औ तुलसी को जाकी जैसी सगाई है ताको तैसो न होत भयो इहां आनंद में भूलि गोसांई जू अपने को प्रत्यक्ष सम हे ॥ ४॥७१ ॥

पूजि पारवती भलै भाय पाय परि कै। सजल सुलोचन सिथिल तन पुलकित आवै न वचन मन रह्यौ प्रेम भरि कै ॥ १ ॥ अंतरजामिनि भवभामिनि स्वामिनि सोहौ कहौ चहौ बात मातु अंत तौ हौ लरि कै। मूरति कृपाल मंजु माल दै बोलत भई पूजो मनकामना भावतो बरु बरि कै॥२॥ राम कामतरु पाइ बेलि ज्यौं बोडी बनाइ माग कोपि पोषि फैलि फूलि फरि कै। रहौगी कहौगी तब सांची कही अंबा सिय गहे पांय है उठाय माथे हाथ धरिकै॥ ३ ॥ मुदित असीस सुनि सीस नाइ पुनि पुनि विदा भई देवी सो जननि डर डरि कै। हरषी सहेली भयो भावतो गावती गीत गौनी भवन तुलसी के प्रभु को हियो हरिकै॥४।७२॥

पूजि इ० सु०॥ १ ॥ अंत तो हौं लरिकै कहिबे को यह भाव कि अंतर्जामिनी सो कुछ न कहा चाहिए क्योंकि सब जानत ही हैं पर

सो निरोग प्रसन्न हैं। उत्तर युगल राजकिशोर शिरमौर की बात
सुनिये हे॥१॥ श्याम कमल औ मरकत मणि औ मेघ के वर्ण सम तन
श्रीराम जू को है औ पीत कमल औ कनक औ दामिनी के वर्ण सम
तन श्रीलक्ष्मण जू को है औ रूप को निचोर है अर्थात् उत्तमांग है
औ सहज ही दोऊ भाई सलोने हैं अर्थात् बनावट ते नहीं औ नामौं
सुंदर है जैसे सुने रहे तैसेई दोऊ भैया कुअंगन के शिरमौर हैं॥२॥
सुंदर चरण कमल औ जंघा औ ठेहुन औ उरु औ कटि औ उन्नत
स्कंध है औ बाहु बड़े जोरावर हैं। शंका। बाहन की जोरावरी कैसे
जाने। उत्तर। सुबाहु आदि को बध सुनिये तें। जंघा उरु में पुनरुक्ति
शंका नहीं करना क्योंकि जंघा नाम ठेहुन के नीचे के भाग का है औ
ठेहुन के ऊपर के भाग के उरु नाम है, जाको आज काल्हि लोग जंघा
कहत हैं। पर गोसाईं जी शास्त्र रीति ते लिखे। जंघातु प्रसृताजानूरुप-
ष्ठीवदस्त्रियाम्। सक्थिक्लीबेपुमानुरुस्तत्संधिः पुंसि वङ्क्षणः। इत्यमरः
प्रसृतौ द्वेजंघायाःजानु उरुपर्व अष्ठीवत्त्रीणिजानुनःसक्थिउरुद्वेऊरोः॥
...की भांति तरकस कसे हैं औ करकमलनि में बान धनुष हैं ते देखिवे
तो मनोहर पर कठोर हैं॥ ३॥ कानन में पुष्पाकार सोने के कुंडल
औ अनुकूल यज्ञोपवीत है अर्थात् जस क्षत्री को चाहिए औ पीत रंग
...ा वस्त्र है तामें आछे किनारे शोभत हैं अर्थात् मोती मणि आदि करि
..., कमल सम नयन औ चंद सम मुख हैं, टोपी सिरन में है, नख ते
शिखा पर्यन्त अंगन में ठौर ठौर ठगोरी अर्थात् जहां जाइ मन तहंई
लोभाई॥ ४॥ सभा जो सोई श्रेष्ठ तड़ाग औ लोग सब जो हैं सोई
कमल औ चक्रवाक के समूह हैं, ते भोर के दिनमणि रघुनाथ के
देखि प्रमुदित भए, मूढ़ मन मैले आशावाले जे महिपाल हैं ते कछु उल्लू
अर्थात् घुघुआ कछु कुमुद कोई कछुक चकोर भए। कोऊ अस कहत हैं
महिपाल जे मूढ़ ते उलूक औ जे नहीं सहनेवाले ते कुमुद औ जे मन
मैले ते चकोर भए॥ ५॥ यद्यपि बोल घन सम गंभीर हैं पर विश्वा-
मित्र ते सकुचात हैं ताते भाई ते धीरे धीरे बात कहत हैं सन्मुख सब के
हैं औ सब के भली भांति देखत हैं औ कृपा से हंसि कै तुलसी के
ओर हेरत हैं॥ ६॥ ७२॥

एई राम लषन जे मुनिसंग आए हैं। चौतनी चो
काछे सषि सोहैं आगे पाछे आछेहु तें आछे आछे आछे
भायें हैं ॥१॥ सांवरे गोरे सरीर महा बाहु महाबीर कटि
तीर धरे धनुष सुहाए हैं। देषत कोमल कल अतुल वि
वल कौसिक कोदंड कला कलित सिषाये हैं ॥ २ ॥ इ
ताडिका मारी गौतम की तीय तारी भारी भारी भूरि
रन विचलाये हैं। रिषि मष रषवारे दसरथ के दुलारे
भूमि पगुधारे जनकु बुलाये हैं ॥ ३ ॥ इन्ह के विमल
गनत पुलकित तन सतानंद कौसिक नरेसहिं सुनाये
प्रभु पद मन दिये सो समाज चित किए हुलसि हु
हिये तुलसिहु गाये हैं ॥ ४ ॥ ७४ ॥

जे राम लषन मुनि संग आए हैं ते एई हैं, हे सखी टोपी
कुरता पहिरे हैं औ आगे पाछे शोभत हैं अर्थात् आगे राम जी
लक्ष्मण जी। सुंदर हू ते सुंदर सुंदर हैं औ भला भाव जो कोई
है ताहू को भाए हैं वा भले यह भैया हैं ताते हम सब के भाए
सुंदर हू ते जो सुंदर ताहू ते सुंदर सुंदर भैया हैं ताते भाए हैं वा
भाव है जेहि को अर्थात् विश्वामित्र जी तिन के भाए भए हैं॥
देखत में सुंदर कोमल हैं पर बड़े बलवान नहीं तुलत हैं वा बहुत
हैं अतएव अतुल हैं औ विश्वामित्र जी ने सुंदर धनुर्विद्या की कला
को सिखाए हैं ॥ २ ॥ जनक जू के बोलाए ते रंगभूमि में पग
हैं इन के विमल गुन गन को पुलकित तन ते सतानंद औ विश्वा
जू नरेश को सुनाए हैं ॥ ४ ॥ ७४ ॥

रागकान्हरा—सीय स्वयंवर माई दोउ भाई आए देष
... सषी प्रमदा प्रमुदित मन प्रेम पुलकि तन मनहु म
कंजुन पेषन ॥ १ ॥ निरषि मनोहरताई सुष पाइ कहै
एक सो भूरि भाग हम धन्य आलिए दिन एषन । तुन

सहज सनेह सुरंग सब सो समाज चित्त चित्रसार लागी लेपन ॥ २ ॥ ७५ ॥

प्रमदा स्त्री पेखन कहँ देखन ॥ १ ॥ भूरि बहुत, खन कहँ क्षण, गोसाईं जी कहत हैं सो सब समाज नारिन को अपने सहज सनेह रूपी सुंदर रंग से अपने चित्त रूपी चित्रसार में लिखने लगीं ॥ २ ॥७५॥

राग गौरी —राम लषन जब दृष्टि परेरी । अवलोकत सब लोक जनकपुर मनो विधि बिबिध बिदेह करेरी ॥ १ ॥ धनुष जग्य कमनीय अवनि तलकौतुक ही भए आय परेरी । छबि सुरसभा मनहु मनसिज के कलित कल्पतरु रूप फरेरी ॥ २ ॥ सकल काम बरषत मुष निरषत करषत चित हित हरष भरेरी । तुलसी सबै सराहत भूपहिं भले पैत पासे सुढर ढरेरी ॥ ३ ॥ ७६ ॥

री सखी जब ते राम लषन दृष्टि परे तब ते जनकपुर के लोग देखत हैं अर्थात् एकटक देखत हैं । मानो विधाता ने अनेकन विदेह किए हैं । भाव विदेह महाराज के डाह ते, इहां विदेह कहिबे ते सब को देहाध्यास रहित जनाए ॥ १ ॥ धनुप यज्ञ के सुंदर जो भूमि तल है तामें कौतुकही आय के खड़े भए हैं । मानो धनुप यज्ञ की सुंदर भूमि नहीं है छवियुक्त सुरसभा जो सुधर्म्मा सो है औ श्रीराम लपन नहीं हैं काम के शोभित कल्पवृक्ष हैं औ राम लपन का जो रूप है सो रूप नहीं है तेहि कल्पवृक्ष को फल है । इहां दुइ कल्पवृक्ष जानना ॥२॥ मुख निरखत मात्र में सकल कामना को वरपत हैं इहां कल्पवृक्ष ते अधिक जनाए क्योंकि कल्पवृक्ष छाया के नीचे गए फल देत हैं औ ए देखत मात्र औ हर्ष भरे जेहि तन के चित्त तेहि को कर्षत हैं वा यद्यपि चित्त चोरावत हैं तथापि हित मानि हर्ष भरे वा चित को तो चोरावत हैं पर हित ते हर्ष भरत हैं । गोसाईं जी कहत हैं कि जनक महाराज के सब सराहत हैं कि भले दाव के पासे सुंदर परे हैं । भाव जो पन किए ताको भलो फल पाए ॥ ३ ॥ ७६ ॥

नेकु सुमुखि चितु लाइ चितौरी। राजकुअर मूरति रचिवे की रुचि सुचि विरंचि श्रमु कियो है कितौरी ॥ १ ॥ नख सिख सुंदरता अवलोकत कह्यो न परत सुख होत तितौरी। सांवर रूप सुधा भरिवे कहु नयन कमल कल कलस रितौरी ॥ २ ॥ मेरे जान इन्हहि बोलिबे कारन चतुर जनक ठयो ठाठ इतौरी। तुलसी प्रभु भंजिहै संभुधनु भूरि भाग सिय मातु पितौरी ॥ ३ ॥ ७१ ॥

अरी सुमुखि तनक चित लगाय के देखु। ब्रह्मा ने राजकुंअर की मूरति रचिवे की रुचि ते केतनो श्रम कियो है। नख ते सिख लौं सुंदरताई के अवलोकत जेतना सुख होत है तेतना कहि नहिं परत। सांवर रूप जो कोई अमृत है ताको भरिवे को सुंदर नयन कमल रूप कलश को खाली करो। इहां और ओर न देखनो खाली करना है॥२॥ मेरे जान चतुर जनक ने इन्हें बोलिवे कारन इतो ठाट ठयो है। तुलसी के प्रभु शंभुधनु तोरिहैं। भूरिभाग जानकी जू के माता औ पिता के हैं ॥ ३॥७७ ॥

राग सारंग। जब ते राम लषन चितयेरी। रहे एकटक नर नारि जनकपुर लागत पलक कलप बितयेरी ॥१॥ प्रेम बिबस मागत महेस सो देषत ही रहिये नितएरी। कै ए सदा बसहु इन्ह नयनन्हि कै नयन जाहु जितयेरी॥२॥ कोउ समुझाइ कहै किन भूपहिं बडे भाग आए इतयेरी। कुलिस कठोर कहां संकरधनु मृदु मूरति किसोर कितए री ॥ ३ ॥ विरचत इन्हहिं विरंचि भुवन सब सुंदरता षोजत रितए री। तुलसिदास ते धन्य जनम जन मन क्रम वच जिन्ह के हित ए री ॥ ४॥७८ ॥

जब ते इ० सुगम ॥ ४॥ ७८ ॥ टिप्पणी—नर नारियों को पलक गाने का समय एक कल्प के समान मालूम होता है अर्थात् वे लोग पलक

निमिषे भर के लिये भी राम लखन का दर्शन नहीं छोड़ना चाहते ॥१॥ प्रेम के विशेष वश होकर महेश से मांगते हैं कि ये यहीं रहें वा जहां जायें वहां मेरे नेत्र भी जायें ॥ २ ॥ ब्रह्मा ने इन की सुन्दरता बनाते समय भुवन भर की सुन्दरता लिये अर्थात् खाली कर दिये। तुलसी दास जी कहते हैं कि जिन के मन वच कर्म से ये हित हैं उन के जन्म धन्य हैं ॥ ४ ॥ ७८ ॥

सुनु सखि भूपति भलोइ कियो री। जेहि प्रसाद अवधेस कुअँर दोउ नगर लोग अवलोकि जियो री ॥ १ ॥ हानि प्रतीति कहूँ मेरे ते कत संदेहवस वारत हियो री। तीनों है यह संभुसरासन श्री रघुबर जौलौं न लियो री ॥ २ ॥ जेहि बिरंचि रचि सीय संवारी अरु रामहि ऐसो रूप दियो री। तुलसिदास तेहि चतुर विधाता निजकर यह संयोग सियो री ॥ ३॥७८ ॥

सुन इ० सु० ॥ ७९ ॥ टिप्पणी–तुलसीदास जी कहते हैं कि जिस ब्रह्मा ने सीता को संवारा और राम को ऐसा रूप दिया है उसी चतुर विधाता ने यह संयोग (दोनों का मेल वा विवाह) भी सियो कहँ सीया अर्थात् रचा है ॥ ३॥७६ ॥

अनुकूल नृपहि सूलपानिहैं। नीलकंठ कारुन्यसिन्धु हर दीनबंधु दिनदानिहैं ॥ १ ॥ जो पहिलेहि पिनाक जनक को गए सौंपि जिय जानिहैं। बहुरि त्रिलोचन लोचन के फल सबहि सुलभ किये आनिहैं ॥ २ ॥ सुनियत भव भावते राम हैं सिय भावती भवानि हैं। परिषत प्रीति प्रतीति पयजपनु रहे काज ठटु ठानिहै ॥ ३ ॥ भये बिलोकि विदेह नेहबस बालक बिनु पहिचानिहै। होत हरे होने बिरवनि दल सुमति कहति अनुमानिहै ॥ ४ ॥ टेपियत

कारयुक्त यद्यपि नहीं बोलत हैं ॥ ५ ॥ भानि हैं तोरि हैं ॥ ६ ॥ सकल सुमंगल के खानि हैं ताते नारि नर व्याह उछाह देखिहैं ॥ ७ ॥ ८० ॥

राग केदारा—रामहि नीके कै निरखि सुनयनी । मनसहु अगम समुझि यह अवसरु कत सकुचत पिकबयनी ॥१॥ बड़े भाग मखभूमि प्रगट भई सीय सुमंगल अयनी । ताकारन लोचन गोचर भइ सूरति सब सुख दयनी ॥२॥ कुलगुरु तिय के वचन मधुर सुनि जनक जुवति मति पयनी । तुलसी सिथिल देह सुधिबुधि करि सहज सनेह बियबनी ॥ ३॥८१ ॥

श्री सतानन्द की पत्नी सुनैना जू से कहति हैं कि श्रीराम को नीके निरखहु हे पिकबैनी मनो ते अगम अर्थात् श्रीराम हैं अस समुझि के फिर कत सकुचति हौ ॥ १ ॥ सीय सुमंगल को गृह बड़े भाग्य ते यज्ञ भूमि में प्रगट होती भई जा कारण ते सब सुख देनिहारी मूरति नैनन की विषै भई। श्रीमद्रामायणे विश्वामित्रं प्रति जनकवाक्यम्। "अथ मे कृपतः क्षेत्रं लांगलादुत्थिता ततः। क्षेत्रं शोधयता लब्धा नाम्नासीतेति विश्रुता" अथेति वृत्तान्तरारम्भे क्षेत्रं यागभूमिम् मम कृपतः मयि कर्षति अग्निचयनार्थमितिशेषः ऋषभेण कर्षतीत्यादिशास्त्रात् लाङ्गलादुत्थिता आविर्भूता यज्ञक्षेत्रं शोधयता सीताः लाङ्गलपद्धतेर्मया लब्धा तती नाम्ना सीतेति प्रसिद्धा। पाद्मे च। "अथ लोकेश्वरी लक्ष्मीर्जनकस्य पुरे स्वतः शुभक्षेत्रे हलोत्खाते तारेचोत्तरफाल्गुने अयोनिजा पद्मकरा बालार्कशतिसन्निभा सीतामुखे समुत्पन्ना बालभावेन सुन्दरी। सीतामुखोद्भवात् सीता इत्यस्या नाम चाकरोत्।" भविष्येच। "सर्वर्तुनिकरश्रेष्ठे कर्त्तां तु कुसुमाकरे। मासि पुण्यतमे विप्र माधवे माधवप्रिये॥ नवम्यां शुक्लपक्षे च वासरे मङ्गले शुभे। सार्पर्क्षे च मध्यान्हे जानकीजनपालये॥ आविर्भूता स्वयं देवी योगेषु गतिरुत्तमा"॥२॥ श्री जनक जू की रानी सुनैना जू जानि की घोपी हैं सो कुलगुरु तिय के मधुर वचन सुनि के सहज सनेह विंदनी सुद्धि करि जो देह के और ते शिथिल भई रहीं सो तेहि की सुधि

भूपर मोर की से उडगन गरन गरीव गलानि है। तेज प्रताप
बढत कुअंरन को जदपि सकोचो वानि है ॥५॥ वय किस
वरजोर वाहुं वल मेरु मेलि गुन तानि है। अवसि रा
राजीव विलोचन मंग सरासन भानिहैं ॥ ६ ॥ देषिहैं व्या
उछाह नारि नर सकल सुमंगलषानि हैं। भूरिभाग तुलसी
तेउ जे सुनिहैं गाइहैं वजाइहैं ॥ ७॥८० ॥

नेत्र ॥ १ ॥ दुअन दुष्ट, जनकपुर रूप आकाश में प्रभु को सुजस रूप विमल चंद अब उगा चाहत है ॥ २ ॥ ८२ ॥

रागटोडी । राजा रंगभूमि आजु बैठे जाइ जाइकै। आपने आपने थल आपने आपने साज आपनी आपनी वर बानिक बनाइकै ॥ १ ॥ कौसिकसहित राम लषन ललित नाम लरिका ललाम लोने पठए बुलाइकै। दरस लालसा बस लोग चले भाय भले बिकसत मुष निकसत धाइ धाइकै ॥२॥ सानुज सानंद हिए आगे ह्वै जनक लिये रचना रुचिर सब सादर देषाइकै। दिये दिव्य आसन सुपास सावकास अति आछेआछे बोछे बोछे बिछौना बिछाइकै ॥३॥ भूपति-किसोर दुहु ओर बीच मुनिराउ देषिबे को दाउ देषो देषिबो बिहाइकै । उदय सयल सोहैं सुंदर कुअर जोहै मानो भानु भोर भूरि किरनि छपाइकै ॥ ४ ॥ कौतुक कोलाहल निसाय गान पुर नभ बरषत सुमन सुबिमान रहे छाइ कै। हित अनहित रत विरत बिलोकि बाल प्रेम मोद मगन जनमफल पाइकै ॥ ५ ॥ राजा की रजाइ पाइ सचिव सहेली धाइ सतानंद ल्याए सिय सिविका चढाइकै। रूप दीपिका निहारि मृग मृगी नर नारि बिथके बिलोचन निमेषै बिस-राइकै ॥ ६ ॥ हानि लाहु अनप उछाहु बाहुबल कहि बंदी बोलि बिरद अकस उपजाइकै। दीप दीप के महीप आये सुनि पैजपनु को जै पुरुषारथ को औसर भोआइकै ॥ ७ ॥ आनाकानो कठहंसी मुहाचाही होनलागी देषि दसा कहत बिदेह बिलपाइकै। घरनि सिधारिऐ सुधारिए आगिलै काज पूजि पूजि धनु कीजै बिजय बजाइकै ॥ ८ ॥ जनक

करत भई भाव श्रीराम के ध्यान में जो लगी रहीं सो प्रत्यक्ष
लगीं ॥३॥८१॥

मिलो वरु सुंदर सुंदरि सीतहि लायक सांवरो, सुभ
सोभाहू को परम सिंगारु। मनहू को मन मोहै उपमा को
आन कोहै सुषमा सागर संग अनुज राजकुमारु ॥१॥
ललित सकल अंग तनु धरें की अनंग नैननि को फलु कैधौं
सिय को सुकृत सारु। सरदसुधासदन छबिहि निंदै बदन
अरुन आयत नव नलिन लोचन चारु ॥ २ ॥ जनक मन की
रीति जानि बिरहित प्रीति ऐसी औ मूरति देखे रह्यो
पहिलो बिचारु। तुलसी नृपहि ऐसो कहि न बुझावै कोउ
पन औ कुअर दोऊ प्रेम की तुला धौं तारु ॥ ३॥८२ ॥

सुंदरी सीतहिं लायक शोभाहूं को परम सिंगार सुभग सांवरो बर
मिलो उपमा को उपमा देइवे को ॥ १ ॥ की अनंग कैधों कामदेव सार
फल सुधासदन चन्द्रमा आयत विस्तृत नव नलिन नवीन कमल चारु
सुंदर ॥ २ ॥ श्रीजनक के मन की रीति जानकी प्रीति ते बिरहित रहित
है काहे ते कि ऐसिउ मूरति देखे पर पहिलोही बिचार रह्यो। भाव
नेमिए रहे प्रेमी न भए। महाराज को ऐसो कहि के कोऊ नहीं बुझाव
है कि प्रतिज्ञा औ रघुनाथ कुअर इन दोउन को प्रेम की तुला पर धरि
के तौलो भाव कौन गरू है ॥ ३॥८२ ॥

देषि देषि री दोउ राजसुअन। गौर स्याम सलोने लोने
लोयननि जिन की सोभा ते सोहै सकल भुअन ॥ १ ॥ इन्ह
ही ताडका मारी मग मुनितिय तारी रिषिमष राष्यो रन
दले है दुअन। तुलसी प्रभु को अब जनक नगर नभ सुजस
बिमल बिधु चहत उअन ॥ २॥८३ ॥

इहां देषि देखि देउ देखु के अर्थ में है। लोने लोयननि सुंद

भूमि के हरैया उपरइया भूमि धरनि के विधि बिरचे प्रभाउ जाको जग जई है। बिहंसि हिय हरषि हटके लषन राम सोहत सकोच सील नेह नारि नई है ॥ ३ ॥ सहमी सभा सकल जनक भए बिकल राम लषि कौसिक असीस आज्ञा दई है। तुलसी सुभाय गुरु पाय लागि रघुराज ऋषिराज की रजाइ माथे मानि लई है ॥ ४ ॥ ८५ ॥

लछिमन जी की उक्ति है भूपति बिदेह ने जो भई है सो कही ताते ठीक है आंक एक ही कहैं निश्चय करि हांकिं कहैं ललकारि कै ॥ १ ॥ प्रतिज्ञा की मर्यादा और भांति ते सुनि गई है। अर्थात् जो तोरे सो वरै कदापि यह नहीं होता तो भूमि के हरैआ औ भूमिधरन के उखरैआ को जीतनिहार जेहि को प्रभाव जगत में विधि बिरचे हैं तेहि उतरे चाप को प्रभु के प्रताप ते चढ़ाइ कै अपने बल को देखाय देते पर याको फल पापमई है। भाव बड़े के रहते छोटे का प्रथम विवाह होना अनुचित है अर्थात् छोटा बड़ा दोऊ देव पितर के काम लायक नहीं रहत तथाच स्मृतिः "दाराग्नि होत्रसंयोगं कुरुतेयो ऽग्रजे स्थिते। परिवेत्ता सविज्ञेयः परिवित्तिस्तु पूर्वजः ॥" यह कहनो अनुचित रहा पर मेरो कहनो अनुचित नहीं है क्योंकि लरिकाई बस कहत हौं ॥२॥ हृदय में हरषि के मुसुकाय के श्री राम जू लखन को बरजे तब संकोच शील औ नेह ते श्री लखन लाल की नारि कहैं गर्दन नई भई सोहैं।३।४।८५

सोचत जनक पोच पेच परि गई है। जोरि कर कमल निहोरि कहै कौसिक सों आयसु भो राम को सो मेरे दुचितई है ॥ १ ॥ बान जातुधानपति भूप दीप सातहू के लोकप बिलोकत पिनाक भूमि लई है। जोतिलिंग कथा सुनी जाको अंत पाये बिनु आये बिधि हरि हारि सोई हाल भई है ॥ २ ॥ आपुही बिचारिए निहारिये सभा की गति बेदमरजाद मानो हेतुबाद हई है। इन्ह के किसोरै मन

वचन छुए बिरवा लजारू कैसे बीर रहे सकल सकुचि सिरनाइ-कै। तुलसी लषन माषे रोषे राखे रामरुख भाषे मृदु परुष सुभाय न रिसाइकै ॥ ९ ॥ ८४ ॥

राजा इ० आपनेर थल कहैं अपने अपने दरजा के माफिक वाने वेष ॥ १ ॥ ललाम सुंदर विकसतमुख प्रसन्नमुख ॥ २ ॥ सानुज कुशकेतुसहित बीछे बीछे चुने चुने ॥ ३ ॥ देखिबो बिहाय कै और ओर देखिबो छोड़ि कै मानो दिव्य आसन नहीं है उदयाचल है ता पर सुंदर कुँअर जो हैं सो मानो भोर के सूर्य हैं सो अपना सब कि[रन] छपाय कै सोभत हैं। इहां किरिन प्रताप है ॥ ४ ॥ रत अनुरागी वि[रत] विरागी ॥ ५ ॥ श्रीजानकी जू के रूप रूपी दीपक को देखि कै मृ[ग] मृगी सदृश नर नारि एकटक ह्वै थकित भए ॥ ६ ॥ न टूटिबे ते बल प्रताप बीरता की हानि औ टूटिबे ते 'त्रिभुअन जै समेत बैदेही' को लाभ 'जेहि पिनाक बिनु नाक किए नृप' अनख 'धनु तोरै सो बरै जानकी' उछाह 'राजसमाज आज जेहि तोरा' बाहुबल ए सब काहि के रावन-बानासुरो भागि गए, यह कहना अकस उपनावना है। पैंज पन अति-प्रतिज्ञा ॥ ७ ॥ आना कानी इसारा से अर्थात् पिनाक के ओर बतावन लगे कठहंसी बेहंसी आए हँसब को कहत हैं। मुहांचाही पहिले तुम उठो पहिले तुम उठो अस कहन लगे ॥ ८ ॥ छुए से जैसे लजारू को बिरवा सकुचै तैसे श्रीजनक के वचन से सकल वीर सिरनाय के सकुचि रहे। लछिमन जू अमरखे औ रोखयुक्त भए श्रीरघुनाथ को रुख राखे स्वाभाविक रिसाय कै नहीं कठोर औ कोमल वचन भाषे ॥ ९॥८४ ॥

भूपति बिदेह कही नीकीऐ जो भई है। बड़ेही समाज आजु राजनि की लाज पति हांकि आंक एकही पिनाक छीनि लई है ॥१॥ मेरो अनुचित न याहत लरिकाईवस पन [प]रमिति और भांति सुनि गई है। नतरु प्रभु प्रताप उतरु [च]ढाए चांप देतो पै देखाइ बल फल पापमई है ॥ २ ॥

तो जितहिं मन आदि आप के भरोसा के बल सों है, कैधौं कोऊ देवता हैं छलते मनुष्य घने हैं, कैधों अपने कुल के प्रभाव से अर्थात् सूर्यवंशी हैं तेहिते तेजयुक्त हैं, कैधौं लरिकाई अर्थात् कुछ आगे पीछे को विचार नहीं है कन्या सुंदर, कीर्ति औ विश्व की विजय बटोरिवे कों, कैधौं विधाता ने इनही को निर्मान कियो है ॥ ४ ॥ हे नाथ हम को अपने प्रतिज्ञा करने को मोह नहीं है और को को कहै सीता हू की विशेष चिंता नहीं है। कदापि विश्वामित्र जू पूछें कि क्यों नहीं है तापर कहत हैं कोई सोई काटिहैं जोई जोई जेहि ने बोया है। भाव जीव कर्मवस दुख सुख भागी है पर नीकी नीकी जो रघुनाथ की निकाई है सो वनी रहै। यह वात की विशेष चिन्ता है, सो आप के हाथ है, आप कैसे हैं कि करनी नई है। भाव आजु लो ब्रह्मा छोडि सृष्टि कोऊ न करि सके सो आप किए तो यह कौन बड़ी वात है वा आप अनहोनी करनिहार हैं ॥ ५ ॥ विश्वामित्र जू ने आप की वात साधु है साधु है अस कहि के राजा को सराहे फिर कहे कि हे महाराज आप के जिय को जानी आप ने भला ठहराय राखा है। भाव रघुनाथ की निकाईए में सब की भलाई है। यह श्री जनक श्री विश्वामित्र को सम्वाद सुनि लपन हर्ष औ विलखाने भए जो लोग रहे सो हर्षाने। गोसाईं जी कहत हैं कि यह आश्चर्य नहीं है जाको जई राजा राम हैं सोई मुदित होत हैं, भाव और के रोअतै रोअत जन्म वीतत है ॥ ६॥८६ ॥

सुजन सराही जो जनक बात कही है। रामही सुहानी जानि मुनि मन मानी सुनि नीच महीपावली दहन विनु दही है ॥ १ ॥ कहैं गाधिनंदन मुदित रघुनंदन सों नृप गति अगह गिरा न जाति गही है। देषे सुने भूपति अनेक झूठे झूठे नाम साचे तिरहुति नाथ साषो देत मही है ॥ २ ॥ रागउ विराग भोग जोग जोगवत मनु जोगो जागवलिक प्रसाद सिधि लही है। ताते न तरनि तें न सीरे सुधाकरहू तें सहज समाधि निरुपाधि निरवही है ॥ ३ ॥ ऐसेउ अगाध

सोभा अधिकानी तन सुषम की सुषमा सुपद सरसई है ॥३॥ रावरो भरोसो बलु कैहै कोऊ किये छल कैधों कुल के प्रभाव कैधौ लरिकई है। कन्या.काल कीरति विजय विश्व की बटोरि कैधौं करतार इन्द ही को निरमई है ॥४॥ पन की न मोर न विसेष चिंता सीता हू की लुनि है पै सोई सोई बोई जैहि बई है । रहै रघुनाथ की निकाई नीकी नीकी नाथ हाथ सो तिहारे करतूति जाकी नई है ॥ ५ ॥ कहि साधु साधु गाधिसुअन सराहे राउ महाराज जानि जिय ठीक भली दई है। हरषे लखन हरषाने विलषाने लोग तुलसी मुदित जाको राजाराम जई है ॥ ६ ॥ ८६ ॥

सोचत इ० । जनक जू सोचत हैं कि कठिन पेच परि गई है। भाव यह प्रतिज्ञा जो किया सो भला नहीं किया। जनक महाराज हस्तकमल जोरि कै निहोरा करि विश्वामित्र जू सो कहत हैं कि आप ने जो रघुनाथ को आज्ञा दिया तामें हम को दुचिताई है, अब दुचिताई को हेतु कहत हैं ॥१॥ बाणासुर रावण औ सातो दीप के राजा औ लोकपालन के देखत ही पिनाक ने भूमि को लई है अर्थात् भूमि को पकड़ि लई है। जोतिलिङ्ग को अंत नहीं है। यह कथा मुनि के अंत लेइवे को ब्रह्मा ऊपर को गये औ विष्णु जू पाताल को गये पर तेहि लिंग को अंत न पाये। ब्रह्मा विष्णु हारि फिरि आए सोई हाल इहां भई है, भाव पिनाक केतना भारी हैं याको अंत कोऊ नहीं पावत है। ब्रह्मा विष्णु हारि गए लिंग का अंत न मिला यह काशीखंड में लिखा है ॥ २ ॥ हमारे ही कहने पर नहीं आप भी विचारिए और सभा की दसा देखिए कि फँसी है रही है जैसे वेद के मर्याद को नास्तिक वाद नासत है। भाव तस पिनाक ने श्रीहत करि दिया है। अब श्रीराम का वर्णन करते हैं कि श्रीराम के मन निर्लोह है औ तन में शोभा अधिकाय रही है औ मुख की सुन्दर शोभा सरसाय रही है। इहां इन्द के औ सुरा नए शो बहु बचन शब्द हैं सो आदर में हैं या दोऊ मात्न में लगाय लेना ॥३॥

पधीन निरवान को। विनु गुन की कठिन गांठ जड चेतन की छोरी अनायास साधु सोधक अपान को ॥ ३ ॥ सुनि रघुवीर को वचन रचना की रीति भए मिथिलेस मानो दीपक विहान को। मिट्यौ महामोह जी को छूट्यो पोच सोच सी को जान्यो अवतार भयो पुरुष पुरान को ॥ ४ ॥ सभा नृप गुर नर नारि पुर नभ सुर सव चितवत सुष करुनानिधान को। एकहि एक कहत प्रगट एक प्रेमवस तुलसीस तोरिए सरासन ईसान को ॥ ५ ॥ ८८ ॥

श्रीरघुनाथ की उक्ति ऋषि इ०। हे रिषिराज आजु श्रीजनक समान राजा को है, काहे ते कि आप एहि भांति ते प्रीति सहित सराहियत है तो रागी औ विरागिन के मध्य में वड़भागी ऐसो आन को है ॥ १ ॥ भूमि भोग करत अर्थात् राज भोग तो करत हैं पर वाही में जोग सुख को अनुभवत हैं। इन की गति मननशील जे मुनि तिन हूं के अगम है और को जाने। गुरु औ हर के पद में नेह है, जाको घर में रहि के विदेह है रहे हैं। निर्गुन औ सगुन रूप प्रभु के भजन में अस आन कौन सयान है ॥ २ ॥ कहनि रहनि सव एक भांति की है वैराग्य ज्ञान औ राजनीति सव वेद वुध संमत है इन को, औ मोक्ष के पथिक हैं अर्थात् स्वर्गादि के नहीं जो विनु गुन की कठिन गांठि जड़ चेतन की है ताको वेपरिश्रम छोरि डारी है औ अपने स्वरूप को साधु कहैं भली भांति सोधक हैं ॥ ३ ॥ दीपक विहान को कहिवे को यह भाव कि अपनी वड़ाई सुनि सकुचे ॥ ४ ॥ नृप जनक महाराज गुरु विश्वामित्र जू औ पुर के नर नारि ॥ ५ ॥ ८८ ॥

राग मारू—सुनो भैया भूप सकल दै कान। वज्ररेष गजदसन जनकपन वेदविदित जग जान ॥१॥ घोर कठोर पुरारिसरासन नाम प्रसिद्ध पिनाकु। जो दसकंठ दियो वावों जेहि हरगिरि कियो मनाकु ॥ २ ॥ भूमि भाल भ्राजत

बोध रावरे सनेह बस बिकल बिलोकियत दुचितई सही है। कामधेनु कृपा हुलसानी तुलसोस उर पन सिसु हेरि मर-जादा बांधी रही है ॥ ४॥ ८७ ॥

जो श्री जनक जू की कही बात है ताको सुजनों ने सराही औ मुनि की मन मानी भई बात है अस जानि श्रीराम को सोहात भई पर सो बात सुनिं के नीच जो महिपावली है सो बिनु अग्नि के जरि जात भई ॥ १ ॥ गाधिनंदन रघुनंदन सों हर्षित कहत हैं कि मिथिलेश की गति गहिवे जोग नहीं है ताते बातहू नहीं गही जात है। नाम मात्र के झूठे झूठे अनेक भूपति देखे पर सांचे भूपति तिरहुतिनाथ ही हैं या बात की साक्षी पृथ्वी देति है, भाव कन्या उपजाय कै ॥ २ ॥ प्रीति औ वैराग्य भोग औ जोग सब महाराज के मन को जोगवत हैं भाव जेहि के ओर तनिक दृष्टि करत सो शीघ्र हाजिर है जात है। जोगी जावलिक के प्रसाद ते यह सिद्धता को लही है। ताते सूर्य ते तप्त नहीं होत हैं औ और को को कहै चन्द्रमो ते शीतल नहीं होत हैं, उपाधि रहित स्वाभाविक समाधि को निर्वाह करत हैं। वायु आदि वस करि जो समाधि सो उपाधि सहित ॥ ३ ॥ हे श्रीराम जू आप के सनेह के वस ऐसेऊ अगाध बोध वाले जनक महाराज कों विकल विलोकियत है ताते अस जानि परत है कि इन के मन में निश्चै दुचितई है, यह मुनि के मतिहारूपी बछरा को देखि कै कृपारूपी कामधेनु रघुनाथ के उर में हुलसानी पर विश्वामित्र जू की आज्ञा रूप मर्जादा में बांधी है तातें ठहर गई ॥ ४॥८७ ॥

रिमिराज राजा आजु जनकसमान को । आपु एहि भांति प्रीति सहित सराहियत रागो औ बिरागो बड़भागी ऐसो आन को ॥ १ ॥ भूमि भोग करत अनुभवत जोग सुप मुनिमन अगम अलख गति जान को। गुर हर पद नेह गेह बसि भो बिदेह अगुन सगुन प्रभु भजन सयान को ॥२॥ कहनि रहनि एक बिरति बिबेक नोति बेद बुध संमत

रंक होय ॥ ३ ॥ महा महा बल बीर जो रहे सो अपनो सो किए अर्थात् जेतना पाक्रम रहा तेतना किए पर चांप न टरेउ। महा महा बल बीरन को चांप अपनो सो कियो अर्थात् जड ॥४॥५॥ जहँ तहँ महीप मुरे कहँ जहां ते उठे रहे तहं फेरि आइ बैठे ॥ ६ ॥ फुरे फरके ॥७।८॥ बयों कहँ कैसे मृनाल कमलदण्ड, अनुग सेवक ॥ ९ ॥ १० ॥ अयन गृह, मृगपति सिंह ॥ ११ ॥ ८९ ॥

जबहि सब नृपति निरास भए। गुरुपद कमल बंदि रघुपति तब चांप समीप गये ॥ १ ॥ स्याम तामरस दाम बरन बपु उर भुज नयन बिसाल। पीत बसन कटि कलित कंठ सुंदर सिंधुरमनिमाल ॥ २ ॥ कल कुंडल पल्लव प्रसून सिर चारु चौतनी लाल। कोटि मदन छबि सदन बदन बिधु तिलक मनोहर भाल ॥ ३ ॥ रूप अनूप बिलोकत सादर पुरजन राजसमाजु। लषन कह्यौ थिर होहिं धरनि-धरु धरनि धरनिधर आजु ॥ ४ ॥ कमठ कोल दिगदंति सकल अँग सजग करहु प्रभु काजु। चहत चपरि सिवचांप चढावन दसरथ को जुवराजु ॥ ५ ॥ गहि करतल मुनि पुलक सहित कौतुकहि उठाइ लियो। नृपगन मुखनि समेत नमित करि सजि सुष सबहि दियो ॥ ६ ॥ आकरष्यो सिय मन समेत हरि हरष्यो जनक हियो। भंज्यो भृगुपति गर्ब सहित तिहुलोक बिमोह कियो ॥ ७ ॥ भयो कठिन कोदंड कोलाहल प्रलय पयोद समान। चौंके सिव बिरंचि दिसिनायक रहे मूदि कर कान ॥ सावधान ह्वै चढे बिमानन चले बजाइ निसान। उमगि चल्यौ आनंद नगर नभ जय धुनि मंगलगान ॥८॥ बिप्रबचन सुनि सषी सुआसिनि चली जानकिहि ल्याइ। कुअँर निरषि जयमाल मेलि उर

न चलत सो ज्यों बिरंचि को आंकु। धनु तोरै सोइ बरै जानकी राउ होइ की रांकु ॥३॥ सुनि आमर्षि उठे अवनी-पति लगे बचन जनु तीर। टरै न चांप करैं अपनी सो महा महा बल बीर ॥ ४ ॥ नमित सीस सोचहि सलज्ज सब श्रीहत भए सरीर। बोले जनक बिलोकि सीय तन दुखित सरोष अधीर ॥ ५ ॥ सप्त दीप नव खंड भूमि के भूपति वृंद जुरे। बड़ो लाभु कन्या कीरति को जहँ तहँ महिप मुरे ॥६॥ डग्यो न धनु जनु बीर बिगत महि किधौं कहुं सुभट दुरे। रोषि लषन बिकट भृकुटी करि भुज अरु अधर फुरे ॥ ७ ॥ सुनहु भानु कुलकमल भानु जो अब अनुसासन पावौं। कौ बापुरो पिनाकु मेलि गुन मंदर मेरु नवावौं ॥ ८ ॥ देखै निज किंकर को कौतुक क्यौं कोदंड चढावौं। लै धावौं भंजौं मृनाल ज्यौं तौ प्रभु अनुग कहावौं ॥ ९ ॥ हरषे पुर नर नारि सचिव नृप कुअर कहे बर बैन। मृदु मुसुकाइ राम बरज्यो प्रिय बंधु नयन दै सैन ॥ १० ॥ कौसिक कह्यौ उठहु रघुनंदन जगबंदन बल ऐन। तुलसि दास प्रभु चले मृगपति ज्यौं निज भगतनि सुखदैन ॥ ११ ॥ ८९ ॥

बंदी की उक्ति सुनो इ० । बज्र पर की रेखा जैसे नहीं मिटति औ हाथी के दांत जैसे फेर भीतर नहीं जात तस जनक महाराज की प्रतिज्ञा है वेद में विदित है औ सब जग जानत है कि पुरारि को सरासन अति कठोर है, जाको पिनाक अस नाम प्रसिद्ध है। जो पिनाक पै रावण पावँ दियो अर्थात् सनमुख न भयो, जेहि रावन ने कैलास पै लघु कियो अर्थात् हेला सम उठाय लियो ॥ १ ॥ २ ॥ भाल पर भ्रान जो बिरंचि को अंक है सो जैसे नहीं चलत तैसे भूमि ते नहीं चल्त है तेहि धनु को जो तोरै सो राजकुमारी को बरै, चाहै राजा होय चा

ए। उठे राम रघुकुल कल केहरि गुरु अनुसासन पाए ॥
३ ॥ कौतुकही कोदंड षंडि प्रभु जय अरु जानकि पाई।
तुलसिदास कीरति रघुपति की मुनिन्ह तिहुं पुर गाई ॥४॥८१॥

जब इ० जब दोऊ चक्रवर्ती कुमार कों देखे तब देखि करि जनक-
पुर के नर नारि अपने निमेष (पलक) कों रोके औ मुदितमन भए १ ते
दोऊ राजकुमार कैसे हैं किशोर अवस्था औ मेघ औ तड़ित सम तन
के वरण हैं औ नष ते सिष लों सब अंग लोभावनिहारे हैं कै हितु कहं
प्रीति करि सब जगत के छवि रूप धन लै कै चित्त दै कै ब्रह्मा ने
अपने हाथ ते संवारे हैं जिन को ॥२॥ देखि कै श्रीजनक महाराज कों
त्रास भयो अर्थात् काहू को अस मण किया औ श्रीजानकी जी को
अतिसोच भयो औ राजा सब सकुचाय कै सिर नवाये भाव ए दोऊ
भाई तेजस्वी देखि परत हैं कदापि इन से धनु उठा तो हम लोगों कै
मुह में मसि लगी। तब गुरु अनुसासन पाए तें सुंदर जो रघुकुल है
तिन में श्रेष्ठ जो श्रीराम सो उठे ॥ ३॥४॥ ९१ ॥

राग टोडी। मुनि पद रेनु रघुनाथ माथे धरी है। राम-
रूप निरषि लषन की रजाइ पाइ धराधर धरनि सुसावधान
करी है ॥ १ ॥ सुमिरि गनेस गुर गौरि हर भूमिसुर सोचत
सकोचत सकोचो बान धरी है। दीनबंधु कृपासिंधु साह-
सिक सीलसिंधु सभा की सकोच कुलहू की लाज परी है
॥ २ ॥ पेषि पुरुषारथ परषि पन प्रेम नेम सीय सोय की
विशेषि बडो परभरो है। दाहिनो दियो पिनाकु सहमि
भयो मनाकु महाव्याल विकल विलोकि जनु जरी है ॥ ३ ॥
सुर हरषत बरषत फूल बार बार सिद्ध मुनि कहत सगुन
शुभ घरी है। रामबाहु बिटप बिसाल बोंडी देषियत
जनकमनोरथ कलपबेलि फली है ॥ ४ ॥ लष्यो न चढावत
न तानत न तोरतहूं घोर धुनि सुनि सब की समाधि टरी

कुंवरि रही सकुचाइ ॥ १० ॥ बरषहि सुमन असीसहिं सुर मुनि प्रेम न हृदय समाइ । सीय राम की सुंदरता पर तुलसिदास बलि जाइ ॥ ११॥९० ॥

जबहिं इ० सु० ॥१॥ तामरस कमल दाम समूह कटि कलित कटि में धारन किए सिंधुरमानि गजमुक्ता ॥ २ ॥ कल सुंदर चौतनी टोपी, कोटि मदन छवि सदन कोटि काम के छवि के गृह ॥ ३ ॥ धरनिधर शेष, धरनी पृथ्वी धरनिधर पर्वत ॥ ४ ॥ कच्छप शूकर भगवान दिग्गज सकल अंग ते सजग होय के प्रभु कै काज करहु भाव कोई अंग ते ढीला होहुगे तो न सम्हारि सकोगे चपरि उत्साह करि ॥ ५ ॥ गहि इ० आकर्षेउ इ० यह दूनो तुकन को भाव नाटक के अनुसार है। "उत्क्षिप्तं सह कौशिकस्य पुलकैः सार्द्धं मुखैर्नामितं भूपानां जनकस्य संशयधिया सार्कं समास्फालितम् । वैदेहीमनसा समं च सहसाकृष्टं ततो भार्गवप्रौढाहंकृतिदुर्मदेन सहितं तद्भग्नमैशं धनुः" अस्यार्थः अथ धनुर्भंगे नानारसानुभावात् चित्ररसं दर्शयितुं पद्यमवतारयाति उत्क्षिप्तमिति कौशिके वत्सलरसोजातः अत्र हर्षः संचारी हर्षात्पुलकाः सात्विका इति ज्ञानम् । भूपे भयानकरसः अत्र दैन्यं संचारी दैन्यादेवमुखनमनम् अत्र भीषणा त्रिविधा तत्प्रभावेनैव रामे भीषणत्वं जनके करुणारसोजातः अत्र ग्लानिः संचारी सा चाधे जाता आध्यनुभावः संशयइति ज्ञानं वैदेह्यां मधुररसोजातः मनआकर्षणमेवात्रानुभावः रामे वीररसः अत्र स्पर्द्धोद्दीपनं सा परशुरामागतोतिज्ञानम् अत्र सर्व्वरसानामुद्दीपनविभावोरामएव ॥६॥७॥ कोलाहल महाशब्द, पयोद मेघ दिसिनायक दिक्पाल ॥ ८ ॥ निसान नगारा ॥ ९ ॥ विप्र सतानंद ॥ १० ॥ ११ ॥ ९० ॥

राग मलार—जब दोउ दशरथकुंअर बिलोके । जनकनगर नर नारि मुदित मन निरखि नयन पल रोके ॥ १ ॥ बय किसोर घन तड़ित बरन तन नख सिख अंग लुभारे । दै चितु कै चितु लै सब छवि चितु बिधि निज हाथ सवारे ॥ २ ॥ संकट नृपहि सोच पति सीतहि भूप सकुचि सिर

कारपरसत टूट्यो जनु हुतो पुरारि पढायो ॥ २ ॥ पहि-
जयमाल जानकी जुवतिन्ह मंगल गायो । तुलसी सुमन
। हरषे सुर सुजस तिहु पुर छायो ॥ ३ ॥ ८३ ॥

राम इ० सु० ॥१॥ हुतो पुरारि पढ़ायो भाव श्रीशिव जी पढ़ाय
रहे कि श्रीराम के छुअते टूटि जाना ॥ २ ॥ ३ ॥ ९३ ॥

राग टोड़ी—जनक मुदितमन टूटत पिनाक के । बाजे
धावने सुहावने मंगल गान भयो सुप एकरस रानी
। रांक के ॥ १ ॥ दुंदुभी बजाइ गाइ हरषि बरषि फूल
गन नाचे नाचे नायकहू नाक के । तुलसी महीस देषि
। रजनीस जैसे सूने परे सून से मनो मिटाये
क के ॥ २ ॥ ८४ ॥

जनक इ० रांक दरिद्र ॥ १ ॥ नाक के नायक इन्द्र, दिन में जैसे
ा देखि परत हैं तैसे राजा सब देखि परे अब दूसरी उपमा कहत
ासे अंक के मिटाए सुन्न सूना परत है अर्थात् बे हिसाब है जात है
भए ॥ २ ॥ ९४ ॥

लाज तो न साजि साज राजा राड रोषे हैं । कहा
चाप चढाए ब्याहु ह्वै है बडे पाये बोलै पोलै सेल असि
रकत चोषे हैं ॥ १ ॥ जानि पुरजन त्रसे धीर दै लषन
ते बल इन्द्र के पिनाक नीके नापे जोंषे हैं । कुलहि लजावै
ल बालिस बजावै गाल कैधौ क्रूर काल बस तमकि
दोषे हैं ॥ २ ॥ कुअर चढाई भौंहैं अब को बिलोकै सोहैं
हां तहां भे अचेत षेत कैसे धोषे हैं । देषि नर नारि कहैं
ाग पाइ जाए माय बाहु पीन पावरनि पीना पाय पोषे हैं
३ ॥ प्रमुदित मन लोक कोकनद कोकगन राम के प्रताप

है। प्रभु के चरित चारु तुलसी सुनत सुख एक ही है, प्रभु
सब ही की हानि हरो है ॥ ५॥८२ ॥

विश्वामित्र जू के चरण की धूरी रघुनाथ ने माथ पर धरी है।ए रघु
नाथ की रुप देखि के श्री लछिमन जू आज्ञा दिए । "दिसि कुंजरहु
कमठ अहि कोला। धरहु धरनि धरि धीर न डोला" ॥ सो आज्ञा
के धराधर जो कच्छपादि सो भूमि को थिर करी है भाव लघु कन्
सी डगमगाय उलटि न जाय ॥ १ ॥ अब जानकी जू की सार
कहत हैं कि गणेश गुरु गौरी हर भूमिसुर को सुमिरि के सोचती है
"कहं धनु कुलिसहु चाहि कठोरा। कहँ स्यामल मृदु गात किसोरा
विधि केहि भांति धरौं उर धीरा। सिरस सुमन कन बेधिअ हीरा"।
औ देवतन को संकोच देत हैं कि आप लोगन की बुद्ध संकोची कर
है भाव संकोच में परि के जे न होनिहार ताहू के करनिहार हैं हे दीन
बंधु कृपासिंधु हे साहसिक अर्थात् शीघ्र कार्य सिद्ध करैया औ हे करु
के समुद्र हम को सभा को संकोच औ कुल हू की लाज परी है मन
चित्त तो चाहत है कि बिनु धनु तोरे जयमाल डार देउं पर आजु है
अस हमारे कुल में काहू कन्या ने नहीं किया है, यह जो सिय हिय है
विशेष खरभरी है ताको औ राजन को पुरुषारथ देखि के औ
जनक जू को प्रेम को नेम औ प्रतिज्ञा की परीक्षा करि के श्रीराम
पिनाक को दहिना दियो अर्थात् प्रदक्षिण कियो डरि के पिनाक
है जात भयो जैसे जरी को देखि के सर्प विकल होय सिकुर जात। देव
हर्षित संत वार वार फूल वर्षत हैं औ सिद्ध सगुन औ मुनि शुभ
कहत हैं पुनि सिद्धादि कहत हैं कि श्रीरामबाहु रूप विशाल
श्रीजनक जू की मनोरथ रूपी कल्पलता जो फैली रही ताको फल
देखिअत है ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ एक ही सुंदर लाभ ने सब ही की हानि
को हरन करी है ॥ ५ ॥ ८२ ॥

रागसारंग—राम कामरिपुचाप चढ़ायो । मुनि
पुलक आनंद नगर नभ निरखि निसान बजायो ॥ १ ॥ जेहि
पिनाक बिनु नाक किये नृप सबहि विषाद बढ़ायो । सीय

जयमाल इ०। जलजकर करकमल जयमाला महुआ औ दूब की है। "एवं तयोक्ते तमवेक्ष्य किंचिद्विस्रंसिदूर्वाकमधूकमाला। ऋजुमप्रणामक्रिययैव तन्वी प्रत्यादिदेशैनमभाषमाणा" इति रघुवंशे॥ १॥ लह लहे आनंदयुक्त॥ २॥ ३॥ इहां श्रीरघुनाथ तमाल हैं मरालपांति जयमाल है॥ ४॥ खुनुस खांसी खई है क्रोध रूप छईवाली खांसी रोग है॥ ५॥ निज निज वेद के आशीर्वाद के मंत्र से आशीर्वाद दिए॥ ६॥ ९६॥

राग केदारा। लेहु री लोचननि को लाहु। कुंअर सुंदर साँवरो सखि सुमुखि सादर चाहु॥ १॥ खंडि हरकोदंड ठाढे जानु लंबित बाहु। रुचिर उर जयमाल राजति देत सुख सब काहु॥ २॥ चितै चित हित सहित नख सिख अंग अंग निबाहु। सुकृत निज सियरामरूप बिरंचि मतिहि सराहु॥ ३॥ मुदित मन बर बदन सोभा उदित अधिक उछाहु। मनहुँ दूरि कलंक करि ससि समर सूद्यो राहु॥४॥ नयन सुखमा अयन हरत सरोज सुंदर ताहु। बसत तुलसीदास उर पुर जानकी को नाहु॥ ५॥९७॥

लेहु इ०। हे सखि हे सुमुखि आदर सहित चाहु कहैं देखु॥१॥ जानु लंबित बाहु आजानु बाहु॥ २॥ नख ते सिख लौं जो सब अंग अंग का निबाह है अर्थात् सब अंग जस चाही तस है तिन को प्रीत सहित चित दै चितै के अपना सुकृत औ सियराम को रूप औ ब्रह्मा की बुद्धि की सराहना करु॥ ३॥ हर्षित मन है औ उछाह करि श्रेष्ठ बदन की शोभा अधिक प्रकाशित है मानो शशि ने कलंक को दूरि करि समर में राहु को मारयो है इहां राहु पिनाक है॥ ४॥ ५॥ ९७॥

राग सारंग। भूप के भाग की अधिकाई। टूट्यो धनुष मनोरथ पूज्यो बिधि सब बात बनाई॥१॥ तब ते दिन दिन उदो जनक को जब ते जानकि जाई। अब यह व्याह सुफल

रवि सोच सर सोपे हैं। तब के दपैया तोपे तवकी लो
भलि अब की सुनैया साधु तुलसीहू तोपे हैं॥ ४॥८५

लाज इ०। लाज तो नहीं है पर राजा जे राड हैं ते युद्ध के
साजि के क्रोधयुक्त भए हैं। आपुस में कहत हैं चांप चढ़ायें तें
भयो यह विवाह बड़े खाए ते होइगो अस बोले मिआन से
तरवार खींचि लिए औ सांग लिए चमकि रहे हैं अर्थात् राजा सब
वाल वालिस मूर्खों ते मूर्ख तमकि त्रिदोखे हैं त्रिदोष के वस अक
करि रहे हैं॥ २॥ ३॥ रघुनाथ के प्रताप रूपी सूर्य ने सोच
सर को सोखि लिए ताते लोक रूप कमल औ चक्रवाक गन हर्षे॥४

जयमाल जानकी जलजकार लई है। सुमन सुमं
सगुन की बनाई मंजु मानहु मदन माली आपु निरमई
॥ १॥ राज रूप लषि गुर भूसुर सुआसिनिन्हि समय समा
की ठवनि भली ठई है। चली गान करत निसान बा
गहगहे लहलहे लोयन सनेह सरसई है॥ २॥ हनो दे
दुंदुभी हरषि वरषत फूल सुफल मनोरथ भो सुष सुचितई है
परजन परिजन रानी राउ प्रमुदित मनसा अनूप रामरू
रंग रई है॥ ३॥ सतानंद सिष सुनि पाय परि पहिराई मा
सिय पियहिय सोहत सो भई है। मानस ते निकसि विसा
सुतमाल पर मानहु मराल पांति वैठी बनि गई है॥ ४।
हितन को लाह की उछाह की विनोद मोद सोभा कै
अवधि नहीं अब अधिकई है। याते विपरीति अनहित
को जानि लीवी गति कहे प्रगट पुनस खायी भई है॥ ५॥
निज निज वेद की सप्रेम जोग छेम मई मुदित असीस वि
विदुषनि दई है। छवि तेहि काल की क्रपाल सीता दूलह कै
हुलसत हिए तुलसी के नित नई है॥ ६॥८६॥

राम लषन घर करि मुनिमषरषवारी। सो तुलसी प्रिय मोहि लागि है ज्यों सुभाय सुत चारी ॥ ४ ॥ १०० ॥

ऋषि इ० । वशिष्ट जू औ मंत्री सब विचार में विचच्छन रहे पर अवरेब को काहू ने समुझि के न सुधारी ॥ १ ॥ सुरारी राक्षस ॥२॥ कातरि विह्वल ॥ ३ ॥ ४ ॥ १०० ॥

जब ते लै मुनि संग सिधाये। राम लषन की समाचार सषि तब ते कछु अनपाये ॥१॥ विनु पानही गवन फल भोजन भूमि सयन तरुछाहीं। सर सरिता जल पान सिसुन के साथ सुसेवक नाहीं ॥ २ ॥ कौसिक परमकृपाल परमहित समरथ सुपद सुचाली। बालक सुठि सुकुमार सकोची समुझि सोच मोहि आली ॥ ३ ॥ वचन सप्रेम सुमित्रा की सुनि सब सनेह बस रानी। तुलसी आइ भरत तेहि औसर कही सुमंगल बानी ॥ ४॥१ ॥

जबते इ० सु० ॥१॥२॥सकोची कहिवे को यह भाव कि संकोच ते कछु न कहैंगे ॥ ३॥४॥१०१ ॥

सानुज भरत भवन उठि धाए । पितुसमीप सब समाचार सुनि मुदित मातु पहि आए ॥ १ ॥ सजल नयन तन पुलक अधर फरकत लषि प्रीति सुहाई। कौसल्या लिए लाइ हृदय वलि कही कछु है सुधि पाई ॥ २ ॥ सतानंद उपरोहित अपने तिरहुतिनाथ पठाए। पेम कुसल रघुवीर लषन की ललित पत्रिका ल्याए॥ दलि ताडका मारि निसिचर मष राषि विप्रतिय तारी। दै विद्या लै गए जनकपुर हैं गुरु संग सुपारी ॥ ४ ॥ करि पिनाकुपन सुता स्वयंवर सजि नृप कटक बटोरयो। राजसभा रघुवर म्रनाल

भयो जीवन विभुवन विदित वडाई ॥ २ ॥ वार वार ऐहैं पहुनाई राम लपन दोउ भाई । एहि आनंद मगन पुरवासिन्ह देहदसा विसराई ॥ ३ ॥ सादर सकल विलोकत, रामहिं काम कोटि छवि छाई । एह सुप समउ समान एक सुप क्यौं तुलसी कहै गाई ॥ ४ ॥ ९८ ॥

भूप इ० । सुगम ॥ ९८ ॥ टिप्पणी—उदो कहैं उदय वृद्धि, जाई कहैं जन्मी ॥२॥ पुरवासी श्रीरघुनाथ बार२ पहुनाई में जनकपुर आवेंगे और हम लोग दर्शन करेंगे इस आनंद में देह की सुधि भूले हैं ॥ ३ ॥

राग सोरठ—मेरे बालक कैसे धौं मग निवहहिंगे । भूष पियास सीत स्रम सकुचनि क्यौं कौसिकहिँ कहहिँगे ॥ १ ॥ को भोरही उवटि अन्हवैहैं काढि कलेऊ दैहै । को भूषन पहिराइ निछावरि करि लोचनसुप लैहै ॥२॥ नयन निमेषनि ज्यौं जोगवै नित पितु परिजन महतारी । ते पठए रिपिसाथ निसाचर मारन मषरपवारी ॥३॥ सुंदर सुठि सुकुमार सुकोमल काकपच्छधर दोऊ । तुलसी निरषि हरषि उर लैहौं विधि ह्वै है दिन सोऊ ॥ ४ ॥ ९९ ॥

माता की उक्ति मेरे इ० । सकुचनि संकोच ते ॥१॥ २ ॥३॥ काकपक्ष जुल्फ ॥ ४ ॥ ९९ ॥

रिषि न्रप सीस ठगौरी सी डारी । कुलगुरु सचिव निपुन नेवनि अवरेव न समुझि सुधारी ॥ १ ॥ सिरिससुमन सुकुमार कुअर दोउ सूर सरोप सुरारी । पठए विनहि सहाय पयादेहि केलियान धनु धारी ॥ २ ॥ अति सनेह कातरि माता कहै सपि सषि वचन दुपारो । बादि वीर जननी जीवन जग छत्रजाति गति भारी ॥ ३ ॥ जो कहिहै फिरि

भयो जीवन विभुवन विदित वडाई ॥ २ ॥ बार बार ऐहैं पहुनाई राम लषन दोउ भाई । एहि आनंद मगन पुरबासिन्ह देहदसा विसराई ॥ ३ ॥ सादर सकल विलोकत रामहिं काम कोटि छवि छाई । एह सुष समउ समान एक सुष क्यौं तुलसी कहै गाई ॥ ४ ॥ ८८ ॥

भूप इ० । सुगम ॥ ९८ ॥ टिप्पणी—उदो कहँ उदय इति, जाँ कहँ जन्मी ॥२॥ पुरवासी श्रीरघुनाथ बार२ पहुनाई में जनकपुर आवेंगे और हम लोग दर्शन करेंगे इस आनंद में देह की सुधि भूले हैं ॥ ३ ॥

राग सोरठ—मेरे बालक कैसे धौं मग निबहहिंगे । भूष पियास सीत स्रम सकुचनि क्यौं कौसिकहिं कहहिंगे ॥ १ ॥ को भोरही उवटि अन्हवैहैं काढ़ि कलेऊ दैहै । को भूषन पहिराइ निछावरि करि लोचनसुष लैहै ॥२॥ नयन निमेषनि ज्यौं जोगवै नित पितु परिजन महतारी । ते पठए रिषिसाथ निसाचर मारन मषरषवारी ॥३॥ सुंदर सुठि सुकुमार सुकोमल काकपच्छधर दोऊ । तुलसी निरषि हरषि उर लैहौं विधि ह्वै है दिन सोऊ ॥ ४ ॥ ८९ ॥

माता की उक्ति मेरे इ० । सकुचनि संकोच ते ॥१॥ २॥३॥ काकपक्ष जुलफ ॥ ४ ॥ ९९ ॥

रिषि नृप सीस ठगौरी सी डारी । कुलगुरु सचिव निपुन नेवनि अवरेव न समुझि सुधारी ॥ १ ॥ सिरिससुमन सुकुमार कुअर दोउ सूर सरोष सुरारी । पठए विनहि सहाय पयादेहि केलिबान धनु धारी ॥ २ ॥ अति सनेह कातरि माता कहै लषि मषि वचन दुषारी । बादि बीर जननी जीवन जग छत्रजाति गति भारी ॥ ३ ॥ जो कहिहै फिरे

राग केदारा। मन में मंजु मनोरथ होरी। सो हर गौरि
ाद एक ते कौसिक कृपा चौगुनो भो री ॥ १ ॥ पन परि-
प चापचिंता निसि सोच सकोच तिमिर नहिं थोरी।
व कुल रवि अवलोकि सभा सर हितचित वारिज बन
कसो री ॥ २ ॥ कुंअर कुंअरि सब मंगल मूरति नृप दोउ
म धुरंधर धोरी। राज समाज भूरिभागी जिन्ह लोचन
हु लह्यौ इक ठौरी ॥ ३ ॥ व्याह उछाह राम सीता को
कृत सकेलि बिरंचि रचोरी। तुलसिदास जानै सोई यह
र जाके उर वसति मनोहर जोरी ॥ ४॥१०४ ॥

मन इ०। मिथिला के सखिन की उक्ति है। री सखी जो
में एक मनोरथ रह्यो अर्थात् श्री जानकी जी को विवाह को सो
: गौरी के प्रसाद औ कौसिक की कृपा ते चौगुनो भयो। भाव चारो
ज कुमारिन को व्याह देखिवे में आयो ॥ १ ॥ प्रतिज्ञा करिवे को
। परिताप औ चाप की गरुआई की जो चिंता सोई रात्रि रही औ
हि करि जो सोच औ संकोच सोई तेहि राति की घनी अंधिआरी
ी तेहि करि हितनि के चितरूपी कमल सभारूपी तड़ाग में संपुटित
ए रहे ते रविकुल रवि जो श्रीराम तिन को देखि कै प्रफुल्लित भए
२॥३॥४॥१०४ ॥

राजत राम जानकी जोरी। स्याम सरोज जलद सुंदर
र दुलहिनि तडित बरन तन गोरी ॥१॥ व्याह समय सोहति
वितानतर उपमा कहुं न लहति मति मोरी। मनहु मदन
मंजुल मंडप महं छवि सिंगार सोभा सोउ थोरी ॥२॥ मंगल-
मय दोउ अंग मनोहर ग्रथित चूनरी पीत पिछोरी। जनक
कलस कहुं देत भांवरी निरखि रूप सारद भइ भोरी ॥ ३ ॥
मुदित जनक रनिवास रहसवस चतुर नारि चितवहि टन

ज्यौं सम्भुसरासन तोर्यौ ॥ ५ ॥ यों कहि सिथिल सनेह बंधु दोउ अंबु अंक भरि लीन्हे। बार बार मुख चूंबि चारु मनि बसन निछावरि कीन्हे ॥ ६ ॥ सुनत सुहावनि चारु अवध घर घर आनंद बधाई। तुलसिदास रनिवास रहस बस सखी सुमंगल गाई ॥ ७॥१०२ ॥

सानुज इ० पद सुगम ॥ १०२ ॥

राग कान्हरा। राम लषन सुधि आई बाजै अवध बधाई। ललित लगन लिपि पत्रिका उपरोहित कै कर जनक जनेस पठाई ॥ १ ॥ कन्या भूप बिदेह की रूप की अधिकाई। तासु स्वयंबर सुनि सबै आए देस देस के नृप चतुरंग बनाई ॥ २ ॥ पन पिनाक पवि मेरु ते गरुता कठिनाई। लोकपाल महिपाल बान बान दूत दसमुख सकै न चांप चढ़ाई ॥ ३ ॥ तेहि समाज रघुराज के मृगराज जगाई। भंजि सरासन संभु जग जय कल कीरति तिय तियमनि सिय पाई ॥ ४ ॥ पुर घर घर आनंद महा सुनि चाह सुहाई। मातु मुदित मंगल सजै कहै मुनिप्रसाद भए सकल सुमंगल माई ॥ ५ ॥ गुरुआयसु मंडप रच्यौ सब साज सजाई। तुलसिदास दसरथ बरात सजि पूजि गनेसहि चले निसान बजाई ॥ ६॥१०३ ॥

राम इ०। जनेस राजा ॥ १ ॥ २ ॥ प्रतिज्ञा किया भया जो पिनाक है सो मेरु ते अधिक गुरु है औ बज्र ते अधिक कठिन है बान बाणासुर ॥ ३ ॥ तेहि समाज में रघुराज के मृगराज जो श्रीराम तिन को जगावत भए अर्थात् जगाए सावधान भए "धीर बिहीन मही मैं जानी" इत्यादि बचन ते जिन्हों ने संभु को सरासन तोरि के जगत मैं जय आदि पाई ॥ ४ ॥ इहां चाह को अर्थ वार्ता है ॥ ५ ॥ इहां गनेस के पूजन हेतु मंडप बनाए ॥ ६॥१०३ ॥

ी जो विनिआ सो रति काम ने पाई। शिला जो वालि तेहि के
ति काम पाई "उञ्छः कणश आदानं कणाद्यर्जनंशीलम्" इति
ोशे। ४।१०६॥

ैसे ललित लषन लाल लोने। तैसिवै ललित उर्मिला
र लषत सुलोचन कोने॥ १॥ सुषमा सारु सिंगारु
कारि वानक रचे है तेहि सोने। रूप प्रेम परमिति न
कहि वियकिरही है मतिमौने॥ २॥ सोभासील सनेह
वनो समउ केलि गृह गौने। देषि तियन के नयन सफल
तुलसिदास हुं के होंगे॥ ३॥ १०७॥

जैसे इ०॥ १॥ परम सोभा को सारांश औ शृंगार को सोना
के तेहि सोना ते लषनलाल औ उर्मिला जू को बनाए। भाव
ा के सारांश ते लषनलाल को औ शृंगार के सारांश ते उर्मिला
ा रूप औ प्रेम के अवधि हैं ताते कही नहीं परति है। विशेष थकि
ति मौन है रही है श्री उर्मिला जू को श्याम बरण है ताते शृंगार
ारांश कहे "हिरण्यवर्णा सीता स्यान्मण्डवी पाटलप्रभा उर्मिला
वर्णाभा श्रुतिकीर्तिः समप्रभा" इति नारदपञ्चरात्रे "पाटलः श्वेतरक्त-
ावर्णः"॥२॥ केलिगृह कोहवर जावे को समै को शोभा शील
ुंदर सनेह जो है ताको देखि कै तियन के नैन सुफल भए तुल-
ास को अब होनिहार है॥ ३॥१०७॥

राग विलावल—जानकीवर सुंदर माई। इंद्र नीलमनि
म सुभग अंग अंग मनोजनि बहु छवि छाई॥ १॥ अरुन
न अंगुली मनोहर नष दुतिवंत कछुक अरुनाई। अंज
ानि पर मनहु भौम दस बैठे अचल सुसदसि बनाई॥ २॥
ा जानु उर चारु जडित मनि नूपुर पद काल सुघरं
ाई। पीत पराग भरे अलिगन जनु जुगल जलज लषि
सोभाई॥ ३॥ किंकिनि वानक कंज अवली मृदु मरकत

तोरी। गान निसान वेद धुनि मुनि सुर बरषत सुमन
फाके फोरी॥४॥ नयनन को फल पाइ प्रेमबस सकल
ईस निहारी। तुलसी जेहि आनंद मगन मन क्यों
बरनै मुप सोरो ॥ ५ ॥ १०५ ॥

राज इ० ॥ १ ॥ ब्याह के समै में दूल्ह दुलहिन मंडप में
हैं तिन की उपमा हमारी मति कतहू नहीं पावति है। मानो
सुंदर मंडप के तरे छवि रूप दुलहिन औ शृंगार रूप दूलह हैं,
कहते नहीं बनत है क्योंकि इन की शोभा थोड़ी है अर्थात् आनंद
सम नहीं ॥ २ ॥ दुलहिन दूलह को सब अंग मंगल मै औ
पीत पट को चूनरी के संग ग्रंथिबंधन भयो है ॥ ३ ॥ राम
॥ ४ ॥ री सखी जेहि आनंद में मन डूबि गयो ताको जिह्वा कैसे
॥ ५॥१०५ ॥

दूलह राम सिया दुलही री। घन दामिनि
हरन मन सुंदरता नप सिप निबही री ॥ १ ॥ ब्याह
बसन बिभूषित सपि अवलो लषि ठगि सि रही री।
जनम लाहु लोचनफल है इतनोइ लह्यो आजु सही री
सुषमा सुरभि सिंगार छीर दुहि मयन अमियमय
दही री। मथि मापन सियराम संवारे सकल भुवन छवि
मही री ॥ ३॥ तुलसिदास जोरी देषत सुष- सोभा
जाति कही री। रूपरासि बिरची बिरंचि म
रति काम लही री ॥ ४ ॥ १०६ ॥

॥ दूलह इ० ॥ १ ॥ २ ॥ उपमा
वन भै काम रूप अहीर ने अमृत
त्यादि वे काढ्यो ताको श्री
गई ॥ जो माठा है अर्थात्
मन हेतु बंदी राखि मानो

सिखरि मध्य जनु जाई। गई न उपर सभीत नमित मु
खिकसि चहूं दिसि रही लोनाई ॥ ४ ॥ नाभि गभीर उद
रेखा बर उर भृगु चरनचिन्ह सुखदाई। भुज प्रलंब भूख
अनेक जुत बसन पीत सोभा अधिकाई ॥ ५ ॥ जज्ञोपवीत
विचित्र हेममय मुक्ता माल उरसि मोहि भाई। कंदु तडि
त बिच जनु सुर पति धनु निकट बलाक पांति चलि आई॥
कंबु कंठ चिबुकाधर सुंदर क्यौं कहौं दसनन की रुचिराई।
पदुम कोस महं बसि बज्र मानो निज संग तडित अरुन रुचि
लाई ॥ ७ ॥ नासिका चारु ललित लोचनभ्रू कुटिल कचनि
अनुपम छबि पाई। रहे घेरि राजीव उभय मानो चंचरीक
कछु हृदय डेराई ॥ ८ ॥ भाल तिलक कंचन किरीट सिर
कुंडल लोल कपोलनि झाई। निरखहिं नारि निकर बिदे
हपुर निमि नृप की मरजाद मिटाई ॥ ९ ॥ सारद सेस संभु
निसि बासर चिंतत रूप न हृदय समाई। तुलसिदास सठ
क्यौं करि बरनै यह छबि निगम नेति कहि गाई ॥१०॥१०८॥

जानकी ई०। सखी प्रति सखी की उक्ति अरी माई जानकी के
सुंदर हैं, मरकत मणि सम स्याम है औ सुंदर सब अंग अंगनि में
अनेक कामन की छवि छाय रही है ॥ १ ॥ लाल चरण है अंगुरी मन
हरनिहारी है, नख द्युतिवंत जे है ते कछुक अरुनाई लिए हैं। मानों
कमल दलनि के ऊपर सुंदर अचल सभा बनाइके दश मंगल के तारे
बैठे हैं ॥ २ ॥ जानु पुष्ट हैं औ सुंदर जंघा हैं औ चरण में मनिन से
जड़ित सुंदर सोने के नूपुर हैं सो सुंदर शब्द करत हैं सो नूपुर नहीं
हैं पुष्पन के पीत धूरी नें भरे भंवर के समूह हैं मानो युगल चरण रूप
युगल कमल को देखि के लोभाय के रहि गए हैं ॥ ३ ॥ सोनन की
किंकिनी नहीं है कमल कलिन की पांति है। सो मरकत सिखर के मध्य
में मानों उत्पन्न भई है। इहां मरकत सिखर श्री रघुनाथ हैं, मध्यभाग

कटिदेश है ते किंकिनी रूप कली सब डर ते ऊपर न गई। नीचे मुख करि विकसीं तिन के विकसने की सुंदरताई चहुं दिशि छाय रही ॥४॥५॥ उर में विचित्र सुवर्ण मय जनेऊ औ मोतिन की माला जो है सो हम को भाई, मानो स्याम मेघ विजुरी के बीचि इन्द्र धनुष है तेहि के निकट बकुलन की पांति चली आई है। इहां मेघ श्रीराम हैं औ पीत बसन विजुरी है, सुरपति धनु यज्ञोपवीत है, मोती की माला बकपांति है ॥ ६ ॥ शंखसम कंठ है, ठोड़ी औ ओठ सुंदर है औ दांतन की रुचिराई कैसे कै कहौं अर्थात् कहिवे योग्य नहीं है। मानो कमल के कोश में हीरागण अपने संग में विजुरी औ सूर्य की सुंदराई लिए बसे हैं वा सुंदर ललाई रूप तडिता को लिए बसे हैं। लाल रंग की विजुरी भी लिखी है ॥ ७ । सुंदर नासा सुंदर लोचन टेढी भौंह औ जुल्फन ने उपमा रहित छवि पाई है, मानों नेत्र नहीं हैं युग कमल हैं, भौंह औ जुल्फ नहीं हैं भौंरन के समूह हैं, ते भ्रमरगण कछु हृदय में डेराइके युगल नेत्र रूप कमल कों घेरि रहे हैं। भाव ताते बैठत नहीं हैं। इहां डरावनिहारी पलक रूप पंखा है ॥८॥ लोल चंचल झांई परिछाहीं,-निकर समूह, निमिकुल की मरजादा मिटाई अर्थात् एकटक ते निरखहिं ॥ ९॥१०॥१०८ ।

राग कान्हरा। भुजनि पर जननी वारि फेरि डारी। क्यों तोर्‌यो कोमल कर कमलनि संभुसरासन भारी ॥ १ ॥ क्यों मारीच सुबाहु महा बल प्रबल ताडका मारी। मुनिप्रसाद मेरे राम लषन की विधि बडि करवर टारी ॥ २ ॥ चरन रेनु लै नयननि लावति क्यौं मुनिबधू उधारी। कहौ धौं तात क्यौं जीति सकल नृप बरी है बिदेहकुमारी ॥३॥ दुसह रोष मूरति भृगुपति अति नृपति निकर षयकारी। क्यौं सौंप्यो सारंग हारि हिय करिहै बहुत मनुहारी ॥ ४ ॥ उमगि उमगि आनंद विलोकति वधुन सहित सुतचारी। तुलसिदास [illegible]मगन महतारी ॥५॥ १०९॥

भुजन इ० हाथ चहुं ओर भुजन पर फिरायके जननी ने न्यो-छावरि करी ॥ १ ॥ जब रघुनाथ सकोच वस उत्तर न दिए तब आप ही समाधान करति हैं कि मुनि के प्रसाद तें मेरे राम लखन की विधाता ने अनेक अल्पायु टारी ॥ २ ॥ चरणरेणु को नयनन में लगाइवे को यह भाव कि विरह करि नेत्र संतप्त रहे तिन को शीतल करति हैं। अब फेरि अधिक प्रेम करि पूछति हैं कि कैसे अहल्या को तारी ॥ ३ ॥ खयकारी क्षयकारी, मनुहारी मनावन ॥ ४ ॥

मुदित मन आरती करै माता। कनक वसन मनि वारि-वारि वर पुलक प्रफुल्लित गाता ॥ १ ॥ पालागन दुलहिनिहि सिखावति सरिस सासु सत साता। देहिं असीस ते बरिस कोटि लगि अचल होउ अहिवाता ॥ २ ॥ राम सीय छवि देखि जुवति जन करहिं परस्पर बाता। अब जान्यो साचेहु सुनो सखि कोविद बडो विधाता ॥ ३ ॥ मंगल गान निसान नगर नभ आनंद कह्यो न जाता। चिरजीवहु अवधेस सुवन सब तुलसिदास सुखदाता ॥ ४॥११० ॥

इति श्री रामगीतावल्यां बालकाण्डः सम्पूर्णः ॥

मुदित इ०सु० ॥१॥ श्री कौशल्या जू दुलहिनिन को अपने सरिस सातौ सै सासुन को पैलगी करिबे को सिखावति हैं ॥ २ ॥ विधाता बड़ा पण्डित है कहिबे को यह भाव कि समान जोड़ी मिलाय दिए ॥ ३ ॥ नगर औ आकाश में मंगल गान होत है औ नगारे बाजत हैं दोऊ ठौर को आनन्द कहा नहीं जात है, सब असीस देत हैं कि अव-धेश के सब सुअन तुलसीदास के सुखदाता चिरंजीवहु ॥४॥११०॥

दो० । मंगल श्री सरजू सरित, मंगल विपिन प्रमोद । मंगल सीता राम जू, जो मोदहु को मोद ॥ १ ॥ युगल चन्द परिकर युगल, चरन रेनु सिर नाय । हरिहर सम मतिमंदहूं, टीका लई बनाय ॥ २ ॥ इति श्रीरामगीतावलीप्रकाशिकाटीकायां श्री सीतारामकृपापात्र श्रीसीता रामीय हरिहरप्रसाद कृतो बालकाण्डः समाप्तः। श्रीसीतारामाभ्यां नमः

श्री सीतारामाभ्यां नमः।

सटीक गीतावली--अयोध्या काण्ड।

मङ्गलाचरण—दोहा।

जिन के अंगप्रमंग तें, भूषित भूषन होत।
होत सुगंध सुगंधयुत, पोतो मोती होत॥
सोभाहू सोभा लहत, जिन के अंग प्रसंग।
विधि हरिहर बानी रमा, उमा होहिं लखि दंग॥
तिन्हसियसियवल्लभचरन, बार बार सिर नाय।
चरनरेनु परिकर जुगल, नयनन माझ लगाय॥
अवध कांड टीका रचत, हरिहर मति अनुहारि।
बिगरी सुमति सुधारि हैं, बालक अज्ञ विचारि॥

—०—

मूल।

राग सोरठ—नृप कर जोरि कह्यौ गुरु पाहीं। तुम्हरी कृपा असोस नाथ मेरी सबै महेस निवाहीं॥१॥ राम होहिं जुवराज जियत मेरे यह लालच मनमाहीं। बहुरि मोहि जियबे मरिबे की चित चिंता कछु नाहीं॥२॥ महाराज भलो काज बिचार्‌यो बेगि बिलंब न कीजै। विधि दाहि

होइ तो सब मिलि जनमलाहु लुटि लीजै ॥ ३ ॥ सुनत
नगर आनंद बधावन कैकेई बिलपानी । तुलसीदास दे-
माया बस कठिन कुटिलता ठानी ॥ ४ ॥ १ ॥

टीका ।

नृप इ० । निबाही कहैं पूर्ण किए ॥ १ ॥ २ ॥ विधि दाहिनो है
तो या कथन ते मनोरथ के लाभ में संदेह जनाए ॥ ३ ॥ ४ ॥१॥

राग गौरी—सुनहु राम मेरे प्रान पियारे । वारो सत्य
वचन श्रुतिसम्मत जाते हौं बिछुरत चरन तिहारे ॥१॥ बिनु
प्रयास सब साधन को फल प्रभु पायो सो तौ नहीं सम्हारे।
हरि तजि धर्मसील भयो चाहत नृपति नारि बस सरबस
हारे ॥२॥ रुचिर कांच मनि देषि मूढ ज्यौं करतल ते चिंता
मनि डारे । मुनि लोचन चकोर ससि राघव सिव जीवनधन
सोउ न बिचारे ॥ ३ ॥ जद्यपि नाथ तात मायावस सुष-
निधान सुत तुम्हहिं बिसारे । तदपि हमहिं त्यागहु जनि
रघुपति दीनबंधु दयाल मेरे बारे ॥४॥ अतिसय प्रीति बिनीत
बचन सुनि प्रभु कोमल चित चलन न पारे । तुलसिदास श्रौं
रहौ मातु हित को सुर भूमि बिप्र भय टारे ॥ ५ ॥ २ ॥

श्री कौशल्या जी की उक्ति है सुनहु इ० । श्रुतिसम्मत जो सत्य
वचन है ताको पाले कहैं कृति देवे कारे ने कि जेहि सत्य वचन की
तुम्हारे चरण ते हम बिछुरत हैं ॥ १ ॥ सब साधन को फल रूप जो
सहु भार ताको पाए पर नहीं सम्हारि सकै ॥ २ ॥ ३ ॥ तात माया-
स तुम्हारी मायावश ॥ ४ ॥॥ चलन न पारे चलिबे की इच्छा न हिय
पर चीर बिचारे तो अतिशै दुख में व्याप्त है ॥ ५ ॥ २ ॥

रहि चलिये सुंदर रघुनायक । औ सुत तात वचन मा-

जन रंग रंजनीउ तात मानिबे नायक ॥ १ ॥ वेद बिदित यह बानि तुम्हारी रघुपति सदा संत सुखदायक । राखहु निज मरजाद निगम की हौं बलिजाउं धरहु धनु सायक ॥२॥ सोक कूप पुर परिहि मरिहि नृप सुनि संदेस रघुनाथ सिधायक । यह दूषन बिधि तोहि होत अब राम चरन बियोग उपजायक ॥३॥ मातु बचन सुनि स्रवत नयन जल कछु सुभाउ जनु नरतन पायक । तुलसिदास सुरकाज न साध्यौ तौ तो दोष होइ मोहि आयक ॥ ४ ॥ ३ ॥

रहि इ० । रहि चलिए कहँ रहि जाइए ॥ १ ॥ रघुपति सदा संतन के सुखदाता हैं यह बानि तुम्हारी वेद में प्रसिद्ध है वेद सिद्ध जो अपनी मर्जाद है ताको राखहु भाव अजोध्या बासी सब संत हैं तिन को दुख मति देहु । मैं बलिजाउं धनुष बान को धरि देहु । भाव चलन के साज सब उतारि डारहु ॥ २ ॥ अब व्याकुलता ते बिधाता प्रति कहति हैं कि रघुनाथ के जाइबे वाला संदेस सुनि के सोक रूपी कूप में अयोध्या वासी परेंगे औ महाराज मरेंगे श्री रामचरण बियोग उपजावनि हारा जो यह दूषन से तुम्ह कहं होत है ॥ ३ ॥ पायक कहँ पाए कै, आयक कहँ आए कै ॥ ३ ॥ ४ ॥ टि०—पाठांतर होइ के स्थान मोहि ।

सोरठ—राम हौं कौन जतन घर रहिहौं । बार बार भरि अंक गोद लै ललन कौन सो कहिहौं ॥ १ ॥ इहि आंगन बिहरत मेरे बारे तुम जो सङ्ग सिसु लीन्हे । कैसे प्रान रहत सुमिरत सुत बहु बिनोद तुम कीन्हे ॥ २ ॥ जिन्ह श्रवननि कल बचन तिहारे सुनि सुनि हौं अनुरागी । तिन्ह श्रवनन्ह बनगवन सुनति हौं मोतें कवन अभागी ॥ ३ ॥ जुग सम निमिष जांहि रघुनंदन बदन कमल बिनु देखे । जौं तन रहै बरष बीते बलि कहा प्रीति इहि लेखे ॥ ४ ॥ तुलसीदास

वम श्री हरि देषि बिकल महतारी । गदगद कंठ नयन ज
फिरि फिरि आवन कहेउ मुरारी ॥ ५ ॥ ४ ॥

राम इ० । हे राम मैं कवने जतन ते घर में रहोंगी ॥ १ ॥ २
इहां वरष पद ते चौदह वरष लेना ॥४॥ फिरि कहैं पारंपार ॥५॥४

राग बिलावल—रहहु भवन हमरे कहे कामिनि । सा
सासु चरन सेवहु नित जो तुम्हरे पति हित गृह स्वामिनि
॥ १ ॥ राजकुमारि कठिन कंटक मग क्यौं चलिहौ मृदु
गजगामिनि । दुसह वात वरषा हिम आतप कैसे सहि
मगनित दिन जामिनि ॥ २ ॥ हौं पुनि पितु आज्ञा प्रमा
करि ऐहौं वेगि सुनहु दुतिदामिनि । तुलसिदास प्रभु विग
वचन सुनि सहि न सकी मुरछित भइ भामिनि ॥३॥५॥

श्री जानकी जू प्रति रघुनाथ जी की उक्ति है । रहहु इ० । पूं
ह्लादिनी हैं यह कहिबे को यह भाव कि तुम को अन्यत्र जाना न
चाहिये ॥१॥ जामिनि राति ॥२॥३॥५॥

कल्प विमल दुकूल मनोहर कंद मूल फल अमिय नाजु। प्रभुपद कमल बिलोकिहौं छिनु छिनु इहि ते अधिक कहा सुप समाजु ॥२॥ हौं रहौं भवन भोग लोलुप ह्वै पति कानन कियो मुनि को साजु। तुलसिदास ऐसे बिरहवचन सुनि कठिन हियो बिहस्यो न आजु ॥ ३ ॥ ७ ॥

कहो इ० ॥ १ ॥ अमिय नाजु अमृत सम अन्न ॥ २ ॥ ऐसे विरह वचन अर्थात् तुमे सुकुमारि हौ वन योग्य नहीं यह बचन सुनि के मेरो हृदय कठिन है सो न फट्यो ॥ ३ ॥ ७ ॥

प्रिय निठुर वचन कहे कारन कवन। जानत हौ सब के मन की गति मृदुचित परम कृपालु रवन ॥१॥ प्राननाथ सुंदर सुजान मनि दीनबंधु जन आरति दवन। तुलसिदास प्रभु पद सरोज तजि रहि हौं कहा करौंगी भवन ॥१॥८॥

प्रिय इ० । रवन स्वामी ॥१॥ सुजान मनि सुजानन में श्रेष्ठ ॥२ ८। टि०—आरति दवन दुख हरनेवाले।

मैं तुम सो सतिभाय कही है। बूझति और भांति करि भामिनि कानन कठिन कलेस सही है ॥ १ ॥ जौं चलिहौं तौ चलौ चलिए वन सुनि सिय मन अवलंब लहो है। बूडत बिरह वारि निधि मानहु नाह वचन मिसि बांह गही है ।२। प्राननाथ के साथ चली उठि अवध सोक सरि उमगि बही है। तुलसी सुनि न कवहु काहू कहुं तनु परिहरि परिछांह रही है ॥ ३ ॥ ८ ॥

श्री रघुनाथ जी उक्ति है, मैं इ० । हे भामिनी हम तुम से जस है वस कही है, ताको तुम और भांति करि बूझति हो, वन में सांचो कठिन कलेश है ॥ १ ॥ मानो विरह रूप समुद्र में बूड़त में ने वचन के बहाने से बांह गहि लई है

पृथक् परिछांहीं को रहते काहू ने नहीं सुनी है। भाव तब जानकी
कैसे रहैं ॥ ३।९ ॥

अबहिं रघुपति सङ्ग सीय चली। विकल वियोग लोग
पुरतिय कहैं अति अन्याउ अली ॥ १ ॥ कोउ कहै मनिगन
तजत कांच लगि करत न भूप भली। कोउ कहै कुल
कुवेलि कैकेई दुप विषफलनि फली ॥ २ ॥ एक कहैं बन
जोग जानकी विधि बड विषम बली। तुलसी कुलिसहु की
कठोरता तेहि दिन दलकि दली ॥ ३। १० ॥

जन इ० । हे सखी अति अन्याव है ॥ १ । इहां कांच स्था
सत्य वचन हैं; कुवेलि विषलता ॥ २ ॥ क्या जानकी जू बन जा
जोग्य हैं अर्थात् नहीं पर विधाता अति कठिन बलवान है। गोसाईं जी
कहत हैं कि तेहि दिन और को को कहै कुलिसहु की कठोरता दलकि
के फटि गई ॥ ३ ॥१० ॥

ठाढे हैं लषन कमल कर जोरे। उर धकधकी न कहत
कछु सकुचनि प्रभु परिहरत सबन त्रिन तोरे ॥ १ ॥ कृपा
सिन्धु अवलोकि बंधु तन प्रान कृपान बीर सी छोरे। तात
बिदा मागिऐ मातु सो बनिहै बात उपाइ न औरे ॥ २ ॥
जाइ चरन गहि आयसु जांच्यो जननि कहत बहु भांति
निहोरे। सिय रघुवर सेवा सुचि ह्वैहौ तौ जानिहौं सांचे
सुत मोरे ॥ कीजहु इहै विचार निरंतर राम समीप सुकृत
नहिं थोरे। तुलसी सुनि सिय चले चकित चित उड्यो
मानो बिहग बधिक भय भोरे ॥ ४ ॥ ११ ॥

टी० इ० । संकोच से कछु कहत नाहीं हैं हृदय में धकधकी है
कहते हैं कि सबु का काज मैं सब को तोरे तृन सम त्याग करत हैं ॥१॥
प्राण रूप जो तरवार है मानों बीर के समान छोरे अर्थात् इतनी

गोन्हे बंधु के तन को देखि के कृपा सिंधु बोले कि हे तात ! माता सो विदा मागिए और उपाय से न बनिहै अर्थात् वे माता के कहे हम न ले चलब ॥ २ ॥ मुनि छलरहित ॥३। एही विचार निरंतर करेहु कि थोरे सुकृत से रघुनाथ के निकट प्राप्ति नहीं होत है। यह सिखावन सुनि के चकित चित ते चलत भए। मानो बधिक के गाफिल भए से पच्छी उड़ेउ ॥ ४ ॥ ११ ॥

राग सोरठ—मोको विधु वदन बिलोकन दीजै। राम लषन मेरी यहै भेट बलिजाउं मोहि मिलि लीजै ॥ १॥ सुनि पितु बचन चरन गहे रघुपति भूप अंक भरि लीन्हे। अजहुं अवनि विहरति दरार मिस सो अवसर सुधि कीन्हे। पुनि सिरनाइ गवन कियो प्रभु मुरछित भयो भूप न जाग्यौ। करमचोर नृप पथिक मारि मानो रामरतन लै भाग्यौ ॥ ३ ॥ तुलसी रविकुल रवि रथ चढि चले तकि दिसि दषिन सुहाई। लोग नलिन भए मलिन अवधसर बिरह बिषम हिम आई ॥ ४ ॥ ११ ॥

श्री राम प्रति श्री चक्रवर्ती महाराज की उक्ति है मोको इ० ॥१॥२ र्म रूप चोर ने महाराज रूप पथिक को मारि कै मानो राम रूप रत्न ो लूटि कै लै भाग्यो ॥ ३ ॥ गोसाईं जी कहत हैं कि सूर्य कुल के र्य जो श्रीराम सो रथ पर चढ़ि के सुंदर दक्षिण दिसा के ओर लत भए। सूर्य दक्षिणायन में हिम रितु आवति है सो इहां कठिन वेरह रूप हिम रितु आई। ताते अजोध्या रूप सर में, लोग रूप कमल लीन होत भए ॥ ४ ॥ १२ ॥

राग बिलावल—कहो सो विपिन है धौं कितिक दूरि। जहां गवन कियो कुंवर कोसलपति बूझति सिय पिय पतिहि बिमूरि ॥ १ ॥ प्रान नाथ परदेस पयादेहि
तजे तन तूरि । करौं

पृथक् परिछांही को रहते काहू ने नहीं सुनी है। भाव तव जानकी
कैसे रहैं ॥ ३।९ ॥

अबहिं रघुपति सङ्ग सीय चली। विकल वियोग लोग
पुरतिय कहै अति अन्याउ अली ॥ १ ॥ कोउ कहै मनिगन
तजत कांच लगि करत न भूप भली। कोउ कहै कुर
कुबेलि कैकेई दुख विषफलनि फली ॥ २ ॥ एक कहै बन
जोग जानकी विधि बड विषम बली। तुलसी कुलिसहु की
कठोरता तेहि दिन दलकि दली ॥ ३। १० ॥

जन इ० । हे सखी अति अन्याव है ॥ १ । इहां कांच स्थानी
सत्य वचन है; कुबेलि विषलता ॥ २ ॥ क्या जानकी जू बन
जोग्य हैं अर्थात् नहीं पर विधाता अति कठिन बलवान है। गोसाईं
कहत हैं कि तेहि दिन और को को कहै कुलिसहु की कठोरता दलि
के फटि गई ॥ ३ ॥१० ॥

ठाढे हैं लषन कमल कर जोरे। उर धकधकी न कहत
कछु सकुचनि प्रभु परिहरत सबन चिन तोरे ॥ १ ॥ कृपा
सिन्धु अवलोकि बंधु तन प्रान कृपान बीर सी छोरे। तात
बिदा मागिऐ मातु सो बनिहै बात उपाइ न औरे ॥ २ ॥
जाइ चरन गहि आयसु जाच्यो जननि कहत बहु भांति
निहोरे। सिय रघुबर सेवा सुचि ह्वै हौ तौ जानिहौं सही
सुत मोरे ॥ कोमहु छुट्है विचार निरंतर राम समीप सुकृत
नहिं थोरे। तुलसी सुनि सिख चले चकित चित उड्यो
मानो बिहग बधिक भय भोरे ॥ ४ ॥ ११ ॥

मरकत कनक वरन मृदुगात ॥ १ ॥ अंसनि चाप
ॅट मुनिपट जटामुकुट बिच नूतन पात । फेरत
रोजनि सायक चोरत चितहि सहज मुसकात ॥२॥
र सुकुमारि सुभग सुठि राजति बिनु भूषन नवसात।
नरपि ग्राम बनितनि के नलिन नयन बिगसित मानो
॥ अंग अंग अगनित अनंग छवि उपमा कहत
कुचात । सिय समेत नित तुलसिदास चित बसत
पथिक दोउ भ्रात ॥ ४ ॥ १५ ॥

मुख औ कमल सम नेत्र औ कोमल अंग हैं । मरकत वरण
ौ कनक वरण श्रीलछिमन जी हैं ॥१॥ अंसनि चांप, कान्हन
निपट वल्कलादि ॥२॥ सुभगसुठि अति सुंदरि भूषन नवसात
ार परम शोभा देखि कै ग्रामयुवतिन के नेत्र कमल विकसे
ाल में कमल विकसत । इहां सुखमा सूर्य है ॥३॥४॥१५॥

षि देषि री पथिक परम सुन्दर दोऊ । मरकत
बरन काम कोटि कांति हरन चरन कमल कोमल
कुंअर कोऊ ॥१॥ कर सर धनु कटि निषंग मुनि-
सुभग अंग संग चंद्रवदनि बधू सुंदरि सुठि सोऊ।
वेष किए सोभा सब लूटि लिए चित के चोर वय
ोचन भरि जोऊ ॥ २ ॥ दिनकर कुल मनि निहारि
ग्राम नारि परसपर कहैं सषि अनुराग ताग पोऊ।
ध्यान सुधन जानि मानि लाभ सघन कृपिन ज्यों
हिय सुगेह गोऊ ॥ ३ ॥ १६ ॥

धुन की उक्ति है देखि इ० । कलधौत स्वर्ण ॥ १ ॥ जोऊ
रस्पर कहति हैं कि हे सखी इन दोऊ कुँअर रूप मणिन
रूप ताग में पोहु यह ध्यान को सुंदर धन जानि कै अति

चरन सरोरुह धूरि ॥ २ ॥ तुलसिदास प्रभु प्रिया वचन सुनि नीरज नयननीर आए पूरि। कानन कहां अबहि सुनु सुंदरि रघुपति फिरि चितयो हितभूरि ॥ ३ ॥ १३ ॥

श्रीराम प्रति श्रीजानकी जी की उक्ति है कहां इ० । श्रीजानकी जू प्रिय पति जो श्रीराम तिन सो बिसूरि कहैं बिलखाय कै बूझति हे कोशलपतिकुंवर जहां को गमन कियो हौ सो वन धौं केतिक दूरि है हम ते कहो ॥ १ ॥ हे प्राणनाथ सब सुख को तृनवत तोरि कै त औ परदेस को पयादे चले श्रमित भए होहुगे ताते तरुतर बिला कीजिए मैं बयारि करौं औ चरण कमल की धूरि झारौं। भाव जाते श्र उतरि जाय ॥ २ । प्रिया के यह वचन सुनि के प्रभु के नैन कमल जल भरि आए। कहत भए कि हे सुंदरि सुनो अबही बन कहां है अ काहि के अति हित से फेर देखत भए ॥ ३ ॥ १३ ॥

फिरि फिरि राम सीयतन हेरत। तृषित जानि ज लेन लषन गए भुज उठाय ऊंचे चढ़ि टेरत ॥ १ ॥ अव कुरंग बिहग द्रुम डारनि रूप निहारत पलक न प्रेरत। मग ल डरत निरषि कर कमलनि सुभग सरासन सायक फेर ॥ २ ॥ अवलोकत मग लोग चहूं दिसि मनहुं चकोर चंद्रम घेरत। ते जन भूरिभाग भूतल पर तुलसी राम पथिक लै रत ॥ ३ ॥ १४ ॥

फिरि इ० । श्रीराम जू ऊंचे पर चढ़ि के भुजा उठाय लषन ल को टेरत हैं औ श्रीजानकी जू के ओर फिरि फिरि देखत हैं ॥ १ भूमि ते हरिन औ वृक्षन के डारन ते पक्षी रूप को एक टक देखत यद्यपि श्रीराम जू कर कमलनि मे सुंदर धनुष बान फेरत हैं तथ ऐसे मगन हैं कि देखि डरत नहीं हैं ॥ २ ॥ जैसे चन्द्रमा को च घेरत हैं तैसे मग लोग चहूं ओर ते देखत हैं अर्थात् पलक रोकि ॥ ३

नृपतिकुंवर राजत मग जात। सुंदर बदन सरो

लोचन मरकत कनक बरन मृदुगात ॥ १ ॥ अंसनि चाप तून कटि मुनिपट जटामुकुट बिच नूतन पात । फेरत पानि सरोजनि सायक चोरत चितहि सहज मुसकात ॥२॥ संग नारि सुकुमारि सुभग सुठि राजति बिनु भूषन नवसात। सुषमा निरखि ग्राम बनितनि के नलिन नयन बिगसित मानो प्रात ॥ ३ ॥ अंग अंग अगनित अनंग छवि उपमा कहत सुकवि सकुचात । सिय समेत नित तुलसिदास चित बसत किशोर पथिक दोउ भ्रात ॥ ४ ॥ १५ ॥

सुंदर मुख औ कमल सम नेत्र औ कोमल अंग हैं । मरकत वरण श्रीराम औ कनक वरण श्रीलछिमन जी हैं ॥१॥ अंसानि चांप, कान्हन पर धनु मुनिपट वल्कलादि ॥२॥ सुभगसुठि अति सुंदरि भूषन नवसात सोरह शृंगार परम शोभा देखि के ग्रामयुवतिन के नेत्र कमल विकसे जैसे प्रातःकाल में कमल विकसत । इहां सुखमा सूर्य है ॥३॥४॥१५॥

तू देखि देखि री पथिक परम सुन्दर दोऊ । मरकत कलधौत बरन काम कोटि कांति हरन चरन कमल कोमल अति राजकुंअर कोऊ ॥१॥ कर सर धनु कटि निषंग मुनि-पट सोहैं सुभग अंग संग चंद्रवदनि बधू सुंदरि सुठि सोऊ। तापस बर वेष किए सोभा सब लूटि लिए चित के चोर बय किसोर लोचन भरि जोऊ ॥ २ ॥ दिनकर कुल मनि निहारि प्रेम मगन ग्राम नारि परसपर कहैं सखि अनुराग ताग पोऊ। तुलसी यह ध्यान सुधन जानि मानि लाभ सघन कृपिन ज्यों सनेह सो हिय सुगेह गोऊ ॥ ३ ॥ १६ ॥

ग्राम बधुन की उक्ति है देखि इ० । कलधौत स्वर्ण ॥ १ ॥ जोऊ देखु ॥२॥ परस्पर कहति हैं कि हे सखी इन दोऊ कुँअर रूप मणिन को अनुराग रूप ताग मे पोहु यह ध्यान को सुंदर धन जानि कै अति

लाभ मानि कै हृदय रूप सुंदर गृह में सनेह पूर्वक छपाउ जैसे धनी धन छपावत है ॥ ३ ॥ १६ ॥

कुंवर सांवरो री सजनी सुंदर सब अंग। रोम रोम छवि निहारि आलिवारि फेरि डारि कोटि भानुसुवन सरदसोम कोटि अनंग ॥ १ ॥ वामअंस लसतचाप मौलि मंजु जटकलाप सुचिसर कर मुनिपट कटितट कसे निषंग। आयत उर बाहु नैन सुख सुषमा को लहै न उपमा अवलोकि लोक गिरा मति गति भंग ॥२॥ यौं कहि भई मगन बाल बिथकी सुनि जुवति जाल चितवत चले जात संग मधुप मृग विहंग। बरनो किमि तिन्ह की दसहि निगम अगम प्रेमरसहि तुलसी मन बसन रंगे रुचिर रूप रंग ॥ २॥१७ ॥

कुंअर इ० । री सजनी यह सांवरो कुंवर सब अंग ते सुंदर है। आली इन की रोम रोम की छवि देखि कै कोटिन अश्वनी कुमार औ सरद पूनों के चंद्र औ कोटिन काम कों फेरि कै नेवछावरि करि डार ॥ १ ॥ वाम कांधे में धनु औ माथे में पवित्र जटन के समूह औ हाथ में वाण सोभत है । वलकल पहिरे हैं औ कटिदेश में तरकस कसे हैं छाती बाहु औ नयन बिसाल हैं औ मुख की परम शोभा को कोउ नहीं पावत है । लोक में उपमा खोजि कै सारदा की मति औ गति नाश है "मति भारती पंगु भई जो निहारि बिचारि फिरी उपमा न पवैं" ॥ वह कहनिहारी बाला अस कहि प्रेम में डूबि जात भई औ कहनि और सब युवती सुनि थकित होत भई औ भ्रमर इत्यादि चितवत संग में चले जात हैं। मन रूप बसन कों सुंदर रूप रंग में । तिन्ह की दशा कैसे बरनों काहे ते कि वेदन को भी अगम है ॥ २॥१७ ॥

राग कल्यान । देखु कोउ परम सुंदर सखि बटोही। चरन करन वारिज बरन भूपसुत रूपनिधि

नरपि हौं मोही ॥ १ ॥ अमल मरकत स्याम सील सुषमा धाम गौर तन सुभग सोभा सुमुखि जोही। जुगल बिच नारि सुकुमारि सुठि सुंदरी इंदिरा इन्दु हरि मध्य जनु सोही ॥२॥ करनि वरधनु तीर रुचिर कटि तूनीर धीर सुर सुखद मर्दन अवनिद्रोही। अंबुजायत नैन वदन छवि बहु मयन चारु चितवनि चतुर लेत चित्त पोही ॥ ३ ॥ वचन प्रिय सुनि स्रवन राम करुनाभवन चिते सब अधिक हितसहित कछु पोही। दास तुलसी नेहबिवस बिसरी देह जान नहिं आपु तेहि काल धौं कोही ॥ ४॥१८ ॥

देखु इ० लाल कमल के रंग कोमल चरण तें जे भूमि में चलत हैं ते रूपनिधि भूपसुतन्ह को देखि में मोहि गई । १॥ हे सुमुखि निर्मल मरकत सम स्याम औ शील परम शोभा के धाम एक कुवर औ गौर तन सुंदर शोभा वाल्गे दूसरो कुंवर को देखु औ दूनों कुंवरन बीच अति सुंदर सुकुमारि नारि है मानों चंद्रमा औ विष्णु के मध्य लक्ष्मी शोभी ॥ २ ॥ तूनीर तरकस अवनिद्रोही राक्षसादि अंबुजायत नयन कमलवत् विस्तृत नेत्र, लेत पोही गूथि लेत ॥ ३ ॥ सब को चितए पर अधिक हित सहित ओहि कहनिहारि को कोही कहें कौन हौं ॥ ४।१८॥

राग केदारा। सखि नीके कै निरखि कोउ सुठि सुंदर बटोही। मधुर मूरति मन मोहन जोहन जोग वदन सोभा-सदन देखि हौं मोही ॥ १ ॥ सांवरे गोरे किशोर सुर मुनि चितचोर उभय अंतर एक नारि सोही । मनहु वारिद विधु बीच ललित अति राजति तडित निज सहज विछोही ॥ २ ॥ उर धीरज धरि जनम सुफल करि सुनहि सुमुखि जिनि विकल होही। को जानै कौने सुकृत लह्यो है लोयन

लाहु ताही तें वारहि वार कहतिहौं तोही ॥ ३ ॥ सखिरी सुसीप दई प्रेम मगनभई सुरति बिसरि गई आपनी ओही तुलसी रही है ठाढी पाहन गढीसी काढी न जाने कहां तै आई कौन को कोही ॥४॥१८ ॥

सखी इ० । हे सखी भली भांति करि देखु कोऊ अति सुंदर बटोही हैं । इन मनमोहन पथिकन की सोहावनि मूरति देखिवे यो हैं । शोभा के सदन इन के मुख हैं जाके देखि के मैं मोहि गई हौं ॥१ दोउन के बीच एक नारि सोहि रही है मानों मेघ औ चन्द्रमा के बीच में अपनो चंचल सुभाव त्यागि कै अति सुंदर बिजुरी सोहि रही है॥२॥ हे सुमुखि मृदु विकल मति होंहि धीरज धरि के अपना जन्म सुफल करु जो कौने सुकृतन से नेवन ने यह लाभ पायो है । ताते मैं वारी वार तोसो कहति हौं ॥ ३ । पाहन सी गढ़ि काढ़ी गढ़ी भई पाथर की मूरति सी कौन की कोही केहि की हौ औ कौन हौ । ४॥१९ ॥

माई मन के मोहन जोहन जोग जोहो । थोरिहि वयस गोरे सांवरे सलोने लोने लोयन ललित विधु बदन बटोही ॥। सिरनि जटा मुकुट मंजुल सुमनजुत तैसियै लसति नव पल्लव पोही । किये मुनिवेष बीर धरे धनु तून तीर सोहैं मग कोहैं लषि परे न मोही ॥ २ ॥ सोभा कों सांचो संवारि रूप जातरूप ढारि नारि बिरची बिरंचि संग सो सोही। राजत रुचिर तन सुंदर स्रम के कन चाहे चकचौंधी लागै का काहौं तोही ॥ ३ ॥ सनेह सिथिल सुनि वचन सकल सिय चितई अधिकहित सहित ओही । तुलसी मानहु प्रभु कृपा की मूरति फिरि हेरि कै हरपि हिय लियो है पोही ॥ ४॥२० ॥

माई इ० । हेमाई देखिवे जोग्य मन के मोहन बटोही को मैं देखी ।

ते बटोही कैसे हैं कि जिन्ह की अवस्था थोड़ी है, एक सलोने गोरे हैं, एक लोने सांवरे हैं, सुंदर आंखें हैं, चन्द्रसम मुखें हैं ॥१॥ नव पल्लव खोंही नए पत्रनजुत डोंगी, को हैं कौन हैं ॥ २ ॥ ब्रह्मा ने शोभा को सांचा बनाइकै तामे रूप रूपी सोना को ढारि कै नारि बनाई सो नारि संग में सोहि रही है, चाहै कहुं देखे ॥ ३ ॥ वह जो सनेह ते शिथिल है ताकी सब बातैं श्रीजानकीजू सुनि कै अधिक प्रीति-सहित वाको देखत भई । मानो जानकीजू न देखीं प्रभु की कृपा की मूरति ने फिरि के देखि हरषि के चित्त को गूंथि लई ॥ ४ ॥ २० ॥

सखि सरद विमल विधु बदन वधूटी । ऐसी ललना सलोनी न भई न है न होनी रतै रची विधि जो छोलत छवि छूटी ॥१॥ सांवरे गोरे पथिक बीच सोहति अधिक तिहुं तिभुवन सोभा मानहु लूटी । तुलसी निरषि सिय प्रेमवस कहैं तिय लोचन सिसुन्ह देहु अमिय घूटी ॥२॥२१ ॥

सखी इ० । हे सखी निर्मल सरद के चन्द सम या वधूटी को मुख है ऐसी सलोनी ललना न भई है न कहूं है न होनिहार है, विधाता ने याके सुधारत में जो छवि छूटि परी ताते रति को बनाई ॥ १ ॥ तिहुं कहैं तीनों जने लोचन सिसुन्ह देहु अमिय घूटी, लोचन रूप बालकन के पथिक रूप रूपी अमृत को घोंटी देहु ॥ २ ॥ २१ ॥

सोहैं सांवरो पथिक पाछे ललना लोनी । दामिनि बरन गोरी लषि सषि तिन तोरी बीतो है वय किसोरी जोवन होनी ॥ १ ॥ नीकि कै निकाई देपि जनम सुफल लेषि हम सी भूरि भागिनि नभ न छोनी । तुलसी स्वामी स्वामिनि जोहि मोही है भामिनि सोभा सुधा पियें करि अंषियां दोनी ॥ १॥२२ ॥

सोहैं इ० सु० ॥१॥ नभ न छोनी न आकास न पृथ्वी में, अंषिआं दोनी आंखिन को दोना बनाय ॥ २ ॥ २२ ॥

पथिक गोरे सांवरे सुठि लोने। संग सुतिय जाकी तव
ते लहो हैं दुति स्वर्न सरोरुह सोने ॥ १ ॥ वय किसं
सरि पार मनोहर वयस सिरोमनि होने। सोभा सुधा आलि
अंचवहु करि नयन मंजु मृदु दोने ॥ २ ॥ हेरत हृदय हरत
नहिं फेरत चारु विलोचन कोने। तुलसी प्रभु किधौं प्रभु के
प्रेम पढे प्रगट कपट विनु टोने ॥ ३॥२३ ॥

पथिक इ० ॥ १ ॥ किशोर अवस्था रूप नदी से पार है के मनो-
हर युवा अवस्था होनिहार है ॥ २ ॥ सुंदर नयनन सो तिरछे देखनी
मन को हरिलेत हैं फेर फेरत नाहीं। गोसाईं जी कहत हैं कि प्रभु कैधों
प्रभु के प्रेम ने विना कपट के टोना प्रगट पढ़े हैं। भाव टोना कपट करि
छिपाय के किया जात है। इहां साम्हे मनहरे ताते प्रगट कहे ॥३॥२३॥

मनोहरता को मानो ऐन। स्यामल गौर किसोर पथिक
दोउ सुमुषि निरषि भरि नैन ॥ १ ॥ वीच वधू विधुवदनि
विराजति उपमा कहुं कोउ हैन। मानहुं रति रितुनाथ
सहित सुनिवेष वनायौ है मैन ॥ २ ॥ किधौं सिंगार सुषमा
सुप्रेम मिलि चले जग चित वित लैन। अद्भुत त्रई किधौं
पठई है विधि मग लोगनि सुष दैन ॥ ३ ॥ सुनि सुचि सरल
सनेह सुहावने ग्राम वधुन कै वैन। तुलसी प्रभु तरु
विलंव किये प्रेम कनौडे कैन ॥ ४॥२४ ॥

मनो इ० सु०॥१॥ हैन नहीं है ॥ २ ॥ कैधौं शृंगार रस औ प
शोभा औ प्रेम मिलि के जगत के चित्त रूपी धन को लेइवे को चले हैं
शृंगार श्रीराम जू सुखमा श्रीजानकी जू प्रेम श्रीलछिमन जू हैं। कैधों
विधाता ने मगलोगन के सुख देइवे हेतु अद्भुत इन्ह तीनों मूर्ति कं
एकत्र करि पठए हैं वा विचित्र येदमई ॥ ३ ॥ प्रेम करि के कनौड़ा कीं
के नहीं भए भाव सब के भए ॥ ४ ॥ २४ ॥

वय किसोर गोरे सांवरे धनु बान धरे हैं। सब अंग सहज सुहावने राजिव जीते नैयननि बदननि बिधु निदरे हैं॥ १ ॥ तून सुमुनिपट कटि कसे जटा मुकुट करे हैं। मंजु मधुर मृदु मूरति पानहीं न पायन कैसे धौं पथ बिचरे हैं॥ २ ॥ उभय बीच बनिता बनी लपि मोहि परे हैं। मदन सप्रिया सप्रिय सपा मुनि वेपु बनाए लिये मन जात हरे हैं॥ ३ ॥ सुनि जहं तहं देपन चले अनुराग भरे हैं। राम पथिक छवि निरपि कै तुलसी मगलोगनि धामकाम बिसरे हैं॥४॥२५॥

वय इ० । राजीव कमल, निदरे हैं निरादर किए हैं ॥ १ ॥ सुंदर मनोहरमूर्ति कोमल ताहू में पनही पगन में नहीं ॥ २ ॥ दोउन के बीच में बनिता बनी है अस हम को लखि परत हैं कि रतिसहित बसंत सहित काम मुनिवेष बनाये सब के मन हरे लिए जात हैं ॥३॥४॥२५॥

कैसे पितु मातु कैसे ते प्रिय परिजन हैं। जगजलधि ललाम लोने लोने गोरे श्याम जिन्ह पठये ऐसे बालकन बन हैं॥ १ ॥ रूप के न पारावार भूप के कुमार मुनिवेष देषत लोनाई लघु लागत मदन हैं। सुषमा की मूरति सी साथ निसिनाथमुपी नष सिष अंग सब सोभा के सदन हैं ॥ २ ॥ पंकज करनि चांप तीर तरकस कटि सरदसरोजहु ते सुंदर चरन हैं। सीता राम लषन निहारि ग्राम नारि कहै हेरि हेरि हेरि हेली हिय के हरन हैं॥ ३ ॥ प्रानहुं के प्रान से सुजीवन के जीवन से प्रेमहू के प्रेम रंक कृपिन के धन हैं। तुलसी के लोचन चकोरनि के चंद्रमा से आछे मन मोर चित चातक के घन हैं॥ ४॥२६ ॥

कैसे इ० । जगत रूप समुद्र के रत्न ॥ १ ॥ इहां पारावार अवधि

के अर्थ में है अर्थात् रूप की सीमा नहीं है। ॥ २ ॥ सारदसरोज सरद के कमल, हेरि हेरि हेरि हेली कहैं हे सखी देखु देखु देखु इसी भाँति हर्ष में वीप्सा ।३। रंक कृपिन के दरिद्र ... के, मन रूप मोर औ चित्त रूप चातक के आछे कहैं नवीन सजल है ॥ ७।२६ ॥

राग भैरव । टेपि द्वै पथिक गोरे सांवरे सुभग हैं। तृति सलोनी संग सोहत सुमग हैं ॥ १ ॥ सोभा सिन्धु सम्भव है नीके नीके नग हैं। मातु पितु भागवस गए परी फाग है ॥ २ ॥ पायन पनह्यौ न मृदु पंकज से पग हैं। रूप की मोहनी मेलि मोहे थग जग हैं ॥ ३ ॥ मुनिवेष धरे धनु सायक सुलग हैं। तुलसी हिये लसत लोने लोने डग ॥ ४॥२७ ॥

देखि इ० छु० ॥१॥ शोभा समुद्र से उत्पन्न आछे आछे मणि हैं। माता पिता के भागवस फांदा में परि गए हैं ॥ २ ॥ पायन चरनन में मेलि डारि, अग जग स्थावर जंगम ॥ ३ ॥ सुलग हैं सुंदर लागत हैं। डग फाल जाको कोऊ देश में डेग कहत हैं ॥४॥२७ ॥

पथिक पयादे जात पंकज से पाय हैं। मारग कठिन कुस कंटक निकाय हैं ॥ १ ॥ सखि भूखे प्यासे पै चलत चित चाय हैं। इन्ह के सुकृत सुर संकर सहाय हैं ॥ २ ॥ रूप सोभा प्रेम कैसे कमनीय काय हैं। मुनिवेष किये किधौं ब्रह्म जीव माय हैं ॥३॥ वीर बरिआर धीर धनुधर राय हैं। दसचारि पुरपाल आलि उरगाय हैं ॥ ४ ॥ मग लो... देपत करत हाय हाय हैं। बन इन को तो बाम विधि के बध... हैं ॥ ५ ॥ धन्य ते जे मीन से अवधि अंबु आय हैं। प्र...भु सो जिन्हहूं के भले भाय हैं ॥ ६॥२८ ॥

पथिक इ० निकाय समूह ॥ १ ॥ चाय आनन्द ॥ २ ॥ रूप
राम जी शोभा श्रीजानकी जू प्रेम श्रीलछिमन जू माय माय ॥ ३ ॥
य राजा है, सखी चौदहो भुवन के पालक उरगाय हैं परमेश्वर हैं।
४ ॥ इन को जो वन तो विधाता बनाय के वाम है ॥ ५ ॥ आय है
ः जो अवधि रूपी जल है तेहि में जे मीन से है रहे हैं ते धन्य हैं
। जिन्ह के भले भाव इन से हैं तेऊ धन्य ॥ ६ ॥ २८ ॥

राग असावरी। सजनी हैं कोउ राजकुमार। पंथ चलत
दु पद कमलन दोउ सील रूप आगार ॥१॥ आगे राजिव
न स्याम तन सोभा अमित अपार । डारौं वारि अंग
गनि पर कोटि कोटि सत मार ॥ २ ॥ पाछे गोर किसोर
नोहर लोचन बदन उदार। कटि तूनीर कसे कर सर धनु
ले हरन छितिभार ॥ ३ ॥ जुगल बीच सुकुमारि नारि
क राजति बिनहिं सिंगार। इंद्रनील हाटक मुकुतामनि
नु पहिरे महि हार ॥ ४ ॥ अवलोकहु भरि नयन बिकल
जिनि होहु करहु सुविचार। पुनि कह यह सोभा कहँ
लोचन देह गेह संसार ॥ ५ ॥ सुनि प्रिय बचन चिते हित
कै रघुनाथ क्रपा सुष सार। तुलसिदास प्रभु हरे सबन्हि के
मन तन रहि न संभार ॥ ६॥२९ ॥

सजनी इ० सु० ॥ १ ॥ २ ॥ उदार कहैं सुंदर ॥३॥ इहां मरकत
मनि श्रीराम, सोना श्रीलछिमन जी, मोती श्रीजानकी जी हैं ॥४॥ ५ ॥
६॥२९॥ टि०—इंद्रनील=मरकत मनि, हाटक=सोना। मुकुतामनि मोती।

राग टोडी। देषु री सषी पथिक नष सिष नीके हैं।
नीले पीने कमल से कोमल कलेवरनि तापसहू बेष किये
काम कोटि फीके हैं ॥ १ ॥ सुक्रत सनेह सील सुषमा सुष
सकेलि बिरचे बिरंचि किधौं अमिय अमोके हैं। रूप की सी

दामिनी सुभामिनी सोहति संग उमहुं रमा ते भाहे अंग तोके हैं ॥ २ ॥ वनपट कसे कटि तून तीर धनु धीर वीर पालक कृपाल सब ही के हैं । पानही न पा सरोजनि चलत मग कानन पठाए पितु मातु कैसे हैं ॥ ३ ॥ आली अवलोकि लेहु नयननि को फल एहु के सुलाभ सुप जीवन से जीके हैं । धन्य नर नारि निहारि बिनु गाहकहूं आपने २ मन मोल बिनु बीके ॥ ४ ॥ विबुध बरषि फूल हरषि हिये कहत मगन सनेह सियपीके हैं । जोगी जन अगम दरस पावंरनि मुदित बचन सुनि सुरप सची के हैं ॥ ५ ॥ प्री की सुबालक से लालत सुजन मुनि मग चारु चरित राम सीके हैं । जोग न बिराग जाग तप न तीरथ त्याग अनुराग भाग खुले तुलसी के हैं ॥ ६॥३० ॥

देखि इ० सु० । रूप की सी दामिन दामिन की ऐसो रूप है वनपट वल्कलादि ॥ ३ ॥ बीके हैं बिकाए हैं ॥ ४ ॥ सियपीके सने आपलोग मगन हैं औ देवता हिय में हरपि फूल वरषि कहत है जन को जो दरस अगम सो पावँरन पायो। यह देवतन के मे ...नि के इन्द्र औ इन्द्रानी मुदित भए ॥ ५ ॥ मग के सुन्दर ...पन श्रीराम श्रीजानकी जी के हैं तेई प्रीति के सुन्दर है । बालक को जैसे पिता माता दुलारत तैसे इहां सुंदर जन ... औ इनहीं चरित्रन के अनुराग ते जोगादि बिना तुलसी खुले हैं ॥ ६ ॥ ३० ॥

रीति चलिवे की चाहि प्रीति पहिचानि कै। आपनी कहैं प्रेम परवस अहैं मंजु मृदु बचन सनेह सु ॥ १ ॥ भांवरे कुंअर के चरन की बराइ चिन्ह

...सो नर नारि चेटोने छरि गये, अधिक सुंदराई देखि कै। वचन सो
विशेष थकित भए औ नैन रूपी तड़ाग में सोभा रूपी मिष्ट जल भरि
गए वा सुधा अमृत ॥ १ ॥ विना जोते विना बोए निफल कहै अंकुर
निराए विना अर्थात् सोहे विना सुकृत रूप सुंदर खेत में सुख रू
धान फूलि कै फरि गयो इहां जोतना आदि कर्म्म उपासना ज्ञान है
जो लाभ मुनिहु के मनोरथ को अगम औ अलभ्य है सो लाभ श्रीराम
छोटे लोगन को भी सुगम करि गए ॥ २ ॥ जे कूर कौड़ी के लालची
रहे तिन के पारस सम श्रीरामादि पथिक पाले परे हैं ताते अध्या
रहित भए नहीं जानत हैं कि हम कौन हैं औ कहा करनो है
बिसरि गए न बुद्धि है न विचार है न विगार सुधार की सुधि है देह
गेह नेह नाता सब मन ते निकल गये ॥ ३ ॥ समउ समय पैत दाव
॥ ४ ॥ ३२ ॥

बोले राज देन को रजायसु भो कानन कों आनन प्रसन्न
मन मोद बडो काजु भो। मातु पितु बंधु हित आपनो परम
हित मोकों बीसहू के ईस अनकूल आजु भो ॥ १ ॥ असनु
अजीरन को समुझि तिलक तज्यौ विपिन गवनु भले भूपे कौ
सु नाजु भो। धरमधुरीन धीर वीर रघुवीर जू को कोटि
राज सरिस भरत जू को राजु भो ॥ २ ॥ ऐसी बातें कहत
सुनत मग लोगन की चले जात भात दोउ मुनि को सो साजु
भो। ध्याइबे कों गाइबे कों सेइबे सुमिरिबे कों तुलसी को
... सुपद समाजु भो ॥ ३ ॥ ३३ ॥

इ० । राज देइबे के लिए तो बोलाए औ आज्ञा दिए कानन
रघुना... को मुख प्रसन्न औ मन में आनन्द बड़ो काज बन जावो
होत भयो औ अस गुनत भए कि माता कैकेई को औ पिता को
...त को हमारे बन जावे में हित है औ अपना तो परमहित है।
... बीसो बिस्वे आजु ईश्वर अनुकूल ...यो। ...
कि पितु वचन पालिबे ते वे ...
... को यह
भयो वा

इहां माता आदि को दिन औ वन में मुनि आदि के दर्शन ते आपन दिन राति वा जेहि हेतु अवतार लिए सो कार्य वन जाते ते होयगो याते परमहित ॥ १ ॥ अजीरन पर को भोजन सम राजतिलक को समुझि के त्याग दियो औ निपट भूखे को अनाज प्राप्ति होनो सम वन-गमन भयो भाव जैसे अन्न मिलिवे ते भूखा प्रसन्न होत तस प्रसन्न भए। धर्म्म रूपी धोरी को धरानिहार धीर वीर जो रघुवीर जू तिन को अपने एक राजको को कहि कोटि राज सम भरत जू को राज पाइवो भयो ॥ २ ॥ मुनि के समान साधु भयो है जेहि दोऊ भाइन को ते मगलोगन की ऐसी वातें जेते कहत सुनत चले जात हैं ध्याइवे आदि को तुलसी को सब भांति ते सुखदाता यह पथ को समाज भयो ॥ ३ ॥ ३३ ॥

सिरिस सुमन सुकुमारि सुषमा की सींव सीय राम बडे ै सकोच संग लई है । भाई के प्रान समान प्रिया के प्रान के ान जानि वानि प्रीति रीति कृपा सीलमई है ॥१॥ आलवाल रवध सुकाम तरू काम वेलि दूरि करि कै कई विपति वेलि ई है । आपु पति पूत गुरजन प्रिय परिजन प्रजाहू को टिल दुसह दसा दई है ॥ २ ॥ पंकज से पगनि पानह्यौ र परुष पंथ कैसे निवहे हैं निवहैगे गति नई है । एही ोच संकट मगन मग नर नारि सब को सुमति राम राग ंग रई है ॥ ३ ॥ एक कहै वाम विधि दाहिनो हम को भयो उत कीन्हो पीठि इत को सुडोठि भई है । तुलसी सहित वन वासो मुनि हमरियौ अनायास अधिक अघाइ वनि गई है ॥ ४॥३४ ॥

सिरस इ० । भाई जो श्रीलषनलाल तिन के प्रान समान औ प्रिया जो श्रीजानकी जू तिन के प्रान के प्रान औ कृपा सील मई जो श्रीराम सो सिरिस के फूल सम सुकुमारि औ परम सोभा की मर्यादा

जो श्री जानकी जू तिन की बानि कहैं सुभाव औ प्रीति रीति जा
कै बड़े ही संकोच से संग में लई है ॥ १ ॥ थलहा रूप श्री अवध
तेहि में सुंदर कल्पवृक्ष औ कल्पलता के समान श्रीराम जानकी हैं तिन
कों कैकेई ने दूरि करि कै विपति की बंवरि बोई है। तेहि विपति बौंर की
कुटिल कैकेई ने अपने को औ महाराज आदि को दुसह दसा देति भई॥२॥
एक तो कमल से कोमल चरन हैं ताहू पर जूतो नाहीं औ राह कठ
है तेहि में कैसे निबहे हैं औ कैसे निबहैंगे यह नई गति है। भाव आ
लौं अस नहीं देखा एही सोच औ संकट में मग के नर नारि हुवे
औ सब की सुंदर मति श्री राम की प्रीति रूपी रंग में रंगी है॥ ३॥
पुर नर नारि कहत हैं कि वनवासी मुनि सहित हम सब कै अना
यास अधिक अघाय कै वनि गई है ॥ ४॥३४ ॥

राग गौरी । नीके कै मै न विलोकन पाए। सखि एहि
मग जुग पथिक मनोहर वधु विधुवदनि समेत सिधाए॥१॥
नयन सरोज किसोर वयस वर सीस जटा रचि मुकुट बनाए
कटि मुनिवसन तून धनुसर कर स्यामल गौर सुभाय सुभ
॥ २ ॥ सुंदर वदन विसाल वाहु उर तनु छवि कोटि मनोज
लजाए। चितवत मोहि लगी चौंधी सी जानों न कौन कहाँ
ते धौं आए ॥ ३ ॥ मनु गयौ संग सोचवस लोचन मोचत
वारि कितो समुझाए। तुलसिदास लालसा दरस की सो
है जेहि आनि देखाए ॥ ४॥३५ ॥

नीके इ० ॥ ३५॥ टि०—विधुवदनी चन्द्रमुखी । सिधाए गये॥१
... कमल । जटा से रचि के मुकुट बनाए हैं। मुनिवसन वल्कलादि।
मनोज कामदेव ॥ २ ॥ ३ ॥

पुनि न फिरे दोउ वीर बटाऊ। स्यामल गौर सरू
सुंदर सखि बारक बहुरि बिलोकिबे काज ॥ कर कमलनि
सर सुभग सरासन कटि मुनि वसन निषंग ...

प्रलंब सब चंग मनोहर धन्य सो जनक जननि जेहि जाए ॥ १ ॥ सरद विमल विधु वदन जटा सिर मंजुल चरुन सरोरुह लोचन। तुलसिदास मारग में राजत कोटि मदन मदमोचन ॥ २॥३६ ॥

पुनि इ० सु० ॥ ३६ ॥

राग केदारा। चाली काह्न तो बूझे न पथिक कहां धौं सिधैहैं। कहां ते चाए हैं कोहैं कहा नाम स्याम गोरे काज के कुसल फिरि एहि मग ऐहैं ॥ १ ॥ उठत वयस मसिभीजत सलोने सुठि सोभा दिपवैया बिनु वितहि विकैहैं। हियें हेरि हरि लेत लोनी ललना समेत लोयननि लाहु देत जहां जहं जेहैं ॥२॥ राम लषन सिय पथिक की कथा पृथुल प्रेम बिथकी कहति सुमुखि सबै हैं। तुलसी तिन्ह सरिस तेउ भूरि भाग जेउ सुनि कै सुचित तेहि समै समै हैं ॥३॥३७ ॥

आली इ० सु० ॥१॥ उठत वैस चढ़ती अवस्था, मसिभींजत रेख-उठान ॥ २ ॥ पृथुल विस्तृत, तेहि समै सगै हैं वनवास के समै की कथा में समाहिंगे ॥ ३ ॥ ३७ ॥

बहुत दिन बीते सुधि कछु न लही । गए जे पथिक गोरे सांवरे सलोने सखि संग नारि सुकुमारि रही ॥ १ ॥ जानि पहिचानि बिनु चापु ते चापनेहु ते प्रानहु ते प्यारे प्रियतम उपही। सुधा के सनेहहू के सार लै संवारे विधि जैसे भावते हैं भांति जात न कही ॥ २ ॥ बहुरि बिलोकिबे कबहुं कहत तन पुलक नयन जलधार बही। तुलसी प्रभु सुमिरि ग्रामजुवती सिथिल बिनु प्रयास परी प्रेम सही ॥ ३॥३८ ॥

यहुत इ० गु० ॥ १ ॥ बिना जान पहिचान के उपही कहैं परदेसी हैं पर अपने शरीर ते औ पुत्रादिहु ते औ प्रान हुं ते प्रियतम लां हैं ॥ २ ॥ ३ ॥ ३८ ॥

राग गौरी । आली री पथिक जे एहि पथ परौं सिधाए ते तौ राम लषन अवध ते आए ॥ १ ॥ संग सिय सब अं सहज सुहाए । रति काम रिपुपति कोटिक लजाए ॥ २। राजा दसरथ रानी कौसिला जाए । कैकेई कुचालि करि कानन पठाए ॥ ३ ॥ वचन कुभामिनि के भूपहि क्यौं भाए। हाय हाय राय बाम विधि भरमाए ॥ ४ ॥ कुलगुरु सचिव काहु न समुझाए । कांचमनि लै अमोल मानिक गंवाए ॥ ५ ॥ भाग मगलोगनि के देषन जिन पाए। तुल सहित लिन्ह गुनगन गाए ॥ ६॥३९ ॥

आली इ० । इहां कांच मणि सत्य है ॥ ६ ॥ ३९ ॥

सषि जब ते सीतासमेत देषे दोउ भाई। तब ते परै काल कछु न सुहाई १ नष सिष नीके नीके निरषि निकाई। तनसुधि गई मन अनत न जाई ॥ २ ॥ हेरनि विहसनि हिये लिये हैं चुराई। पावन प्रेमविबस भई हौं पराई ॥३॥ कैसे पितु मातु प्रिय परिजन भाई। जीवत जीव के जीवन वनहि पठाई ॥ ४ ॥ समउ सुचित करि हित अधिकाई प्रीति ग्रामबधुन्ह की तुलसीहूं गाई ॥ ५॥४० ॥

सखी इ० । समी सुचित करि हित अधिकाई। अधिक हित ते सो समै सुंदर चित्त में करि के ग्रामवधुन की प्रीति तुलसिउ ने गाई ॥ ५ ॥ ४० ॥

राग केदारा। जब ते सिधाए एहि मारग लषन राम जानकीसहित तब ते न सुधि लही है । अवध गए धौं

फिरि कैधौं चढ़े विंध्य गिरि कैधौं कहूं रहे सो कछु न काहु कही है ॥१॥ एक कहैं चित्रकूट निकट नदी के तीर परन-कुटीर करि बसे बात सही है। सुनियत भरत मनाइवे को आवत हैं होइगी पै सोइ जो विधाता चित चही है ॥ २ ॥ सत्यसंध धरमधुरीन रघुनाथ जू को आपनी निवाहिबे नृप की निरवही है। दसचारि बरष विहार वन पदचार करिबे पुनीत सैल सर सरि मही है ॥ ३ ॥ मुनि सुर सुजन समाज के सुधारि काज बिगरि बिगरि जहां जहां जाकी रही है। पुर पांउ धारिहैं उधारिहैं तुलसीहू से जन जिन्ह जानि कै गरीबी गाढ़ि गही है ॥ ४॥४१ ॥

जबते इं० सु० ॥ १ ॥२॥ महाराज की तो निवाहि गई है पर श्री-रघुनाथ जू का आपनी निवाहिवे को है, सर तलाव, सरि नदी ॥३।४।४१

राग सारंग। ए उपही कोउ कुंअर अहेरी। स्याम गौर धनु बान तून धर चित्रकूट अब आइ रहेरी ॥ १ ॥ इन्हहि बहुत आदरत महामुनि समाचार मेरे नाह कहेरी। वनिता बंधु समेत बसत वन पितुहित कठिन कलेस सहेरी ॥ २ ॥ वचन परसपर कहति किरातिनि पुलक गात जल नयन बहेरी। तुलसी प्रभुहि विलोकति एकटक लोचन जनु बिनु पलक लहेरी ॥ ३॥४२ ॥

ए उपही इ०। महामुनि अत्रि वाल्मीक आदि।३।४२। टि. उपही परदेशी।

चित्रकूट अति विचित्र सुंदर वन महि पवित्र पावनपय सरित सकल मल निकंदिनी। सानुज जहं बसत राम लोक लोचनाभिराम वाम अंग वामा वर विश्ववंदिनी ॥ १ ॥ रिपि-वर तहं छंद वास गावत कल कोकिलहास कीर्तन उनमाय

काय क्रोध कंदिनी। वर विधान करत गान वारत धनमा
प्रान भरना भरत भिंग भिंग भिंग जल तरंगिनी॥२।
वर विहार चरन चारु पांडर चंपक चनार करनहार बार
पार-पुर पुरंदिनी। जो वन नवढारत ढार दुत्त मत्त
मराल मंजु मंजु गुंजत हैं चलि चलिंगिनी॥३॥ चितवत
मुनिगन चकोर बैठे निज ठौर ठौर अक्षय अकलंक सरद
चंद चंदिनी। उदित सदा वन चकास मुदित वदत तुलसि-
दास जय जय रघुनंदन जय जनकनंदिनी॥३॥४३॥

कलंक रहित चंद श्रीरघुनाथ हैं औ चंदनी श्री जानकी जू
औ इहां आकाश वन है॥३॥४३॥

फटिकसिला मृदु बिसाल संकुल सुरतरु तमाल ललित
लताजाल हरति छवि वितान की। मंदाकिनि तटनि तीर
मंजुल मृग विहंग भीर धीर मुनिगिरा गंभीर सामगान
की॥१॥ मधुकर पिक वरहि मुखर सुंदर गिरि निरभार
झर जलकन घन छांहं छन प्रभा भान की। सब रितु
रितुपति प्रभाउ संतत वहै विविध वाउ जनु बिहार
वाटिका नृप पंचवान की॥२॥ विरचित तहं परनसाल
अतिविचित्र लपनलाल निवसत जहं नित कृपाल राम
जानकी। निज कर राजीवनयन पल्लव दल रचित सयन
प्यास परसपर पियूष प्रेम पान की॥३॥ सिय अंग लिखै
धातुराग सुमननि भूपन विभाग तिलक करनि क्यों कहौं
कला निधान की। माधुरी विलास हास गावत जस तुल-
सिदास वसत हृदय जोरी प्रिय परम प्रान की॥४॥४४॥

कोमल औ विसाल फटिक सिला है। इहां सीता राम के बैठने ते सिला कोमल है गई है। ताते मृदु कहें अवहीं ताईं चिन्ह वना है औ तहां सघन कल्पवृक्ष औ तमाल हैं औ सुंदर तिन्ह वृक्षन पर लतन के समूह हैं ते चंदवा आदि की छवि को हराते हैं। सो सिला मंदाकिनी नामा नदी के तीर में है। तहां सुंदर मृग औ पक्षिन की भीर है औ धीर जो मुनि हैं तिन की गम्भीर वानी सामवेद के गान की है। वा मृग विहंग धीर जो हैं सोई धीर मुनि हैं औ तिन की गिरा जो है सोई गम्भीरता साम गान की है ॥ १ ॥ भ्रमर औ कोइल औ मयूर शब्दायमान हैं औ सुंदर पर्वतन ते झरना झरत हैं सोई जल के बूंद हैं औ वृक्षादि के छांह हैं सो मेघ हैं औ तिन्ह झरनन पर सूर्य की प्रभा जो पड़ै है सो छनप्रभा कहें विजुली है। इहां प्रभा शब्द को देहली-दीपक न्याय करि दूनो ओर लगावना औ सब ऋतु में वसंत ऋतु को प्रभाव है ताते निरंतर सीतल मंद सुगंध वायु वहत है मानो महाराज कामदेव के विहार करने की वाटिका है ॥ २॥३ ॥ धातुराग जो मन-सिला आदि तिन्ह ते श्रीजानकी जी के अंग में लिखे औ फूलनि करि विशेष भाग भूषनन को किए अर्थात् अनेक भूषन बनाए औ कला कारीगरी ताके निधान जो रघुनाथ तिन की तिलक करानि क्यों कहों भाव कहा नहीं जात है ॥ ४ ॥ ४४ ॥

राग केदारा—लोने लाल लषन सलोने राम लोनी सिय चारु चित्रकूटवैठे सुरतरु तर हैं । गोरे सांवरे सरीर पीत नील नीरज से प्रेम रूप सुषमा के मनसिजसर हैं ॥ १ ॥ लोने नष सिष निरुपम निरषिवे जोग वडे उर कंधर विसाल भुज वर हैं। लोने लोने लोचन जटनि के मुकुट लोने लोने बदननि जीते कोटि सुधाकर हैं ॥ २ ॥ लोने लोने धनुष विसिष कर कमलनि लोने मुनिपट कटि लोने सरघर हैं। प्रिया प्रिय बंधु को देषावत विटप वेलि मंजु कुंज सिलातल दल फूल फर हैं ॥ ३ ॥ रिपिन्ह के आश्रम सराहैं मृगनाम

कहुँ लागी मधु सरित झरत निरझर हैं। नाचत बरही नीके गावत मधुप पिक बोलत बिहंग नभ जल थलचर हैं ॥ ४ ॥ प्रभुहिं बिलोकि मुनिगन पुलकि कहत भूरिभाग भए सब नीच नारि नर हैं। तुलसी सो सुप लाइ लूटत किरात कोल जाको सिसिकत सुर बिधि हरिहर हैं ॥५॥४५॥

प्रेम औ रूप औ सुखमा के शरीर जे गोरे सांवरे ते कामदेव के तड़ाग के पीत नील कमल सम हैं ॥ १ ॥ कंधर कांधा सुधाकर चंद्रमा ॥ २ ॥ विशिप कहैं बाण, सरधर कहैं तरकस पहिले तुक में तीनों मूर्ति को बरनन किए फिर दोऊ भाइन के अब केवल रघुनाथ को प्रिया बंधु को देखाउब लिखत हैं। ३ ॥ ऋषिन के आश्रमन को बखानत हैं औ मृगन के नाम कहत हैं अर्थात् यह सांवर है यह चीतर है औ इहां मधु लगी है यह नदी है ए झरना झरि रहे हैं अच्छी भांति ते मोर नाचत हैं भ्रमर गान करत हैं कोइल और नभचर जलचर थलचर बिहंग बोलत हैं अस श्रीरघुनाथ प्रिया औ अनुज सन कहत हैं ॥ ४ ॥ सिसिकत कहैं ललचत ॥ ५ ॥ ४५ ॥

राग सारंग। आइ रहे जब ते दोउ भाई। तब ते चित्रकूट कानन छबि दिन दिन अधिक अधिक अधिकाई ॥१॥ सीताराम लषन पद अंकित अवनि सोहावनि बरनि न जाई। मंदाकिनि मज्जत अवलोकत त्रिबिध पाप त्रयताप नसाई ॥२ उकठेउ हरित भये जल थल रुह नित नूतन राजीव सोहाई। फूलत फलत पल्लवत पलुहत बिटप बेलि अभिमत सुपदाई ॥ ३ ॥ सरित सरनि सरसीरुह संकुल सदन संवारि रमा जनु छाई। कूजत बिहंग मंजु गुंजत अलि जात पथिक जनु लेत बोलाई ॥४॥ त्रिबिध समीर नीर झर झरननि जहं तहं रहे रिषि कुटी बनाई। सीतल सुभग सिलनि पर तापस करत

जोग जप तप मनु लाई ॥५॥ भए सब साधु किरात किरा-तिनि रामदरस मिटि गई कलुषाई । पग म्रग मुदित एक संग विहरत सहज विषम बड बैर बिहाई ॥ ६ ॥ काम केलि वाटिका विबुध बन लघु उपमा कवि कहत लजाई । सकल भुवन सोभा सकेलि मानो राम विपिनि विधि आनि बसाई ॥ ७ ॥ बन मिसु मुनितिय मुनिवालक बरनत रघुवर बिमल बडाई । पुलकि सिथिल तनु सजल बिलोचन प्रमु-दित मन जीवनफल पाई ॥ ८ ॥ क्यों कहौं चित्रकूट गिरि संपति महिमा मोद मनोहरताई । तुलसी जहं बसि लषन राम सिय आनंद अवधि अवध बिसराई ॥ ९॥४६ ॥

त्रिविध पाप कायिक वाचिक मानसिक त्रयताप दैहिक दैविक भौतिक नसात हैं । महाभारते वनपर्वणि । ततोगिरिवरश्रेष्ठ चित्रकूट-विशांपते । मंदाकिनीं समासाद्य सर्वपापप्रनाशिनीम् ॥ तत्राभिषेकं कुर्वा-णः पितृदेवार्चने रतः । अश्वमेधमवाप्नोति गतिश्च परमां व्रजेत्" ॥२॥ जल थल रुह, जल के वृक्ष थल के वृक्ष, राजीव कमल अभिमत सुरसदारु वांछित सुख देनिहारे भाव कल्पवृक्ष समान ॥ ३ ॥ नदिन औ तलावन में सघन कमल हैं मानो कमल नहीं हैं पर पनाइ के लक्ष्मी छाई हैं । पक्षी बोलत हैं भंवर गुंजार करत हैं सो बोलत गुंजार नहीं करत हैं मानो चले जात पथिक को बोलाय लेत हैं ॥४॥५॥ कलुषाई मलीनता ॥ ६ ॥ काम की विहार वाटिका औ विबुध बन नंदन चैत्ररथादि ए लघु हैं ताते उपमा कहत में कवि लजात हैं । बनमिसु बन के बरनन के ब्याज सें ॥ ८ ॥ ९ ॥ ४६ ॥

राग गौरी । देषत चित्रकूट बन मन अति होत हुलास । सीताराम लषन प्रियतापस वृंद निवास ॥१॥ सरित सुहावनि पावनि पाप हरनि पय नाम । सिद्ध साधु सुरसेवित देति सकल मन काम ॥ २ ॥ बिटप बेलि नव किसलय कुसुमित

सघन सुजाति। कंद मूल जल थल रुह अगनित अन बन भांति ॥ ३ ॥ वंजुल मंजु बकुल कुल सुरतरु ताल तमाल। कदलिकदंब सुचंपका पाटल पनस रसाल ॥ ४ ॥ भूरुह भूरि भरे जनु छबि अनुराग सुभाग। बन बिलोकि लघु लागहिं बिपुल बिबुध बन बाग ॥ ५ ॥ जाइ न बरनि राम बन चितवत चित हरि लेत। ललित लता द्रुम संकुल मनहुं मनोज निकेत॥६॥ सरित सरनि सरसीरुह फूले नाना रंग। गुंजत मंजु मधुप गन कूजत बिबिध बिहंग ॥ ७ ॥ लखन कहेउ रघुनंदन देखिय बिपिन समाज। मानहुं चयन मयन-पुर आयउ प्रिय रितुराज ॥ ८ ॥ चित्रकूट पर राउर जानि अधिक अनुरागु। सखासहित जनु रतिपति आयेउ खेलन फागु ॥ ९ ॥ झिल्लि झांझ झरना डफ पनव मृदंग निसान। भेरि उपंग भृंग रव ताल कीर काल गान ॥१०॥ हंस कपोत कबूतर बोलत चक्क चकोर। गावत मनहुं नारि नर मुदित नगर चहुं ओर ॥ ११ ॥ चित्र विचित्र बिबिधि मृग डोलत डोंगर डांग। जनु पुर बीथिन्ह बिहरत छैल संवारे स्वांग ॥ १२ ॥ नटहि मोर पिक गावहिं सुस्वर राग वंधान। निन्न तरुन तरुनी जनु खेलहिं समय समान ॥ १३ ॥ भरि करनि कहं जहं तहं डारहिं वारि। भरत परस-कनि मनहुं मुदित नर नारि ॥ १४ ॥ पीठ चढाइ कपि कूदत डारहिं डार। जनु मुह लाइ गेरु मसि परनि असवार ॥ १५ ॥ लिए पराग सुमन रस डोलत समीर। मनहुं अरगजा छिरकत भरत गुलाल अबीर ॥ १६ ॥ काम कौतुकी एहि बिधि प्रभुहित कौतुक कीन्ह।

गैभि राम रतिनाथ हि जगविजई बर दीन्ह ॥ १७ ॥ दुप घर दाम मोर जनि मानिहु मोरि रजाइ । भलेहि नाथ माथेहि धरि आयसु चले बजाइ ॥ १८ ॥ मुदित किरात किरातिनि रघुबररूप निहारि । प्रभुगुन गावत नाचत चले जोहारि जोहारि ॥ १९ ॥ देहिं असीस प्रसंसहि मुनि सुर बरषहिं फूल । गवने भवन राखि उर मूरति मंगलमूल॥२०॥ चित्रकूट कानन छवि को कवि बरनै पार । जहं सिय लषन सहित नित रघुबर करहिं बिहार ॥ २१ ॥ तुलसिदास चांचरि मिसि कहे रामगुनग्राम । गावहिं सुनहिं नारि र पावहिं सब अभिराम ॥ २२॥४७ ॥

पय कहें पयस्विनी ॥ २ ॥ नव किसले नवीन पल्लव, अन वन ांति अनेक भांति ॥ ३ ॥ बंजुल बेंत, बकुलकुल मौलसरिन के मूह, पाटल कहें पांडर, पनस कटहर, रसाल आम ॥ ४ ॥ भूरुह वृक्ष ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ लषन कहत भए कि रघुनंदन बिपिन को समाज खिए मानो आनन्दयुक्त कामदेव के पुर में प्रिय ऋतुराज आयो । ाव दूसर उत्प्रेक्षा कहत हैं ॥ ८ ॥ ९ ॥ झिल्ली झींगुर, पनव ढोल, भेरी गारा उपंग मुरचंग ॥ १० ॥ कपोत यद्यपि कबूतर का नाम है पर हां कुमरी जानना काहे ते कि कबूतर पृथक लिखा है चक्क चकवा ॥११ ांगर डांग पर्वत के राह ॥ १२ ॥ नटहिं नाचहिं समै समान फागुन ास के अनुकूल ॥१३॥ करिनिकर हंथिनी हाथी, बारि जल ॥ १४ ॥ हां खर के स्थान में बांदर हैं औ बचा जो पीठ पर चढे हैं सो सवार े स्थान, में हैं लाल मुंह वाले बचा मानो गेरू लगाए हैं काले ुख वाले बचा मानो मसी लगाए हैं ॥ १५ ॥ मलयाचल को जो क्षिण वायु है सो फूलन को पराग औ रस लिए डोलत है मानो रस हीं है घोरा भया अरगजा है ताको छिरकत है औ पराग नहीं है ुलाल अबीर है तामें भरत है ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥

सघन सुजाति। कंद मूल जल थल रुह अगनित अन वन भांति ॥ ३ ॥ वंजुल मंजु वकुल कुल सुरतरु ताल तमाल। कदलिकदंव सुचंपका पाटल पनस रसाल ॥ ४ ॥ भूरुह भूरि भरे जनु छवि अनुराग सुभाग। वन विलोकि लघु लागहिं विपुल विवुध वन वाग ॥ ५ ॥ जाइ न वरनि राम वन चितवत चित हरि लेत। ललित लता द्रुम संकुल मनहुं मनोज निकेत॥६॥ सरित सरनि सरसीरुह फूले नाना रंग। गुंजत मंजु मधुप गन कूजत विविध विहंग ॥ ७ ॥ लषन कहेउ रघुनंदन देषिय विपिन समाज। मानहुं चयन मयन-पुर आयउ प्रिय रितुराज ॥ ८ ॥ चित्रकूट पर राउर जानि अधिक अनुरागु। सषासहित जनु रतिपति आयेउ षेलन फागु ॥ ९ ॥ झिल्लि झांझ झरना डफ पनव मृदंग निसान। भेरि उपंग भृंग रव ताल कीर कल गान ॥१०॥ हंस कपोत कवूतर वोलत चक्क चकोर। गावत मनहुं नारि नर मुदित नगर चहुं ओर ॥ ११ ॥ चित्र विचित्र विविधि मृग डोलत डोगर डांग। जनु पुर वीथिन्ह विहरत छैल संवारे स्वांग ॥ १२ ॥ नटहि मोर पिक गावहिं सुस्वर राग वंधान। निलज तरुन तरुनी जनु षेलहिं समय समान ॥ १३ ॥ भरि भरि सूंड करनि कहं जहं तहं डारहिं वारि। भरत परस-पर पिचकनि मनहुं मुदित नर नारि ॥ १४ ॥ पीठ चढाइ सिसुन्ह कपि कूदत डारहिं डार। जनु मुह लाइ गेरु मसि भए षरनि असवार ॥ १५ ॥ लिए पराग सुमन रस डोलत मलय समीर। मनहुं अरगजा छिरकत भरत गुलाल अवीर ॥ १६ ॥ काम कौतुकी एहि विधि प्रभुहित कौतुक कीन्ह।

मानो मधु माधव दोउ अनिप धीर। वर विपुल विटप बानैत बीर॥ मधुकर सुक कोकिल बंदि वृंद। बरनहिं बिसुद्ध जस विविधि छंद॥ ४॥ महि परत सुमन रस फल पराग। जनु देत इतर नृप कर विभाग॥ कलि सचिव सहित नय-निपुन मारि। कियो विश्व विवस चारिहुं प्रकार॥ ५॥ विरहिन पर नित नइ परइ मारि। डांटियहि सिद्धि साधक प्रचारि॥ तिन्ह को न काम सकै चापि छांह। तुलसी जे बसहिं रघुबीर बांह॥ ६॥४८॥

बसंत ऋतु के आए से बनसमाज भलो बन्यो मानो कामदेव महाराज आन भए हैं मानो फाग के बहाना ते प्रथम अनीत करि के होरी के बहाने शत्रुपुर को जारि करि जीति करि वायु के बहाने पत्र रूपी प्रजा को उजारिके फिरि सकल बन में नया नगर बसाए॥१॥२। सुंदर रंगवाली पर्वत की शिला सिंहासन है औ कानन की जो छवि सो काम की पत्नी रति है औ कुरंग हरिन निकटवर्ती जन हैं, श्वेत सुमन श्वेत छत्र है, लता मंडप हैं, चमर वायु है, झरना नगारा है॥३॥ मानो चैत्र औ वैसाख दोऊ धीर सेनापति हैं श्रेष्ठ जे अनेक बिटप ते तेई सेना बानैत बीर हैं। भ्रमर सुआ कोइल ए भाट गन हैं। अनेक छन्द में विशुद्ध यस को बरनत हैं॥ ४॥ महि में फूल रस फल धूरि परत हैं सो मानो आन राजा विभाग पूर्वक कर देत हैं। कालिकाल रूप सचिवसहित नीत में निपुन जो काम है सो विश्व को चारिउ प्रकार ते अर्थात् शाम दाम भेद दंड करि विशेष वश किए॥५॥ बिरहिन के ऊपर नीति नई मारि परति है औ सिद्ध औ साधक प्रचारि करि विशेष डांटे जात हैं। काम तिन्ह की छांह को नहीं दबाय सकत है जे रघुबीर के बांह ते बसत हैं॥ ६॥ ४९॥

राग मलार। सब दिन चित्रकूट नीको लागत। बरषा रितु प्रवेस विशेष गिरि देखत मन अनुरागत॥१॥ चहु दिसि बन संपन्न विहंग मृग बोलत सोभा पावत। जनु सुनरेस देस

॥ २१ ॥ चांचरि मिस्र कहे होरी में चार गायो जात है तेहि के बहाना से ॥ २२ ॥ ४७ ॥

राग वसंत। आजु बन्यो है विपिनि देषो राम धीर। मानो षेलत फाग मुद मदन वीर॥१॥ बट बकुल कदंब पनस रसाल। कुसुमित तरुनिकर कुरवक तमाल॥ मनो विविध वेष धरे छैल जूथ। बिच बीच लता ललना वरूथ॥२॥ पनवानक निरझर अलि उपंग। बोलत पारावत मानो डफ मृदंग॥ गायक सुक कोकिल झिल्लि ताल। नाचत बहु भांति वरहि मराल॥३॥ मलयानिल सीतल सुरभि मंद। बह सहित सुमन रस रेनु बृंद॥ मानो छिरकत फिरत सवनि सुरंग। भ्राजत उदार लीला अनंग॥४॥ क्रीडत क्रीड़े सुर नर असुर नाग। हठि सिद्ध मुनिन्ह के पंथ लाग॥ कह तुलसिदास तेहि छाडु मैन। जेहि राष राम राजीव नैन॥ ५॥४८॥

निकर समूह, कुरवक कोरैया॥२॥ आनक कहैं नगारा। "आनकः पटहोभेर्यां मृदंगे ध्वनदम्बुदे" इत्यभिधानात्। ढोल झरना ढोल औ नगारा है भ्रमर उपंग है॥ ३॥ रेनु पराग॥ ४॥ क्रीड़त जिते खेलवार जीत लिए॥ ५॥ ४८॥

रितुपति आयो भलोबन्यो वनसमाजु। मानो भए हैं मदन महाराज आजु॥ १॥ मानो प्रथम फाग मिस करि अनीति होरी मिस अरिपुर जारि जीति॥ मारुत मिस पत्र प्रजा उजारि। नए नगर बसाए विपिनि झारि॥ २॥ सिंहासन सैलसिला सुरंग। कानन छवि रति परिजन कुरंग॥ सित छत्र सुमन बल्ली वितान। चामर समीर निरझर निसान॥

मानो मधु माधव दोउ श्वनिप धीर। वर विपुल विटप बानैत बीर॥ मधुकर सुक कोकिल वंदि वृंद। बरनहिं बिसुद्ध जस विविधि छंद॥ ४॥ महि परत सुमन रस फल पराग। जनु देत इतर नृप कर विभाग॥ कलि सचिव सहित नय-निपुन मारि। कियो विश्व विवस चारिहूं प्रकार॥ ५॥ बिरहिन पर नित नइ परइ मारि। डांटियहि सिद्धि साधक प्रचारि॥ तिन्ह को न काम सकै चापि छांह। तुलसी जे वसहिं रघुवीर बांह॥ ६॥४८॥

बसंत ऋतु के आए से बनसमाज भलो बन्यो मानो कामदेव महाराज आन भए हैं मानो फाग के बहाना ते प्रथम अनीत करि के होरी के बहाने शत्रुपुर को जारि करि जीति करि वायु के बहाने पत्र रूपी प्रजा को उजारि के फिरि सफल बन में नया नगर बसाए॥१॥२। सुंदर रंगवाली पर्वत की शिला सिंहासन है औ कानन की जो छबि सो काम की पत्नी रति है औ कुरंग हरिन निकटवर्ती जन हैं, श्वेत सुमन श्वेत छत्र है, लता मंडप हैं, चमर वायु है, झरना नगारा है॥३॥ मानो चैत औ वैसाख दोऊ धीर सेनापति हैं श्रेष्ठ जे अनेक बिटपैं ते तेहि सेना वानैवंद वीर हैं। भ्रमर सुआ कोइल ए भाट गन हैं। अनेक छन्द में विशुद्ध यस को बरनत हैं॥ ४॥ महि में फूल रस फल धूरि परत हैं सो मानो आन राजा विभाग पूर्वक कर देत हैं। कलिकाल रूप सचिवसहित नीत में निपुन जो काम है सो विश्व को चारिउ प्रकार ते अर्थात् शाम दाम भेद दंड करि विशेप वश किए॥५॥ बिरहिन के ऊपर नीति नई मारि परति है औ सिद्ध औ साधक प्रचारि करि विशेप डांटे जात हैं। काम तिन्ह की छांह को नहीं दबाय सकत है जे रघुवीर के बांह ते बसत हैं॥ ६॥ ४९॥

राग मलार। सब दिन चित्रकूट नीको लागत। बरषा-रितु प्रवेस विशेष गिरि देषत मन अनुरागत॥१॥ चहु दिसि बन संपन्न विहंग मृग बोलत सोभा पावत। जनु सुनरेस देस

॥ २१ ॥ चांचरि मिस्र कहे होरी में चार गायो जात है तेहि के बाता से ॥ २२ ॥ ४७ ॥

राग वसंत । आजु बन्यो है विपिनि देखो राम धीर मानो खेलत फाग मुद मदन बीर ॥१॥ बट बकुल कदंब पनस रसाल । कुसुमित तरुनिकर कुरवक तमाल ॥ मनो विविध वेष धरे छैल जूथ । बिच बीच लता ललना बरूथ ॥२। पनवानक निरभर अलि उपंग । बोलत पारावत मानो डफ मृदंग ॥ गायक सुक कोकिल झिल्लि ताल । नाचत बहु भांति बरहि मराल ॥३॥ मलयानिल सीतल सुरभि मंद। बह सहित सुमन रस रेनु वृंद ॥ मानो छिरकत फिरत सबनि सुरंग । भ्राजत उदार लीला अनंग ॥४॥ क्रीडत जीते सुर नर असुर नाग । हठि सिध मुनिन्ह के पंथ लाग। कह तुलसिदास तेहि छाडु मैन । जेहि राप राम राजीव नैन ॥ ५॥४८ ॥

निकर समूह, कुरवक कोरैया ॥२॥ आनक कहैं नगारा। "आनक पटहोभेर्यो मृदंगो ध्वनदम्बुदे" इत्यभिधानात् । ढोल झरना ढोल औ नगारे हैं भ्रमर उपंग है ॥ ३ ॥ रेनु पराग ॥ ४ ॥ क्रीड़त जिते खेलत हैं जीत लिए ॥ ५ ॥ ४८ ॥

रितुपति आयो भलो बन्यो बनसमाजु । मानो भए हैं मदन महाराज आजु ॥ १ ॥ मानो प्रथम फाग मिस करि अनीति। होरी मिस अरिपुर जारि जीति ॥ मारुत मिस पत्र प्रजा उजारि । नए नगर बसाए बिपिनि भारि ॥ २ ॥ सिंहासन सैलसिला सुरंग । कानन छवि रति परिजन कुरंग ॥ सित छत्र सुमन बल्ली बितान। चामर समीर निरभर निसान॥

मानो मधु माधव दोउ अनिप धीर। बर बिपुल बिटप बानैत
वीर ॥ मधुकर सुक कोकिल बंदि बृंद । बरनहिं बिसुद्ध
जस बिबिध छंद ॥ ४ ॥ महि परत सुमन रस फल पराग।
जनु देत इतर नृप कर बिभाग ॥ कलि सचिव सहित नय-
निपुन मारि। कियो बिस्व बिबस चारिहुं प्रकार ॥ ५ ॥
बिरहिन पर नित नइ परइ मारि । डांटियहि सिद्धि
साधक प्रचारि ॥ तिन्ह को न काम सकै चापि छांह।
तुलसी जे बसहिं रघुबीर बांह ॥ ६॥४८ ॥

बसंत ऋतु के आए में बनसमाज भयो बन्यो मानो कामदेव
दागत आन भए हैं मानो फाग के बहाना ते प्रथम अनीत करि के
लोगों के बहाने मधुपुर को जारि करि नीति करि वायु के बहाने पत्र
रूपी प्रजा को उजारि के फिरि सकल बन में नया नगर बसाए॥१॥२।
सुंदर रंगवाली पर्वत की शिला सिंहासन है औ कानन की जो छवि
सो काम की पत्नी रति है औ कुरंग हरिन निकटवर्ती जन हैं, श्वेत
सुमन श्वेत छत्र हैं, लता मंडप हैं, चमर वायु है, झरना नगारा है ॥३॥
मानो चैत औ बैसाख दोऊ धीर सेनापति हैं श्रेष्ठ जे अनेक बिटप ते
मानहु सेना बानैत बीर हैं। भ्रमर सुआ कोइल ए भाट गन हैं। अनेक
छन्द में बिशुद्ध यश को बरनत हैं ॥ ४ ॥ महि में फूल रस फल धूरि
परत हैं सो मानो आन राजा बिभाग पूर्वक कर देत हैं। कलिकाल रूप
सचिवसहित नीत में निपुन जो काम है सो बिश्व को चारिउ प्रकार
से अर्थात् शाम दाम भेद दंड करि विशेष वश किए ॥५॥ बिरहिन के
ऊपर नीति नई मारि परति है औ सिद्ध औ साधक प्रचारि करि विशेष
डांटे जात हैं। काम तिन्ह की छांह को नहीं दबाय सकत है जे रघुबीर
के बांह ते बसत हैं ॥ ६ ॥ ४९ ॥

राग मलार। सब दिन चित्रकूट नीको लागत। बरषा-
रितु प्रबिस बिशेष गिरि देषत मन अनुरागत ॥१॥ चहु दिसि
बन संपन्न बिहंग मृग बोलत सोभा पावत। जनु सुनरेस देस

पुर प्रमुदित प्रजा सकल सुप छावत ॥२॥ सोहत स्याम जलद
मृदु घोरत धातु रँगमगे सृंगनि । मनहुं आदि अंभोज
विराजत सेवित सुर मुनि भृंगनि ॥ ३ ॥ सिपर परसि घन
घटहिं मिलत वगपांति सो छवि कवि वरनी । आदिवराह
विहरि वारिधि मानो उठ्यो है दसनि धरि धरनी ॥ ४ ॥
जलजुत विमल सिलनि झलकत नभ वन प्रतिविंव तरंग।
मानहुं जगरचना विचित्र विलसति विराट चंग चंग ॥ ५ ॥
मंदाकिनिहि मिलत झरना झरि झरि भरि भरि जल
आछे । तुलसी सकल सुकृत सुप लागे मानो राम भगति के
पाछे ॥ ६ ॥ ५० ॥

चहुं ओर वन पुष्पफलादि करि सम्पन्न है औ पक्षी मृग बोलत
में सोभा पावत हैं, मानो सुंदर नरेश ते देश औ पुर के प्रजा प्रमुदित
है सकल सुख छावत हैं ॥ २ ॥ पर्वत के ऊपर श्याम मेघ शोभत हैं
औ मृदु घोरत कहैं मधुर धुनि ते गरजत हैं औ सिखरानि से धातु गेरु
मनसिलादि रँगमगे कहैं वाहि चले हैं, मानो परवत नहीं है आदि कमल
है अर्थात् जाते ब्रह्मा उत्पन्न भए । इहां अत्यंत दीर्घ करि आदि कमल
की उपमा दिए सो सुर मुनि रूप भृंगनि करि सेवित हैं । इहां भृंग रूप
श्याम जलद जानना ॥ ३ ॥ शृंगनि को छुइ के वकुलनि की पांति
सघन जो घटा तिन को मिलत है। सो छवि कवि वरनी है, मानो आदि
वराह समुद्र में विहार करि के दांत पर धरनी धरि के उठ्यो है। इहां
आदिवराह पर्वत है वर्षा को जल को नीचे लगा है सो समुद्र है, वग
पांति दसन है, घटा धरनी है वा जो मेघ पर्वत ते मिलि रह्यो है सो
आदिवाराह है ताके ऊपर से वगपांति जो ऊपर निकली है सो
दसन है । दूसरी घटा जो ऊपर है सो भूमि है ॥ ४ ॥ निर्मल सिलनि
में जलयुक्त आकाश वन औ तरंग को प्रतिविंव झलकत है मानो
विराट के अंग अंगनि में जग की रचना विचित्र विशेष लसति है
॥ ५ ॥ ६ ॥ ५० ॥

राग सोरठ। यानु को भोस चोर सो माई। सुन्यो न द्वार वेद बंदी धुनि गुनिगन गिरा सोहाई ॥१॥ निज निज पति सुंदर सदननि ते रूप सील छवि छाई। लेन असीस सीय आगे करि मो पैं सुतवधू न आई ॥ २ ॥ बूझी हौं न विहंसि मेरे रघुवर कहा सुमित्रा माता । तुलसी मनहुं महासुष मेरे देषि न सक्यो विधाता ॥ ३॥५१ ॥

अवध में श्री कौशल्या जी की उक्ति कहत हैं। निज निज पति अपने अपने पति के सुंदर गृहनि ते रूप शील छवि ते छाई जे सुत-वधू हैं ते सीता के आगे करि असीस लेइवे हेतु हमारे पास न आई ॥ ३ ॥ ५१ ॥

जननी निरषति वान धनुहिंया । बार बार उर नयननि लावति प्रभु जु कि ललित पनहिंया ॥१॥ कबहुं प्रथम ज्यों जाइ जगावति कहि प्रिय वचन सकारे। उठहु तात बलि मातु बदन पर अनुज सपा सब द्वारे ॥ २ ॥ कबहुं कहति बड वार भई ज्यों जाहु भूप पैं भैया। बंधु बोलि जेंइये जो भावैं गई नेछावरि मैया ॥ ३ ॥ कबहुं समुझि बनगमन राम को रहि चकि चित्र लिषी सो। तुलसिदास यह समय कहे ते लागति प्रीति सिषी सी ॥ ४॥५१ ॥

प्रीति सिखी सी कहिवे को यह भाव कि जो स्नेह सत्य हो तो कहत ही में शरीर छूटि जाता ॥ ४ ॥ ५२ ॥

माई री मोहि न कोउ समुझावे। राम गमन सांचो किधौं सपनो मन परतीत न आवे ॥१॥ लगे रहत मेरे नयननि आगे राम लषन अरु सीता। तदपि न मिटत दाह या उर को विधि जो भयो बिपरीता ॥ २ ॥ दुष न रहै रघुपतिहिं विलोकत तनु न रहै बिनु देषे । न

प्रान पयान सुनहु सखि चकभि परी एहि लेखे ॥३॥ कौसल्या के विरह बचन सुनि रोइ उठीं सब रानी। तुल-सिदास रघुवीरविरह की पीर न जाति बखानी ॥ ४॥५३॥

छं० ॥ ४ ॥ ५३ ॥

जब जब भवन बिलोकति सूनो। तब तब बिकल होति कौसल्या दिन दिन प्रति दुख दूनो ॥१॥ सुमिरत बाल बिनोद राम के सुंदर मुनिमनहारी। होति हृदय अतिसूल समुझि पदपंकज अजिरबिहारी ॥ २ ॥ को अब प्रात कलेऊ मागत रूठि चलैगो माई। स्याम तामरस नयन स्रवत जल काहि लेउं उर लाई ॥३॥ जियौं तौ बिपति सहौं निसिबासर मरौं तौ मन पछितायों। चलत बिपिनि भरि नयन राम को बदन न देखन पायों ॥ ४ ॥ तुलसिदास यह बिरह दसा अति दारुन बिपति घनेरो। दूरि करै को भूरिकृपा बिनु सोकजनित रुज मेरो ॥ ५॥५४ ॥

...पदपंकज अजिरबिहारी कहिबे को यह भाव कि चरण कमल सम कोमल हैं औ आंगन से बाहर न निकले सो बन में कैसे निबहि हैं ॥ ५॥५४ ॥ टि० यह शोक से उत्पन्न मेरे रोग को बिना भूरिकृपा (रघुनाथ) के कौन दूर करैगा ?

मेरो यह अभिलाष बिधाता। कब पुरवै सखि सानुकूल ह्वै हरि सेवक सुखदाता ॥१॥ सीतासहित कुसल कोसलपुर आवत हैं सुत दोऊ। स्रवन सुधासम बचन सखी कब आइ कहैगो कोऊ ॥ २ ॥ सुनि संदेस प्रेमपरिपूरन संभ्रम उठि धावोंगी। बदन बिलोकि रोकि लोचनजल हरषि हिये लावोंगी ॥ ३ ॥ जनकसुता कब सासु कहै मोहि राम

लषन कहैं मैया। बांह जोरि कब अजिर चलैंगे स्याम गौर दोउ भैया ॥ ४ ॥ तुलसिदास एहि भांति मनोरथ करत प्रीति अति बाढी। थकित भई उर आनि रामछवि मनहुं चित्र लिपि काढी ॥ ५॥५५ ॥

सुगम ॥ ५ ॥ ५५ ॥

सुन्यौ जब फिरि सुमंत पुर आयो। कहिहै कहा प्रानपति की गति नृपति विकल उठि धायो॥१॥ पायँ परत मंत्री अति व्याकुल नृप उठाय उर लायो। दसरथ दसा देषि न कह्यो कछु जो संदेस पठायो ॥ २ ॥ बूझि न सकत कुसल प्रीतम को हृदय यहै पछितायो। साचेहु सुतवियोग सुनिवे कहुं . धिग विधि मोहिं जिआयौ ॥ ३ ॥ तुलसिदास प्रभु जानि निठुर हौं न्याय नाथ विसरायो । हा रघुपति कहि पर्यौ अवनि जनु जल तें मीन बिलगायो ॥ ४॥५६ ॥

सुगम ।४।५६।

सुएहु न मिटैगो मेरो मानसिक पछिताउ। नारि बस न बिचार कीन्हो काज सोचत राउ॥१॥ तिलक को वोलि दियो बन चौगुनो चित चाउ। हृदौ दारिम ज्यों न बिहर्यौ समुझि सील सुभाउ ॥२॥ सीय रघुवर लषन बिनु भय भभरि भग्यो न आउ। मोहि बूझि परत न याते कवन कठिन कुघाउ ॥ ३ ॥ सुनि सुमंत कौ आनि सुंदर सुवन सहित जिआउ। दास तुलसी न तस मो कहं मरन अमिय पिआउ ॥ ४।५७॥

सुएहु इति० सु० ।।१।। दाडिम अनार ।।२।। भाग्यो न आउ आरदाय न भाग्यो ।।३।। हे सुमंत सुनो कि सुंदर पुत्र आनि कर दिनमदिन जिआउ भाव पुत्र विना जिआवना अहितसहित है। हहां महाराज अति पीड़ित हैं तातें ग्रनु के स्थान में सुनि कहे ॥ ४ ॥ ५७ ॥

अवध बिलोकिहौं जीवत रामभद्रबिहीन। कहा करिहै आइ सानुज भरत धरमधुरीन ॥१॥ राम सोक सनेह संकुल तनु बिकल मन लीन। टूटि तारागनन मग ज्यों होत छिन छिन छीन ॥ २ ॥ हृदय समुझि सनेह सादर प्रेम पावन मीन। करी तुलसीदास दसरथ प्रीति परिमिति पीन ।।३।।५८

राम भद्र के विना अवध देखि करि के हम जीवत हैं। अनुज सहित धर्म्मधुरीन जो भरत सो आय करि के कहा करि है। भाव प्रथम जो आए होते तो अस शोक न भोगिबे को परत अर्थात् कैकई को डांटि देते क्योंकि धर्म्मधुरीन हैं। वा भरत धर्म्मधुरीन हैं यह अन्याय-जनित दुख को न सहि सकिहैं ताते आइके कहा करिहैं अर्थात् जिन आवैं ॥ १ ॥ श्रीराम के शोक से तन विकल है औ सनेह ते पूर्ण हैं ताते मनलीन भयो जात है। तारा टूट के आकाश के मग में जैसे छिन छिन छीन होत जात है तस होत है ॥ २ ॥ नेह सहित आदर सहित मीन के प्रेम को हृदय में पवित्र समुझि के गोसाईंजी कहत हैं कि दशरथ महाराज प्रीति की मर्यादा को पुष्ट करत भए। भाव जैसे जल बिना मछरी शरीर त्यागत तस त्यागे ॥ ३॥५८ ॥

राग गौरी। करत राय मन मो अनुमान ॥१॥ सोक विकल मुख वचन न आवै बिछुरे कृपानिधान॥ राज देन कहि बोलि नारिबस मैं जो कह्यो बन जान। आयसु सिर धरि हरषि हिय कानन भवन समान ॥ २ ॥ ऐसे सुत के बिरह अवधि लौं जौ राखौं यह प्रान। तो मिटि जाइ प्रीति की परिमिति अजस सुनौं निज कान ॥ ३ ॥ राम गए अजहूं हौं जीवत समुझत हौं अकुलान। तुलसिदास तन तजि रघुपति हित कियो प्रेम परवान ॥ ४॥५९ ॥

करत इति सुगम ॥ ४॥ ५९ ॥

सोरठ। ऐसो तैं क्यों कटुबचन कह्योरी। राम जाइ

कानन कठोर तेरो कैसे धौं हृदउ रह्योरो ॥१॥ दिनकर वंस पिता दसरथ सो गम लषन से भाई। जननी तू जननी तो कहा कहौं विधि केहि षोरि न लाई ॥ २ ॥ धौं लहिहौं सुप राजमातु ह्वे सुत सिर छत्र धरैगो। कुल कलंक मल-मूल मनोरथ तो बिनु कौन करैगो ॥ ३ ॥ ऐहैं राम सुषी सब ह्वैहैं ईस अजस मेरो हरिहैं। तुलसीदास मोको बडो सोच तू जनम कवन विधि भरिहैं ॥ ४॥६०॥

वशिष्ट जू को कास्मीर दूत भेजब औ भरत जू को आउब आदि कथा छोड़ दिए अब भरतजी की उक्ति कैकेई प्रति लिखत हैं ॥ १ ॥ दिनकर ऐसो वंश भयो औ दसरथ महाराज सम पिता औ श्रीराम लषन से भाई भए तहां हे जननी तू जननी भई तो कहा कहौं विधाता ने केहि को खोटाई नहीं लगाई है। वा हे जननी तूं अपने जननी सम भई यह कथा वाल्मीकी रामायण में स्पष्ट है ॥ २ ॥ कुल को कलंक मल को मूल अस मनोरथ तो विना कौन करैगो कि पुत्र सिर पर छत्र धारण करैगो, हम राजा की माता ह्वै कै सुख पावैंगी ॥ ३ ॥ भरिहै वितइहै ॥ ४॥६०॥

तातें हौं देत न दूषन तोहू। रामबिरोधी उर काठोर ते प्रगट कियो विधि मोहू ॥ १ ॥ सुंदरसुषद सुसील सुधानिधि जरनि जाय जेहि जोए। विष वारुनी बंधु कहियत बिधु नातो मिटत न धोए ॥ २ ॥ होते जौ न सुजानसिरोमनि राम सब के मन माहीं। तौ तेरो करतूति मातु सुनि प्रीति प्रतीति कहाहीं ॥ ३ ॥ मृदु मंजुल सांची सनेह सुचि सुनत भरत वरवानी। तुलसी साधुसाधु सुर नर मुनि कहत प्रेम पहिचानी ॥ ४॥६१॥

राम विरोधी जे कठोर उर तातें विधाता ने हमहूं को प्रगट कियो भाव तब दोषी हमहूं ठहरे ताते तोहू को दोष नहीं देत हौं ॥ १ ॥ सुंदर

सुखदाता सुशील अमृत की राह जोहि की देखिबे ते तपनि जात है ऐसे विधु को भी विष और वारुणी को भी बंधु कहियत है, तो निश्चै भयो कि नाता धोयबे तें नहीं मिटत है ॥ २ ॥ सुजाननि में शिरोमणि और सब के मन माहीं श्रीराम जो न होते तो हे माता तेरी करतूति सुनि के हमारी प्रीति प्रतीति कहां रही अर्थात् कहीं नहीं रही ॥ ३ ॥ कोमल सुंदर सांची नेह सहित औ शुद्ध ऐसी जो भरत की श्रेष्ठ बानी ताको सुनत मात्र सुर नर मुनि प्रेम पहिचानिकै ठीक है ठीक है कहत हैं ॥ ४ ॥ ६१ ॥

जौं पै हौं मातुमते महुं ह्वै हौं। तौ जननी जग में या मुष की कहां कालिमा ध्वैहौं ॥१॥ क्यौं हौं आजु होत सुचि सपथनि कौन मानिहैं सांची। महिमा मृगी कौन सुकृति की षल बचन बिसिष ते बांची ॥ २ ॥ गहि न जाति रसना काहू की कहौं जाहि जोइ सूझै। दीनबंधु कारुन्यसिंधु बिनु कौन हिये की बूझै ॥ ३ ॥ तुलसी रामबियोग बिषम बिष बिकल नारि नर भारी। भरत सनेह सुधा सींचे सब भये ते समय सुषारी ॥ ४॥६२ ॥

कौसल्याजी के प्रति भरतजी की उक्ति ॥ १ ॥ आजु सपथनि से हम कैसे शुद्ध है सकत हैं। हमारी बात को कौन साचो मानैगो। कौन सुकृती की महिमा रूप मृगी खल के वचन रूप बान ते बची है। भाव नहीं बची है ॥ २॥३॥४॥६२ ॥ टि० महुं मैं, रसना जीभ।

काहे को पोरि कैकइहि लावौं। धरहु धीर बलि जाउं तात मोको आजु बिधाता बावौं ॥ १ ॥ सुनिबे योग बियोग राम को हौं न होंउ मेरे प्यारे। सो मेरे नयननि आगे तें पुत्र... बनहिं सिधारे ॥ २ ॥ तुलसिदास समुझाइ भरत कहं आंसु पोछि उरलाए। उपजी प्रीति जानि प्रभु के हित मनहुं राम फिरि आए ॥ ३॥६३ ॥

कौसल्याजी की उक्ति है। टि० पारि दोष। रघुनाथ जी का वियोग मैं सुनने योग्य नहीं रही, सो मेरे नेत्रों के सामने वन सिधाये, मैं जीवत रही क्योंकि विधाता हम से वाम हैं ॥ २ ॥ ६३ ॥

मेरो अवध धौं कहहु कहा है। करहु राज रघुराजचरन तजि लै लटि लोगु रहा है ॥१॥ धन्य मातु हौं धन्य लागि जेहि राजसमाज ढहा है। ता पर मोसों प्रभु करि चाहत सब बिनु दहन दहा है ॥ २ ॥ राम सपथ कोउ कछू कहै जिनि मैं दुख दुसह सहा है। चित्रकूट चलिहैं प्रातहि चलि छमिऐ मोहि हहा है ॥ ३ ॥ यों कहि भोर भरत गिरिवर को मारग बूझि गहा है। सकल सराहत एक भरत जग जनमि सुलाहु लहा है ॥ ४ ॥ जानिहि सिय रघुनाथ भरत को सील सनेह महा है। कै तुलसी जाको रामनाम सों प्रेम नेम निबहा है ॥ ५॥६४ ॥

श्रीभरतजी की उक्ति है। मेरो अयोध्याजी में कहो तो क्या है अर्थात् कुछ नहीं है। रघुनाथ को चरण छांड़ि के राज करहु अस लै लगाइ के लोग कहँ रटि रहा वा मालै में लोग लटि रहा है ॥ १ ॥ हमारी माता धन्या हैं औ हम धन्य हैं काहे ते कि जेहि के निमित्त राजसमाज ढहा है कहँ बिगरि गया है, ताहू पर हमारे ऐसे को स्वामी करि के बिना अगिनि के सब जरा चाहत हैं ॥ २ ॥ मेरी हहा कहँ बिनती है छमा कीजिये हम प्रातःकाल चलैंगे, आप सब चलिये ॥३॥ गिरवर कामदनाथ, जगत में जनमि के एक भरतै ने सुंदर लाभ को लहा है अस सकल सराहत हैं ॥४॥५॥६४॥

आई हौं अवध कहा रहि लहिहौं। राम लपन सिय चरन बिलोकन काल्हि काननहि जैहौं ॥१॥ जद्यपि मो तें कै

सुखदाता सुशील अमृत की राह जोहि की देखिबे ते तपनि जात है ऐसे विधु को भी विष और वारुणी को भी बंधु कहियत है, तो निश्चै भयो कि नाता धोयबे तें नहीं मिटत है ॥ २ ॥ सुजाननि में शिरोमणि औ सब के मन माहीं श्रीराम जो न होते तो हे माता तेरी करतूति सुनि के हमारी प्रीति प्रतीति कहां रही अर्थात् कहीं नहीं रही ॥ ३ ॥ कोमल सुंदर सांची नेह सहित औ शुद्ध ऐसी जो भरत की श्रेष्ठ वार्ता ताको सुनत मात्र सुर नर मुनि प्रेम पहिचानिकै ठीक है ठीक है कहत हैं ॥ ४ ॥ ६१ ॥

जौं पै हौं मातुमते महुं ह्वैहौं। तौ जननी जग में या मुख की कहां कालिमा ध्वैहौं ॥१॥ क्यों हौं आजु होत सुचि सपथनि कौन मानिहैं सांची। महिमा मृगी कौन सुकृती की खल वचन विसिष ते बांची ॥ २ ॥ गहि न जाति रसना काहू की कहौं जाहि जोइ सूझै। दीनबंधु कारुन्यसिंधु बिनु कौन हिये की बूझै ॥ ३ ॥ तुलसी रामवियोग विषम विष विकल नारि नर भारी। भरत सनेह सुधा सींचे सब भये ते समय सुखारी ॥ ४॥६२ ॥

कौसल्याजी के प्रति भरतजी की उक्ति ॥ १ ॥ आजु सपथनि तें हम कैसे शुद्ध है सकत हैं। हमारी बात को कौन साचो मानैगो। काहे सुकृती की महिमा रूप मृगी खल के वचन रूप बान ते बची है। भा नहीं बची है ॥ २॥३॥४॥६२ ॥ टि० महुं मैं, रसना जीभ।

काहे को पोरि कैकइहि लावौं। धरहु धीर बलि जाउं तात मोको आजु विधाता वावौं ॥ १ ॥ सुनिवे योग वियोग राम को हौं न होउ मेरे प्यारे। सो मेरे नयननि आगे तै रघुपति बनहिं सिधारे ॥ २ ॥ तुलसिदास समुझाइ भरत कहं आंसु पोछि उरलाए। उपजी प्रीति जानि प्रभु के हित मनहुं राम फिरि आए ॥ ३॥६३ ॥

कौसल्याजी की उक्ति है। टि० पोरि दोष। रघुनाथ जी का वियोग मैं सुनने योग्य नहीं रही, सो मेरे नेत्रों के सामने बन सिधाये, मैं जीवत रही क्योंकि विधाता हम से बाम हैं॥ २॥ ६३॥

मेरो अवध धौं कहहु कहा है। करहु राज रघुराजचरन तजि लैं लटि लोगु रहा है॥१॥ धन्य मातु हौं धन्य लागि जेहि राजसमाज ढहा है। ता पर मोसों प्रभु करि चाहत सब बिनु दहन दहा है॥ २॥ राम सपथ कोउ कछू कहै जनि मैं दुख दुसह सहा है। चित्रकूट चलिहौं प्रातहि चलि छमिऐ मोहि हहा है॥ ३॥ यों कहि भोर भरत गिरिवर को मारग बूझि गहा है। सकल सराहत एक भरत जग जनमि सुलाहु लहा है॥ ४॥ जानहि सिय रघुनाथ भरत को सील सनेह महा है। कै तुलसी जाको रामनाम सों प्रेम नेम निबहा है॥ ५॥६४॥

श्रीभरतजी की उक्ति है। मेरो अयोध्याजी में कहो तो क्या है अर्थात् कुछ नहीं है। रघुनाथ को चरण छोड़ि के राज करहु अस लै लगाइ के लोग कहैं रटि रहा वा मालै में लोग लटि रहा है॥ १॥ हमारी माता धन्या हैं औ हम धन्य हैं काहे ते कि जेहि के निमित्त राजसमाज ढहा है कहैं बिगरि गया है, ताहू पर हमारे ऐसे को स्वामी करि के बिना अगिनि के सब जरा चाहत हैं॥ २॥ मेरी हहा कहैं बिनती है छमा कीजिये हम प्रातःकाल चलैंगे, आप सब चलिये॥३॥ गिरवर कामदनाथ, जगत में जनमि के एक भरतै ने सुंदर लाभ को लहा है अस सकल सराहत हैं॥४॥५॥६४॥

भाई हौं अवध कहा रहि लहिहौं। राम लषन सिय चरन बिलोकन कालि काननहि जैहौं॥१॥ जद्यपि मो तें कै

कुमातु ते ह्वै आई अति पोची । सनमुप गये सरन रापति
रघुपति परम सकोची ॥ २ ॥ तुलसी यों कहि चले भोरा
लोग बिकल संग लागे । जनु बन जरत देपि दारुन द
निकसि बिहँग मृग भागे ॥ ३॥६५ ॥

सुगम ॥ ६५ ॥ टि०—पोची अत्यन्तबुराई, दारुन भयंकर, द
बनडाढ़ा ।

सुक सों गह्वर हिय कहै सारो । बीर कीर सिय राम
लपन बिनु लागत जग अंधियारो ॥१॥ पापिन चेरि अयानि
रानि न्टप हित अनहित न बिचारो । कुल गुर सचिव साधु
सोचत बिधि को न बसाइ उजारो ॥२॥ अवलोकै न चलत
भरि लोचन नगर कोलाहल भारो । सुने न बचन करुना-
कर के जब पुर परिवार सँभारो ॥ ३ ॥ मैया भरत भावते
के सँग बन सब लोग सिधारो । हम पर पाइ पींजरन तर-
सत अधिक अभाग हमारो ॥४॥ सुनि खग कहत अंब मौंगी
रहु समुझि प्रेमपथ न्यारो । गए ते प्रभु पहुंचाय फिरे पुनि
करत करम गुनगारो ॥ ५ ॥ जीवन लग जानकी लपन
को मरन सनेह संवारो । तुलसी और प्रीति की चरचा
करत कहा कछु चारो ॥ ६॥६६ ॥

मैना सुआ सो व्याकुल हृदय कहै हैं । हे भाई सूआ श्री सीता राम
लखन बिना जगत अँधियारो लागत है ॥ १ ॥ पापिन जो चेरी
औ बुद्धिहीन रानी और महाराज ने हित अनहित नहीं विचार
किया । वशिष्ट जी औ सुमंत्रादि मंत्री और साधुजन सोचत हैं कि
विधाता ने बसाय के कौन को नहीं उजारेउ अर्थात् सब को उजारे
॥ २ ॥ चलत के नेत्र भरि देखे नहीं और जब पुर परिवार को समाह
आराधन कियो तब नगर में महत शब्द रह्यो ताते करुनाकर के

वचन न सुने ॥ ३ ॥ प्रिय जो भैया भरत तिन के संग वन में सब लोग गए औ हम पंख पाय कै पींजरन में तरसत हैं। भाव जिन के पंख नाहीं ते गए औ हम नाहीं, ताते अधिक अभाग हमारो है।४॥ सुआ मुनि के कहत है कि हे अम्ब मैनी प्रेम को पथ न्यारो है यह समुझि कै मौगी कहँ मौन रहु जे प्रभु के संग गए ते पहुंचाय कै कर्म के करतब की निंदा करत पुनि फिरे ॥५॥ जीवन तो जग में श्री जानकी औ लखन लाल को है औ महाराज ने मरन बनायो है और प्रीति की चरचा काहे को करत हैं काहे ते कि कुछ है सकत नाहीं। भाव न मरतै वना न संग जातै वना ॥ ६।६७ ॥

कहै सुक सुनहिं सिपावन सारो। बिधि करतब विपरीत वामगति राम प्रेमपथ न्यारो ॥१॥ को नर नारि अवध पग मृग जेहि जीवन राम ते प्यारो। विद्यमान सब के गवने वन वदन करम को कारो ॥ २ ॥ बंध अनुज प्रिय सपा सुसेवक देपि विपाद विसारो। पञ्ची परवस परे पींजरनि लेपौ कौन हमारो ॥ ३ ॥ रहि नृप की विगरो है सब को अब एक संवारनिहारो। तुलसी प्रभु निजचरनपीठ मिस भरत प्रान रपवारो ॥ ४ ॥ ६७ ॥

शुक कहत है कि हे मैना सिखावन सुनो। विधि के विपरीत करतब से वक्र गति है औ श्रीराम के प्रेम को पथ न्यारो है ॥ १ ॥ अवध में कवन नर नारि खग मृग अस हैं कि जेहि के राम ते प्यारो जीवन है परंतु सब के रहत जो श्रीराम वन को गए तो करम को मुह कारो है ॥ २ ॥ माता औ बंधुवर्ग औ प्रियसखा औ सुसेवक देखि के विषाद को विसरायो वा अनुज प्रिय सखा सुसेवकों को देखि कै माता सब विपाद को विसरायो तो हम तो पक्षी हैं ताहू में परवश पींजरन में परे हैं तो हमारो कवन लेखो है। ३। एक महाराज की तो रही और सब की बिगरी अब एक संवारनिहारो है जो प्रभु निज चरण पादुका के बहाना ते भरत के प्रान को रखवारो है ॥ ४। ६७ ॥

तादिन सृंगवेरपुर आए। रामसषा ते समाचार सुनि वारि विलोचन छाए ॥१॥ कुससाथरी देषि रघुपति की हेतु अपनपौ जानो। कहत कथा सिय राम लषन की बैठेहि रैन विहानो ॥ २ ॥ भोरहि भरद्वाज आश्रम ह्वै करि निषाद-पति आगे। चले जनु तक्यों न डाग तृषित गज घोरघाम के लागे ॥ ३ ॥ बूझत चित्रकूट कहं जेहि तेहि मुनिबालकनि बतायो। तुलसी मनहुं फनिक मनि ढूंढत निरषि हरषि हिय धायो ॥ ४ ॥ ६८ ॥

पद सुगम ॥ ६८ ॥

विलोकि दूरि ते दोउ वीर। उर आयत आजानु सुभग भुज स्यामल गौर सरीर ॥ १ ॥ सीस जटा सरसीरुह लोचन बने परिधनु मुनिचीर। निकट निषंग संग सिय सोभित करनि धुनत धनु तीर ॥२॥ मन अगहुड तन पुलकि सिथिल भयो नलिन नयन भरे नीर। गडत गोड मानो सकुच पंक मंह कढत प्रेम वलधीर ॥ ३ ॥ तुलसिदास दसा देषि भरत की उठिधाये अतिहि अधीर। लिए उठाइ उरलाइ कृपानिधि विरहजनित हरि पीर ॥ ४ ॥ ६९ ॥

आयत विसाल, आजानभुज जानु पर्यंत वाहुं ॥ १ ॥ वने परिधनु मुनिचीर मुनिचीर जे वल्कल ते परिधन कहें वस्त्र वने हैं ॥ २ ॥ अगहुड अग्रवर्ती ॥ ३ ॥ हरि कहें हरि लिए ॥ ४॥६९ ॥

राग केदारा। भरत भए ठाढे करजोरि। ह्वै न सकत हैं सकुच वस समुझि मातुकृत षोरि ॥१॥ फिरिहैं किधौं न कहिहैं प्रभु कलपि कुटिलता मोरि। हृदय सोच वड़ ए विलोचन देह नेह भइ भोरि ॥ २ ॥ वनवासी पुर लोग

कमलनैन किये हैं काठ के से कोरि । देहिं उत्तर मुनिवै को गई तहँ रहे प्रेम मन बोरि ॥ ३ ॥ तुलसी राम सुभाव सुमिरि उर धरि धीरजहि बहोरि । बोले वचन विनीत उचित हित करुनारसहि निचोरि ॥ ४॥७० ॥

करुणा करना करि के अर्थात् विचारि के । देह नेह भई भोर होत्याग रहित भए ॥ २ ॥ काठ के से स्वरूप से बनाए भए हैं भाव सब जड़ से है रहे हैं, प्रेम पन बोरि प्रेम से मन को बोरि रहे हैं ॥ ३ ॥ ७० ॥

जानत हौ सबही के मन की । तदपि कृपाल करौं बिनती सोइ सादर सुनहु दीनहित जन की ॥१॥ ए सेवक संतत अनन्य अति ज्यौं चातकहि एक गति घन की । यह विचारि गवनहु पुनीत पुर हरहु दुसह आरत परिजन की ॥ २ ॥ मेरो पुनि जीवन जानिए ऐसोइ जिय जैसो अहि जासु गई मनिफन की । मेटहु कुलकलंक कोसलपति आज्ञा देहु नाथ मोहि बन की ॥ ३ ॥ मोको जोइ जोइ लाइए लागै सोइ सोइ जो उतपति कुमातु ते या तन की । तुलसीदास सब दोष दूरि करि प्रभु अब लाज करहु निज पन की ॥ ४॥७१ ॥

ए अवधवासी सब निरंतर अति अनन्य सेवक हैं। जैसे चातक को एक मेघ की गति है भाव तैसे इन जनन को एक आप की गति है ॥ २ ॥ पुनि हमारो जीवन अस जानिए कि जेहि सर्प के फणि की मणि गई जैसे सो जीवै । हे कोसलपति कुल को कलंक मेटहु । हे नाथ मोको वन जावे की आज्ञा देहु । इहां कुल को कलंक छोटे को राज्य होनो बड़े को वन जानो है ॥ ३ ॥ जो या तन की उतपत्ति कुमातु सें है याते मोको जोई जोई दोष लगाए सोई सोई लागै । निज पन की कहै शरनागत पालिबे की लज्जा । ४ ॥ ७१ ॥

तात विचारो धौं हौं क्यों आवों। तुम्ह सुचि सुहृद सुजान सकल विधि बहुत कहा कहि कहि समुझावों ॥१॥ निज कर खाल खैंचि या तन ते जौं पितु पग पानहीं करावों। होउ न उरिन पिता दसरथ तें कैसे ताको वचन मेटि पति पावों ॥ २ ॥ तुलसिदास जाको सुजस तिहूं पुर क्यों तेहि कुलहि कालिमा लावों। प्रभु रुप निरषि निरास भरत भए जान्यो है सबहि भांति विधि वावों ॥ ३॥७२ ॥

हे तात भरत विचारो तो कि मैं क्यों वन को आयो ।१॥ करावों कहैं वनचावों, पति पावों कहैं मर्यादा पावों । २ ॥ कुलहि कालिमा-लावों कहिवे को यह भाव सत्यप्रतिज्ञ कुल है॥ ३ ॥ ७२ ॥

राग सोरठ। बहुरों भरत कह्यो कछु चाहे । सकुच सिन्धु वोहित विवेक करि बुधि बल वचन निवाहे ॥१॥ छोटेहु तें छोह करि आए मैं सामुहे न हेरो। एकहि वार आजु विधि मेरो सील सनेह निवेरो ॥ २ ॥ तुलसी जौं फिरिवो न बनै प्रभु तौ हौं आयसु पावों। घर फेरिये लषन लरिका हैं नाथ साथ हौं आवों ॥ ३॥७३ ॥

फेरि भरत कछु कहा चाहत हैं सकुच रूप समुद्र में अपने विवेक जो जहाज करि के तेहि जहाज को बुद्धि औ वचन के बल तें निवाहत हैं अर्थात् कुठौर में नहीं परै देत हैं। वा बुद्धि औ वचन रूप सैना को तेहि जहाज पर निवाहत हैं ॥ २ ॥ निवेरो कहैं दूरि कियो, हौं आवों हम चलैं । ३ ॥ ७३ ॥

रघुपति मोहि संग किन लीजै। वार वार पुर जाइ नाथ केहि कारन आयसु दीजै ॥१॥ जद्यपि हौं अति अधम कुटिलमति अपराधिनि को जायो। प्रनतपाल कोमल सुभाउ जिय जानि सरन तकि आयो ॥ २ ॥ जो मेरे तजि

चरन आनि गति कहीं हृदय कछु राखी । तौ परिहरहु दयाल दीनहित प्रभु अभिअंतरसाखी ३ ॥ ॥ ताते नाथ कहौं मैं पुनि पुनि प्रभु पितु मातु गोसाईं । भजनहीन नर-देह हथा पर स्वान फेरु की नाईं ॥ ४ ॥ बंधुवचन सुनि श्रवन नयन राजीव नीर भरि आए । तुलसिदास प्रभु परम कृपा गहि बांह भरत उर लाए ॥ ५॥७४ ॥

जो मो कों चरन छोड़ि के आन गति होय औ हृदय में कछु राखिं के कहत होउं तौ हे दयाल, हे दीनहित, हे प्रभु, हे अंतरजामी त्यागि देहु ॥ ३ ॥ फेरू शृगाल ॥ ४ ॥ ५ ॥ ७४ ॥

काहे को मानत हानि हिये हो । प्रीति नीति गुन सील धरम कहँ तुम अवलंब दिये हो ॥ १ ॥ तात जात जानिबे न ए दिन करि प्रमान पितुबानी । ऐहौं वेगि धरहु धीरज उर कठिन कालगति जानी ॥२॥ तुलसिदास अनुजहि प्रबोधि प्रभु चरमपीठ निज दीन्हे । मनहुं सबन के प्रानपाहरू भरत सीस धरि लीन्हे ॥ ३ ॥ ७५॥

हो भरत काहे को हानि हृदय में मानत हौ । प्रीति औ नीति औ गुण औ शील औ धर्म्म को तुमहीं अवलंब दिए हौ ॥ १ ॥ हे तात ए जे चौदह वर्ष के दिन हैं तिन के जाते न जानोगे ॥ २ ॥ ३ ॥ ७५।

बिनती भरत करत कर जोरे । दीनबंधु दीनता दीनकी कबहुं परै जनि भोरे ॥१॥ तुम्ह से तुम्हहिं नाथ मोकों मो से जन तुम को बहुतेरे । यहै जानि पहिचानि प्रीति छमिबे अघ औगुन मेरे ॥ २ ॥ यौं कहि सीय राम पायन परि लखन लाइ उर लीन्हे । पुलक सरीर नीरभरि लोचन कहत प्रेम पनु कीन्हे ॥३॥ तुलसी बीते अवध प्रथमदिन जौ रघुबीर न

ऐहौ । तौ प्रभुचरनसरोज सपथ जीवत परिजनहि न पैहौ ॥ ४ ॥ ७६ ॥

सु० ॥७१॥ टि०—पुलक शरीर से नेत्रों में जल भरि के प्रेम क
प्रतिज्ञा से कहा कि अवधि बीतने पर पहलेही दिन यदि न आवेंगे तो
परिजन को जीवित नहीं पावेंगे ।

अवसि हौं आयसु पाय रहौंगो । जनमि कैकई कोषि
कृपानिधि क्यों कछु चपरि कहौंगो ॥ १ ॥ भरत भूप सिय-
राम लषन वन सुनि सानंद सहौंगो । पुरपरिजन अवलोकि
मातु सव सुष संतोष लहौंगो ॥ २ ॥ प्रभु जानत जेहिं भांति
अवधलौं वचन पालि निवहौंगो । आगे की विनती तुलसी
तव जव फिरि चरन गहौंगो ॥ ३ ॥ ७७ ॥

चपरि चाव पूर्वक ॥ १ ॥ भरत राजा हैं श्रीसीता राम लषन वन
में हैं यह वचन सुनि के आनन्दसहित सहौंगो । पुरपरिजन औ सब
मातन को देखि के अर्थात् विकल देखि के सुख औ संतोष को पावौंगो
॥ २ ॥ जेहि भांति अवधि लौं वचन पालि के निवहैंगे सो प्रभु जानत
हैं । जब फेरि चरण गहैंगे तब आगे की विनती करैंगे भाव आप
सिंहासन पर वैठिए यह विनती करैंगे ।३.७७॥

प्रभुसो मैं ढीठ्यौ वहुत दई है । कीवी छमा नाथ आरति
ते कह्यो कुजुगति नई है ॥१॥ यौं कहि वार वार पायनि परि
पांवरि पुलकि लई है । अपनो अदिन देषि हौं डरपत जेहिं
विषवेलि वई है ॥ २ ॥ आयो सदा सुधारि गोसाईं जन ते
विगरि गई है । थके वचन पैरत सनेहसरि पर्यो मानो घीर
घई है ॥ ३ ॥ चित्रकूट तेहि समय सवनि को बुद्धि विषाद
हई है । तुलसी राम भरत के विछुरत सिला सप्रेम भई
है ॥ ४ ॥ ७८ ॥

प्रभु सों मैं बहुत ढिठाई करी है औ आरति ते नई कुजुगुति कही है। हे नाथ ताको छमा कीजिएगा। १ ॥ पांवरि पादुका, हौं कहैं हम ॥ २ ॥ हे गोसाईं जो जन ते बिगरि गई है ताको आप सदा सुधारत आए हौ। एतना कहि बचन थकित भए, मानों सनेह रूप नदी के पैरत में घोर प्रवाह में पर्‍यो है। ३। तेहि समै चित्रकूट में सबनि के बुद्धि को विपाद ने नाशी है। गोसाईं जी कहत हैं कि श्रीभरत जू को बिछुरत में और को को कहैं शिलो प्रेमसहित भई है, भाव पघिलि गई है ।४।७८

अवते चित्रकूट ते आए। नंदिग्रामप्रनि अवनि डासि-कुस परनकुटी करि छाए ॥१॥ अजिन वसन फल असन जटा धरे रहत अवधि चित दीन्हे। प्रभुपद प्रेम नेम व्रत निरखत मुनिन्ह नमित मुख कीन्हे ॥ २ ॥ सिंहासन पर पूजि पादुका बारहिं बार जोहारे। प्रभु अनुराग मागि आयसु पुरजन सब काज संवारे ॥ ३ ॥ तुलसी ज्यौं ज्यौं घटत तेजतनु त्यौं त्यौं प्रीति अधिकाई। भए न हैं न होहिंगे कबहूं भुअन भरत से भाई ॥ ४ ॥ ७९ ॥

अजिन मृगचर्म, मुनिन्ह नमित मुख कीन्हे कहिबे को यह भाव कि राजकुमार होय के अस तप ए करत हैं तस हम नहीं करि सकत हैं॥ २॥ अनुरागपूर्वक प्रभु जो चरनपादुका तिन्ह से आज्ञा मांगि करि के पुरजनन के सब काज संवारे हैं ॥ ३ ॥ ४ ॥७९॥

राग रामकली—राखी भगति भलीभलाई भलीभांति भरत। स्वारथ परमारथ पथी जय जय जग करत ॥१॥ जो व्रत मुनिवरनि कठिन मानस आचरत। सो व्रत लियो चातक ज्यौं सुनत पातक हरत ॥ २ ॥ सिंहासन सुभग रामचरन-पीठ धरत। चालत सब राजकाज आयसु अनुसरत ॥ ३ ॥ आपु अवध बिपिनि बंधु सोच जरनि जरत। तुलसी सम विषम सुगम अगम लखि न परत ॥ ३ ॥ ८० ॥

भली भांति ते भरत ने भली भगति औ भली भलाई राखी है वा भली भलाई ते भली भांति भरत ने भगति राखी ॥ भरत स्वारथ औ परमारथ के पथी हैं अस कहि जगत जैसे कहत है वा जगत में जेतने स्वारथ औ परमारथ के पथी हैं ते जैसे कहत हैं ॥ १ ॥ कठिन मानस हठयोगादि ते वा कठिन करि मन को अर्थात् रोकि के ॥ २ ॥ चरनपीठ के आज्ञानुसार सब राजकाज चलावत हैं ॥ ३ ॥ आप तो अवध में हैं औ वन में भाई हैं ताते सोच रूप जरनि ते जरत हैं। गोसाईं जी कहत हैं कि भरत जी को सम विषम सुगम अगम कछु नहीं लखि परत हैं। अर्थात् अत्यंत सोच है ताते वा सम औ सुगम ठौर में भरत जू औ विषम औ अगम ठौर में राम जू हैं पर लखि नहीं परत कि के कहां हैं। भाव भरत जू यद्यपि सम सुगम ठौर में हैं पर जब सोच जरनि में जरत हैं तब विषमै अगम में हैं औ श्रीराम जू यद्यपि विषम अगम में हैं पर शोचरहित हैं तो सम सुगम में हैं ॥ ४ ॥ ८० ॥

मोहि भावति कहि आवति नहिं भरतजू की रहनि। सजल नयन सिथिलि वयन प्रभुगुनगन कहनि ॥१॥ असन वसन अयन सयन धरम गरुअ गहनि। दिन दिन मन प्रेम नेम निरुपधि निरवहनि ॥२॥ सीता रघुनाथ लषन विरह पीर सहनि। तुलसी तजि उभय लोक रामचरन चहनि ॥३॥८१॥

असन भोजन, वसन वस्त्र, अयन गृह औ सैन औ भारी धर्म का ग्रहन करना ॥ २ ॥ ३ ॥ ८१ ॥

जानी है संकर हनुमान लषन भरत रामभगति। कहत अगम करत सुगम सुनत मीठी लगति ॥ १ ॥ लहत सकत चहत सकल जुग जुग जगमगति। रामप्रेमपथ ते कबहूं डोलत नहिं डगति ॥ २ ॥ रिधि सिधि विधि चारि सुगति जा विनु गति पगति। तुलसी तेहि सनमुष विनु विषय ठगनि ठगति ॥ ३ ॥ ८२ ॥

श्रीशंकर श्रीहनुमान श्रीलषनलाल श्रीभरत जू ने रामभक्ति जानी है। वह रामभक्ति कैसी है कि कहिवे में सुगम है औ करिवे अगम है औ सुनत में मीठी लगति है ॥ १ ॥ तेहि भक्ति को सकल चाहत हैं पर कोऊ एक पावत हैं औ जुग जुग में जगमगाति रहति है। भाव कबहूं मलानि परत नाहीं औ श्री राम के प्रेम रूप पथ ते कबहूं डोलति औ डगति नहीं है ॥ २ ॥ रिद्धि सिद्धि औ चारो भांति की मोक्ष कहैं उपाय सो जा विना अगति है तेहि भक्ति के सन्मुख विना विषै रूपी ठगिनि ठगति है ॥ ३ ॥ ८२ ॥

राग गौरी—कैकेई करो धौं चतुराई कौन। राम लषन सिय बनहिं पठाये पति पठयो सुरभौन ॥ १ ॥ कहा भलो धौं भयो भरत को लगे तरुन तन दौन। पुरवासिन के नैन नीर विनु कबहुं तो देषति चौंन ॥ २ ॥ कौसल्या दिनराति विसूरति वैठि मनहिं मन मौन। तुलसी उचित न होइ रोइवो प्रान गए संग जौन ॥ ३ ॥ ८३ ॥

कौशल्या जी की उक्ति है ॥ १ ॥ दवन कहैं विरहानल ॥ २ ॥ विसूरति चिंता करति प्रान गए संग जौन जो प्रान संग न गए ॥३॥८३

हाग मीजिवो हाय रह्यो। लगो न रंग चित्रकूटहु ते ह्यां कहा जात बह्यो ॥ १ ॥ पति सुरपुर सिय राम लषन वन मुनिव्रत भरत गह्यो। हौं रहि घर मसान पावक ज्यौं मरवोइ मृतक दह्यो ॥ २ ॥ मेरोइ हियो कठोर करिवे कहुं विधि कहुं कुलिस लह्यो। तुलसी वन पहुंचाय फिरी सुत क्यों कछु परत कह्यो ॥ ३ ॥ ८४ ॥

ह्यां कहां जात बह्यो इहां का वहां जात रहा। भाव जेहि सन्हार हेतु आए ॥ १ ॥ हम घर रहि के मसान को पावक जैसे मृतक को जरावत है वैसेई मरिवोई रूप मृतक को जराय दियो ॥२॥ हमारही हिय कठोर

फरिबे के लिए विधाता ने कतहुं कुलिस पायो है। भाव वाही को हमारो हृदै वनायो है ॥ ३ ॥ ८४ ॥

हौं तो समुझ रही अपनो सो। राम लषन सिय को सुषमा कहुं भयो सधो सपनो सो ॥१॥ जिन्ह के विरह विषाद वटाउन्ह षग मृग जीव दुपारी। मोहि कहा सजनी समुझावति हौं तिन की महतारी ॥ २ ॥ भरतदसा सुनि सुमिरि भूपगति देषि दीन पुरवासी। तुलसी राम कहत हौं सकुचति ह्वैहै जग उपहांसी ॥ ३॥८५ ॥

सखी समुझावति है ता प्रति श्री कौशल्या जी कहति हैं कि हे सखी मैं तो आपै समुझि रही हौं। भाव तव समुझाइवे को क्या प्रयोजन है ॥ १ ॥ २ ॥ कौशल्या जी कहति हैं कि राम कहत में हम सकुचत हैं। भाव लोग कहि हैं कि कैसी माता हैं कि ऐसे पुत्र के विछुरे पर भी बोलती हैं। बोलनो हमारो जग में उपहास करावनिहारो होयगो ।३।८५

आली हौं इन्हहि बुझावौं कैसे। लेत हिये भरि भरि पति के हित मात हेत सुत जैसे ॥ १ ॥ वार वार हिहिनात हेरि उत जौ बोलै कोउ द्वारे। अंग लगाइ लिये वारे ते करुनामय सुत प्यारे ॥ २ ॥ लोचन सजल सदा सोवत से पान पान विसराए। चितवत चौंकि नाम सुनि सोचति राम सुरति उर आए ॥ ३ ॥ तुलसी प्रभु के विरह वधिक हठि राजहंस से जोरे। ऐसेउ दुपित देषि हौं जीवति राम लषन के घोरे ॥ ४॥८६ ॥

हे आली इन घोड़न के मैं कैसे समुझावौं। अपने स्वामी जे श्रीराम लषन तिन के हित अपने हृदय में शोक को भरि भरि लेत हैं, जैसे महतारि के हेतु पुत्र ॥ १ ॥ जो कोऊ द्वारे बोलत है तब द्वार के ओर तकि के वार वार हिहिनात हैं। भाव श्रीराम लषन तो नहीं बोलत

हैं। करुनामय हमारे प्यारे पुत्र लरिकई ते इन घोरन को अंग लगाइ लिए हैं ॥ २ ॥ सदा लोचन सजल रहत हैं औ खान पान जस सोअत में बिसारि जात है तस बिसराए रहत है औ श्रीराम लक्ष्मण को नाम सुनि चहुंकि के देखत हैं। जब नाम सुनिबे ते श्रीराम की सुरति उर में आय जाति है तब सोच करत हैं ॥ ३ ॥ गोसाईं जी कहत हैं कि प्रभु के बिरह रूप वधिक ने राम लषन के घोड़े जो राजहंस के जोड़े सम हैं तिन को हठि करि के दुखित किए सो भी देखि के मैं जिअत हौं ॥ ४ ॥ ८६ ॥

रावो एक बार फिरि आवो । ए वर बाजि बिलोकि आपने बहुरो वनहिं सिधावो ॥ १ ॥ जे पय प्याइ पोषि कर पंकज बार बार चुचुकारे । क्यों जीवहिं मेरे राम लाडिले ते अब निपट बिसारे ॥ २ ॥ भरत सौगुनी सार करत हैं अतिप्रिय जानि तिहारे । तदपि दिनहुं दिन होत झांवरे मनहुं कमल हिम मारे ॥ ३ ॥ सुनहु पथिक जौं राम मिलहिं बन कहियो मातु संदेसो । तुलसी मोहि और सब-हिन ते इन्ह को बडो अंदेसो ॥ ४॥८७ ॥

सार करैं पालन ॥ ८७ ॥

राग केदारा । काहू सो काहू समाचार अस पाए । चित्रकूट ते राम लषन सिय सुनियत अनत सिधाए ॥ १ ॥ सैलसहित निरझर बन मुनिथल देषि देषि सब आए । कहत सुनत सुमिरत सुषदायक मानस सुगम सुहाए ॥ २ ॥ बडि अवलंब बामबिधि बिघटित बिषम बिषाद बढाए । सिरस सुमन सुकुमार मनोहर बालक बिंध चढाए ॥ ३ ॥ अवध सकल नर नारि बिकल अति अकनि वचन अनभाए । तुलसी रामबियोग सोगबस समुझत नहिं समुझाए ॥४॥८८॥

परवत नदी झरना वन मुनिन के आश्रम हम सब देखि देखि के आए हैं सुगम औ सुंदर हैं बसिबे को को कहै कहत सुनत मुदित मैं मन के सुखदायक हैं, वहि अवलंब को वाम विधाता ने तोड़े औ तीक्ष्ण विषाद को बढ़ाए। सिरिस के सुमन सम सुकुमार मनोहर बालकन कौं विंध्य परवत पर चढ़ाए ॥२।३॥ अकनि सुनि, अनभाए अमिय ॥४॥८८॥

सुनी मैं सखी मंगल चाह सुहाई । सुभपत्रिका निषादराज की आजु भरत पहं आई ॥ १ ॥ कुंअर सो कुशल छेम तेहि अवसर कुलगुरु कहं पहुंचाई । गुर कृपाल संभ्रम पुर घर घर सादर सबहि सुनाई ॥ २ ॥ बधि बिराध सुर साधु सुखी करि रिषि सिष आसिष पाई । कुंभजसिष्य समेत संग सिय मुदित चले दोउ भाई ॥ ३ ॥ रेवा विंध बीच सुपास थल बसे हैं परनगृह छाई । पंथकथा रघुनाथ पथिक की तुलसिदास सुनि गाई ॥ ४॥८९ ॥

॥ १ ॥ सो कुशल छेम तेही अवसर कुंअर भरत ने वशिष्ठ जू कहं पहुंचाई है ॥ २ ॥ कुंभज शिष्य सुतीक्ष्ण ॥ ३ ॥ रेवा नर्मदा ॥ ४ ॥८९ ॥

सांख्य न्याय वेदांत को, छोड़ि छाड़ि सब जंग ।
सीता रघुपति चरन महं, हरिहर करहु उमंग ॥

इति श्रीरामगीतावलीप्रकाशिका टीकायां श्रीसीतारामकृपापात्र श्री सीतारामीय हरिहर प्रसादकृतौ अयोध्याकाण्डः समाप्तः ।

श्रीसीतारामाभ्यां नमः ।

सटीक गीतावली–आरण्यकाण्ड ।

मङ्गलाचरण–बरवा ।

रक्ष रक्ष रघुनायक श्रुतिपथपाल ।
पाहि पाहि करुनाकर दुर्जनकाल ॥

मूल ।

राग मल्लार । देखि राम पथिक नाचत मुदित मोर ।
मानत मनहु सतड़ित ललित घन धनु सुरधनु गरजनि
टकोर ॥ १ ॥ कंपै कलाप वर बरहि फिरावत गावत कल
कोकिल किसोर । जहं जहं प्रभु विचरत तहं तहं सुखद
बन कौतुक न थोर ॥ २ ॥ सघन छाँह तम रुचिर रजनि
राम बदन चन्द चितवत चकोर । तुलसी मुनि खग मृगनि
सराहत भये हैं सुकृत सब इन की ओर ॥ ३॥१ ॥

टीका ।

देखि१ कवि की उक्ति है कि श्रीराम पथिक के देखिबे ते हर्षित
मोर नाचत हैं । मानो श्रीराम को तड़िता सहित सुंदर घन मानत हैं ।
यहां तड़िता श्रीजानकी जी हैं वा पीतपट है औ सारङ्ग धनु जो सो
इन्द्रधनु है औ ताको टंकोर जो सो गरज है ॥१॥ बरही कहैं मयूर सो
कलाप कहैं पक्ष को कंपाय के फिरावत हैं औ युवा कोकिल जो सो

मधुर गावत है । जहाँ जहाँ दण्डकवन में प्रभु फिरत हैं तहाँ तहाँ सुख औ कौतुक थोर नहीं है ॥ २ ॥ सघन छांह की अँधेरी में सुंदर राति के भ्रम ते औ मुख चन्द के भ्रम ते चकोर चितवत है। गोसाईं जी कहत हैं कि खग मृगनि को मुनि सराहत हैं औ कहत हैं कि स सुकृत इन के ओर भए हैं ॥ ३॥१ ॥

राग कल्यान। सुभग सरासन सायक जोरे । खेलत राम फिरत मृगया वन वसति सो मृदु मूरति मन मोरे ॥१॥ पीत वसन कटि चारु चारि सर चलत कोटि नट सो तृन तोरे। स्यामल तनु श्रमकन राजत ज्यों नव घन सुधासरोवर खोरे ॥ २ ॥ ललित कांध वर भुज विसाल उर लेहि कंठरेख चित चोरे। अवलोकत मुख देत परम सुख लेत सरद ससि की छवि छोरे ॥ ३ ॥ जटा मुकुट सिर सारस नयननि गोहै तकत सुभौंह सकोरे। सोभा अमित समाति न कानन उमगि चली चहुं दिसि मिति फोरे ॥४॥ चितवत चकित कुरंग कुरंगिनि सब भये मगन मदन के भोरे । तुलसिदास प्रभु बान न मोचत सहज सुभाय प्रेम बस थोरे ॥ ५॥२ ॥

सुभग इ० । मृगया शिकार । १ ॥ कटि चारु चारि सर कटि में चारि बान धरे हैं । नव घन सुधा सरोवर खोरे मानो नवीन मेघ अमृत के तालाव में स्नान किए ॥ २ ॥ ३ ॥ जटा को मुकुट सिर पर है औ सारस कहीं कमल ता सम नैन हैं। सुंदर भौंह को सकोरे भए घात ताकत हैं। शोभा मितिरहित है ताते वन में समाति नहीं है मर्याद को फोरि के चहुं दिसि उमगि चली ॥ ४ ॥ मृगा मृगी चकित चितवत हैं मदन के भ्रम ते सब मगन भए हैं । भाव मदन के पांच बाण हैं। एक एक वाण हाथ में औ चार वाण कटि में धरे हैं। गोसाईं जी कहत हैं कि प्रभु वाण नहीं छोड़त हैं काहे ते कि प्रभु को यह सहज सुभाव है अर्थात् बनावट करि नहीं कि थोरे प्रेम के बस होत हैं ॥५॥२॥

राग सोरठ—बैठे हैं राम लषन अरु सीता। पंचबटी बर पर्नकुटी तर कहैं कछु कथा पुनीता ॥१॥ कपटकुरंग कनकमनिमय लखि प्रिय सों कहति हँसि बाला। पाइ पालिबे योग मंजुमृग मारेहु मंजुल छाला ॥ २ ॥ प्रियावचन सुनि बिहँसि प्रेमबस गवहि चापसर लीन्हें। चल्यो सो भाजि फिरि फिरि चितवत मुनिमख रखवारे चीन्हें ॥ ३ ॥ सोहति मधुर मनोहर मूरति हेमहरिन के पाछे। धावनि नवनि बिलोकनि बिथकनि बसै तुलसी उर आछे। ४।३ ॥

बं० १० पद मु० ॥३॥ टि०-कुरंग हरिन, हेमहरिन सोने का मृग, बिथकनि बिशेष थकावट।

राग कल्यान—कर सर धनु कटि रुचिर निषंग। प्रिया प्रीति प्रेरित बनबीथिन बिचरत कपट कनकमृग संग ॥ १ ॥ भुज बिसाल कमनीय कंध उर श्रमसीकर सोहै सांवरे अंग। मनो मुकुतामनि मरकतगिरि पर लसत ललित रविकिरन प्रसंग ॥ २ ॥ नैननलिन सिरजटा मुकुटबिच सुमनमाल मानो सिवसिरगंग। तुलसिदास असि मूरति की बलि छवि बिलोकि लाजै अमित अनंग ॥ ३ ॥ ४ ॥

कर इ०। भुजा बिसाल हैं औ कंध छाती सुंदर है औ श्रम कण सांवरे अंग पर सोहत है। मानो मुक्तामणि मरकत के परवत पर सुंदर रविकिरन के प्रसंग ते सोभत हैं। नैन कमल सम हैं सिर में जटा को मुकुट है बीच में स्वेत सुमन की माला है सो मानो शिव के शिर पर गंगा हैं। गोसाईं जी कहत हैं कि ऐसी मूरति की छवि देखि कै एक को को कहै अनेक काम लाजत हैं ॥ ३ ॥ ४ ॥

राग केदारा—राघव भावति मोहि बिपिन की बीथिन्ह धावनि। अरुन कंज बरन चरन सोकहरन अंकुस कुलिस केतु अंकित अवनि ॥ १ ॥ सुन्दर स्यामल अंग बसन पीत-

सुरंग कटि निषंग परिकर मिरवनि । कनक कुरंग सं
साजे चार सर चाप राजियनयन इत उत चितवनि ॥ २॥
सोहत सिर मुकुट जटापटल निकर सुमन लता सहित र
नवनि । तैसिये स्रमसीकर रुचिर राजत सुख तैसिये ललित
भृकुटिन्ह की नवनि ॥ ३ ॥ देषत षगनिकर मृग रवनिन्ह जु
थकित विसारि लई तहं की भवनि । हरि दरसन फल पायो
है ग्यान विमल जाचत भक्ति मुनि चाहत जवनि ॥ ४ ॥ जि
कवनि । स्रवनसुषकरनि भवसरितातरनि गावत तुलसिदास
मन मगन भये हैं रस सगुन तिन के लिये चगुन मु
कीरति पवनि ॥ ५ ॥ ५ ॥

राघोइ० राघो की बिपिनि वीथिन की धावनि मोको भावति
जेहि धाइये ते शोकहरन लाल कमल सम जो श्रेष्ठ चरण में अंकु
कुलिश ध्वज हैं ताते अंकित अवनि ह्वै गई है ॥ १ ॥ औ सुंदर श्यामल
अंग औ सुंदर पीत रंग को वसन औ कटि में जो तरकस औ पटुका
तें फेट को बांधनि मोको भावति है औ कनकयुग के संग में, जो ह
में सर चांप साजे हैं औ कमल सम नैन से जो इत उत देखत हैं, ह
मोको भावति है ।।२।। औ सिर में जटासमूह को मुकुट जो सोहत है औ
अनेकन पुष्प लता ते जो बनावरी रची है सो मोको भावति है औ
तैसेई सुंदर श्रमकण जो मुख पर शोभत औ तैसेई सुंदर जे भृकुटिन
की नवनि है सो मोको भावति है ॥ ३ ॥ खगन औ मृगनिपुंज मृग
जहां तहां के भ्रमनि बिसारि के थकित देखत हैं । हरि के दरशन को
फल विमल ज्ञान पायो है ताते भक्ति जाचत हैं । जेहि भक्ति को मुनि
चाहत हैं ॥ ४ ॥ कदापि कोऊ कहै कि सब ते दुर्लभ ज्ञान है तेहि
पाए पर भक्ति क्यों जाचत हैं ता पर कहत हैं जिन्ह के मन सगुन के
प्रेम में मगन भए हैं तिन्ह के लेखे निर्विशेष मुक्ति क्या है । अतएव
गीता में कहा ।। ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा न शोचति न कांक्षति । समस्सर्वेषु
भूतेषु मद्भक्तिं लभते पराम् । पवनि, कहे पावनि ॥ ५॥५ ॥

सोरठ। रघुवर दूरि जाइ मृग मार्‌यो । लषन पुकारि राम हरए कहि मरतेहुं बयर संभार्‌यो ॥ १ ॥ सुनहु तात कोउ तुमहिं पुकारत प्राननाथ की नाईं। कह्यो लषन हत्यो हरिन कोपि सिय हठि पठयो बरिआईं ॥ २ ॥ बन्धु बिलोकि कहत तुलसी प्रभु भाई भलो न कीन्हो। मेरे जान जानकी काहू पन छल करि हरि लीन्हों ॥ ६ ॥

रघु१०। हरए धीर अपर पद मु० ॥३। ६ ॥

आरत वचन कहति वैदेही। विलपति भूरि विसूरि दूरि गये मृगसंग परम सनेही ॥१॥ कहे कटु वचन रेष नाघी मैं तात छमा सो कीजे। देपि वधिकवस राजमरालिनि लषन लाल छिनि लीजे ॥२॥ वन देवनि सिय कहन कहति यों छल करि नीच हरी हौं। गोमरकर सुरधेनु नाथ ज्यौं त्यौं पर-हाथ परी हौं ॥३॥ तुलसिदास रघुनाथ नाम धुनि अकनि गीध धुकि धायो। पुत्रि पुत्रि जनि डरहि न जैहै नीच मीचु हौं आयो ॥४॥ ७ ॥

आरत इ०। भूरि विसूरि वहु चिंता करि वा वहुत उसास लेइ ॥१॥ २ ॥ वनदेवतनि सों सीता जू श्री राम जू सों यों कहिवे को कहति हैं कि मोको छल करि के नीच ने हरी है। गोमर कहैं कसाई तेहि के कर सुरधेनु जैसे परै तैसे परहाथ परी हौं ॥३॥ धुकि कहैं वेग करि, नीच मीच हौं आयो नीच जो रावण ताके मृत्यु रूप मैं आयो ।४।७

फिरत न वारहिं वार प्रचार्‌यो। चपरि चोंच चंगुल हय हति रथ षंड षंड करि डार्‌यो ॥ १॥ विरथ विकल कियो छीन लीन्हि सिय वन-घायनि अकुलान्यो। तव असि काढि काटि पर पांवर लै प्रभुप्रिया परान्यो ॥२॥ रामकाज-षगराज

आज लखो जियत न जानकि त्यागी। तुलसिदास सुर सिद्ध सराहत धन्य विहग बड भागी ॥ ३।८॥

चपरि चटकई करि ॥१॥ घन घायन बहुत घायन से ॥२॥३।८॥

टि०—असि तलवार। मखुमिया सीता। खगराज जटायु।

राग गौरी। हेम को हरिन हनि फिरे रघुकुलमनि लपन ललित कर लिये मृगछाल। आश्रम आवत चले सगुन न भये भले फरकै वाम बाहु लोचन बिसाल॥ १ ॥ सरित जल मलिन सरनि सूपे नलिन अलिन गुंजत कल कूजै न मराल। कोलिनि कोलकिरात जहं तहं बिलपात बनत बिलोकि जात पग मृग माल॥ २ ॥ तरु जे जानको लाये ज्याये हरि करि कपि हेरै न हुंकारि झरे फल न रसाल। जे सुकसारिका पाले मातु ज्यौं ललकि लाले तेऊ न पढत न पढावै मुनिवाल ॥ ३ ॥ समुझि सहमे सुठि प्रिया तो न धाई उठि तुलसी विवरन परनटनसाल। औरै सो सब समाजु कुसल देवौं आजु गहवरि हिये कहैं कोसलपाल॥४॥८

हेम को हरिन जो मारीच ताको मारि के रघुकुलमणि फिरे। ताको सुंदर छाल लपनलाल हाथ में लिए। अतएव हनुमन्नाटक लंकाकाण्ड में एही मृगचर्म पर रघुनाथ को वैठव लिखे। अङ्के कत्वोत्तमाङ्गं प्लवगवलपतेः पादमक्षस्य हंतुर्भूमौ विस्तारितायां त्वचि कनकमृगस्याङ्गशेषं निधाय। वाणं रक्षःकुलघ्नं प्रगुणितमनुजेनार्पितं तीक्ष्णमक्ष्णोः कोणेनोद्वीक्ष्यमाणस्त्वदनुजवचने दत्तकर्णोपमास्ते ॥ १ ॥ माल समूह ॥ २ ॥ ज्याए जे हरि करि, कपि, सिंह, हाथी वानर जे जानकी जी जिआए रहीं ॥३॥४॥९॥

आश्रम निरखि भूले द्रुम न फले फूले अलि खग मानो कबहुं न हे। मुनिन मुनिवधूटी उजरी परनकुटी पंचवटी पहिचानि ठाढेई रहे ॥ १ ॥ उठि न सलिल लिये प्रेम प्रमु-

हिम हिये छिपा न पुलकि हिय बदन कहै । दसरथ सानन देखो जानकजमा न दैदी बिरह बिरकि नयन लगन गहै ।२॥ देहि रघुबीर गति बिहुग दिहन्त यति तुलसी गहन बिनु दहन दहै । अनुज दियो भरोसो तौलों है सोच परोसो सिय-समाचार प्रभु जौलों न लहै ॥३॥१० ॥

आश्रम १० । लहै कहै लहीं गहै ॥ १ ॥ पत्तूकमात्र कहैं पर्ण-साल ॥ २ ॥ गहन बिनु दहन दहै बन के आगि को जरि गयो । हे प्रभु सीय की समाचार लवलौं न लहै तबलौं सोच परोसो कहैं खर के समान अर्थात् लंबक है ॥ ३ ॥ १० ॥

राग सोरठ । जबहिं सियसुधि सब सुरनि सुनाई । भये सुनि सजग बिरहसरि पैरत थके थाहसी पाई ॥ १ ॥ कसि तूनीर तीर धनु धर धुर धीर बीर दोउ भाई । पंचवटी गोदहि प्रनाम करि कुटी दाहिनी लाई ॥२॥ चले बूझत बन बेलि बिटप खग मृग अलि अवलि सुहाई । प्रभु की दसा सो समौ कहिबे को कबिउर आइ न आई ॥३॥ रटनि अकनि पहि-चानि गीध फिरे करुनामय रघुराई । तुलसी रामहि प्रिया बिसरि गई सुमिरि सनेह सगाई ॥४॥११ ॥

जबहिं १० ॥ १ ॥ धुर धीर धीरन में अग्रवर्ती, गोदहिं गोदावरी को ॥ २ ॥ ता समय में प्रभु की दशा कहिबे को कवि के उर में आइ न आई। भाव कहिबे में कवि जो समर्थ भए हैं सो बड़ी आश्चर्य की बात है। या सो दशा कहिबे को कवि के उर में आइ कहैं समर्थता न आई ॥ ३ ॥ अकनि सुनि ॥ ४ ॥ ११ ॥

मेरे एको हाथ न लागो । गयो बपु बीति बादि कानन ज्यों कलपलता दव दागो ॥१॥ दसरथ सो न प्रेम प्रतिपाल्यो। हुतो सकल जग साखी । बरबस हरत निसाचरपति सो हठि

न जानकी रापी । २॥ भरतन में रघुवीर विलोकि तापस वेष बनाये । चाहत चलन प्रान पांवर बिनु सिय सुधि प्रभुहि सुनाये ॥३॥ वार वार कर मीजि सीसधुनि गीधराज पछिताई । तुलसी प्रभु कृपाल तेहि औसर आइ गये दोउ भाई ॥ ४।१२ ॥

मेरे इ० । अब गीधराज को परिताप कहत हैं कि मेरे एको बात हाथ न लागी नाहक हमार शरीर समाप्त भयो जैसे वन में कल्पलता अग्नि ते जरि जाइ ॥ १ ॥ सब जग जानत रह्यो कि महाराज दशरथ से औ जटायु से प्रेम है पर सो प्रेम महाराज दशरथ सो न प्रतिपाल्यो। भाव महाराज दशरथ की इच्छा रही कि श्रीराम राजा होहिं तेहि में हम सहाय न किया। नाटके। न मैत्री निर्व्यूढा दशरथनृपे राज्यविषया न वैदेही त्राता हठहरणतोराक्षसपतेः। नरामस्यास्येन्दुर्नयनविषयोभूत्सुकृती नोजटायोर्जन्मेदं वितथमभवद्भाग्यरहितम् ॥ याही श्लोक के अनुसार यह पद है ॥ १२ ॥

राघो गीध गोद करि लीन्हो। नयनसरोज सनेह सलिल सुचि मनहुं अर्घजल दीन्हो ॥ १ ॥ सुनहु लषन खगपतिहि मिले वन मैं पितु मरन न जान्यो। सहि न सक्यों सो कठिन विधाता पड़ो पच्छ आजु भान्यो ॥ २ ॥ बहुविधि राम कह्यो तन रापन परमधीर नहि डोल्यो । रोकि प्रेम अवलोकि बदनविधु बचन मनोहर बोल्यो ॥ ३ ॥ तुलसी प्रभु झूठे जीवनलगि समय न धोपे लैहौं। जाको नाम मरत मुनि दुर्लभ तुमहिं कहां पुनि पैहौं ॥ ४ ॥ १३ ॥

राघोइ० । खगपति गीधराज, भान्यो तोरयो, अपर पद सु० ॥४॥ ॥१३॥ टिप्पणी—अर्द्धजल मरनसमय जल देना ।

नीके कै जानत रामहियो हौं। प्रनतपाल सेवक कृपाल-

चित पितु पटतरहि दियो हौं ॥ १ ॥ तृनगजोनिगत गीध जनम भरि पाइ कुजन्तु जियो हौं। महाराज सुक्रती समाज सब ऊपर आजु कियो हौं ॥ २ ॥ स्रवन वचन मुख नाम रूप चख राम उछंग लियो हौं। तुलसी मो समान बडभागी को कहि सकै वियो हौं ॥ ३॥१४ ॥

नीकेइ०। अपने हृदय में श्रीराम को नीके कै जानत हौं। वा यों कहैं एहि भांति ते नीके कै जानत हौं ॥१॥२॥ श्रवन सों श्रीराम को वचन सुनत हौं औ मुख से नाम लेत हौं नेत्र सो रूप देखत हौं औ देह को श्रीराम गोद में लिए हैं तो मो समान बड़ भागी वियो कहैं दूसरे को को कहि सकैगो ॥ ३॥१४ ॥

मेरे जान तात कछू दिन जीजै। देखिये आपु सुअन-सेवा सुख मोहि पितु को सुख दीजै ॥ १ ॥ दिव्य देह इच्छा जीवन जग विधि मनाइ मांगि लीजै। हरि हर सुजस सुनाय दरस दै लोग कृतारथ कीजै ॥ २ ॥ देखि बदन सुनि वचन अमिय तन राम नयन जल भीजै। बोल्यो विहग विहसि रघुबर बलि कहौं सुभाय पतीजै ॥ ३ ॥ मेरे मरिबे सम न चारि फल होंहि तो क्यों न कहीजै। तुलसी प्रभु दियो उतरु मौनहीं परीमानो प्रेम सहीजै ॥ ४॥१५ ॥

मेरेइ०। पुत्र की सेवा को सुख आप देखिए औ हम को पिता का सुख दीजिये ॥ १ ॥ विधाता को मनाइ के दिव्य देह औ जग में इच्छाजीवन मांगि लीजिये। हरिहर को जस सुनाय के औ आपन दरशन देइ के लोगन को कृतार्थ कीजिये ॥ २ ॥ रघुनाथ के मुख को देखि कै औ वचनामृत कों सुनि के औ श्रीराम के नयन जल से तन को भिजै कै ॥ ३ ॥ मौने रूप उत्तर श्रीराम दियो मानों प्रेम में सही परी। भाव रघुनाथ ऐसे वक्ता निरुत्तर भए ॥ ४॥१५ ॥

मेरो सुनिये तात संदेसो। सीयहरन जिनि कहिहु पिता सों ह्वै है अधिक अंदेसो ॥ १ ॥ रावरे पुन्य प्रताप अनल महं अल्प दिननि रिपु दहिहै। कुलसमेत सुरसभा दसानन समाचार सव कहिहै ॥ २ ॥ सुनि प्रभुवचन आनि उर मूरति चरनकमल सिर नाई। चल्यो नभ सुनत राम कल कीरति अरु निजभाग वडाई ॥३॥ पितु ज्यों गीध क्रिया करि रघुपति अपने धाम पठायो। ऐसे प्रभु विसारि तुलसी सठ तूं चाहत सुप पायो ॥ ४॥१६ ॥

पद सु० ॥ १६ ॥

राग सूहव। सवरी सोइ उठी फरकत वाम विलोचन वाहु। सगुन सुहावने सूचत मुनि मन अगम उछाहु ॥ छन्द। मुनि अगम उर आनन्द लोचन सजल तनु पुलकावली। टन पर्नसाल वनाइ जल भरि कलस फल चाहन चली ॥ मंजुल मनोरथ करति सुमिरति विप्रवर वानी भली। ज्यों कल्पवेलि सकेलि सुकृत सुफूल फूली सुप फली ॥ १ ॥ प्रानप्रिया पाहुने ऐहैं राम लपन मेरे आजु। जानत जन जिय की मृदु चित राम गरीवनेवाजु ॥ छन्द ॥ मृदुचित गरीवनेवाजु आजु विराजिहैं गृह आइ कै। ब्रह्मादि संकर गौरि पुजित पुजिहौं अव जाइ कै ॥ लहि नाथ सों रघुनाथ वानो पतितपावन पाइ कै। दुहुं ओर लाहु अघाइ तुलसी तीसरेहु गुन गाइ कै ॥ २ ॥ दोना रुचिर रचे पूरन कंद मूल फल फूल। अनुपम अमियहु ते अंवक अवलोकत अनुकूल ॥ छन्द ॥ अनुकूल अंवक अंव ज्यों निज डिंभ हित सव आनि कै। सुंदर सनेह सुधा सहस जनु सरस राखे

सानि कै॥ छन भवन छन वाहिर विलोकति पंथ भू परि-
पानि कै। दोउ भाइ आये सवरि काकी प्रेमपनु पहिचानि
कै॥ ३॥ सवन सुनत चली आवत देषि लषन रघुराउ।
सिथिल सनेहु कहै हैं सपनो विधि कैधौं सतिभाउ॥ छन्द॥
सतिभाउ कै सपनो निहारि कुमार कोसलराय के। गहै
चरन जे अघहरन नतजन वचन मानस काय के॥ लघु
भाग भाजन उदधि उमग्यो लाभ सुष चित चाय कै। सो
जननि ज्यौं आदरी सानुज राम भूषे भाय कै॥ ४॥ प्रेम
पट पांवरे देत सुअर्घ विलोचन वारि। आश्रम लै दिये
आसन पंकज पाय पषारि॥ छन्द॥ पद पंकजात पषारि
पूजे पंथस्रम विरहित भये। फल फूल अंकुर मूल धरे
सुधारि भरि दोना नये॥ प्रभु षात पुलकित गात स्वाद
सराहि आदर जनु जये। फल चारिहूं फल चारि देत पर-
सारि फल सवरी दये॥ ५॥ सुमन वरषि हरषे सुर मुनि
मुदित सराहि सिहात। केहि रुचि केहि छुधा सानुज
मांगि मांगि प्रभु षात॥ छन्द॥ प्रभु षात मांगत देति
सवरी राम भोगी याग के। वालक सुमित्रा कौसिला के
पाहुने फल साग के॥ पुलकत प्रसंसत सिद्ध सिव सनकादि
भाजन भाग के। सुनि समुझि तुलसी जानि रामहिं वस
अमल अनुराग के॥ ६॥ रघुवर अंचइ उठे सवरी करि
प्रनाम कर जोरि। हौं वलि वलि गई पुरइ मंजु मनोरथ
मोरि॥ छन्द॥ पुरई मनोरथ स्वारथहु परमारथहुं पूरन करी।
अघ औगुनन की कोठरी करि कृपा मुद मंगल भरी॥

तापस किरातनि कोल मृदु मूरति मनोहर मन धरी। सिर नाइ आयसु पाइ गवनो परम निधि पाले परी ॥ ७ ॥ सिय सुधि सब कही नप सिप निरपि निरपि दोउ भाइ। देदे प्रदच्छिना करत प्रनाम न प्रेम अघाइ ॥ छन्द ॥ अति प्रेम मानस रापि रामहिं रामधामहिं सो गई । तेहि मातु ज्यों रघुनाथ अपने हाथ जल अंजलि दई ॥ तुलसी भनत सवरी प्रनति रघुवर प्रकृति करुनामई। गावत सुनत समुझत भगति हिय होइ प्रभुपद नित नई ॥ ८॥१७॥

इति श्री रामगीतावल्यां आरण्यकाण्डः समाप्तः ।

सवरी इ० । सवरी सोय उठी वा काल में वाम नेत्र औ वाहु फरकत जे ते सोहावने सगुन मुनिमन अगम उछाहु को सूचन करत हैं। मुनिन को जो अगम सो आनन्द उर में है। नेत्र सजल हैं । तन में रोमांच हैं ऐसी जो सवरी सो तृन औ परन के गृह को संवारि के अर्थात् झारि वटोरि के औ कलस में जल भरि कै फल लेइवे के अभिलाष से चली। चलत में सुंदर मनोरथ करति है औ विप्रवर जो मतंग ऋषि तिन की जो भली वानी ताको सुमरति है। जो वानी रूप कल्पवेलि सुकृत वटोरि कै सुंदर फूल फूली रही सो अव सुख रूप फल फली ॥१॥ अव सवरी को मनोरथ कहत हैं । सवरी कहति है। हम नाथ पाइ कै अघाय के लाहु लहव औ श्रीरघुनाथ पतितपावन वाना पाय कै अघाइ कै लाहु लहव याते दूनो ओर लाभ अघाइ के है औ तुलसी से तीसरो गुन गाइकै अघाय लहु लहव अपर सु० ॥ २ ॥ दोना सुंदर रचे ताको कंद मूल फल फूल ते पूरन किए। ते मूलादि कैसे हैं कि अमृतहु ते अनूप हैं औ अम्बक कहैं नेत्र ता से देखतो में अनुकूल हैं अर्थात् सुंदरो हैं। नेत्रन के प्रिय जो फल हैं जैसे माता अपने वालक के हित आनै तैसे सव आनि के सुंदर सनेह जो है सो हजार गुन अमृत से सरस है मानो तासो सानि राखे। छन भौन छन वाहर भूमि पर हाथ दैके राह देखति हैं। सवरी के प्रेम की प्रतिज्ञा पहिचानि के

श्रीसीतारामाभ्यां नमः।

सटीक गीतावली—किष्किन्धाकाण्ड।

मङ्गलाचरण—सोरठा।

त्यागि बालि बलवान, दीन पीन सुग्रीव कहं।
मीत कियो भगवान, को कृपाल अस हेतु बिनु ॥ १ ॥

मूल।

राग केदारा। भूषन बसन बिलोकत सिय के। प्रेमबिबस
बस बेपु पुलक तन नीरज नयन नीरभरे पिय के॥१॥ सकुचत
कहत सुमिरि उर उमगत सील सनेह सुगुनगन तिय के।
स्वामि दसा लखि लखन सखा कपि पघिले हैं आंच माठ
मानो घिय के ॥ २ ॥ सोचत हानि मानि मन गुनि गुनि
गये त्रिवटि फल सकल सुकिय के। बरने यामवन्त तेहि
अवसर वचन बिबेक बीर रस बिय के ॥ ३ ॥ धीर बीर सुनि
समुझि परसपर बल उपाय उघटत निज हिय के। तुलसिदास
यह समउ कहे ते कवि लागत निपट निठुर जड जिय के
॥ ४ ॥ १ ॥

टीका।

भूषण इ० । ऋष्यमूक पर्वत पर सुग्रीव ने श्रीजानकी जी को
भूषण बसन श्रीराम जी को दिए तेहि विलोकत मात्र श्रीराम जू को

मन प्रेम के विशेष वस भयो औ तन कंप औ पुलकावलीयुक्त भ
औ कमल नैन में आंसू भरि आए ॥ १ ॥ सखा कपि सुग्रीव औ
बांदर, माठ मठुका ॥ २ ॥ मन में हानि मानि कै गुनि गुनि के सोच
हैं कि सुकिय कहैं सुकृत के सकल फल विघटि कहै वीति गए हैं वी
रस विय के वीर रस के वीज के ॥ ३ ॥ उघटत प्रगट करत ॥४॥१॥

प्रभु कपि नायक बोलि कह्यो है। वरषा गई सरद आ
आई अब लौं नहिं सिय सोधु लह्यो है ॥ १ ॥ जा कार
तजि लोकलाज तनु राखि वियोग सह्यो है। ताको तै
कपिराजु आजु लगि कछु न काज निवह्यो है ॥ २ ॥ सुनि
सुग्रीव सभीत नमित मुख उतरु न देत चह्यो है। आइ गई
हरि जूथ देखि उर पूरि प्रमोद रह्यो है ॥३॥ पठये वदि बदि
अवधि दसहुं दिसि चले बल सवनि गह्यो है। तुलसी सिय
लगि भवदधि मानो फिरि हरि चहत मह्यो है ॥ ४॥१८॥

इति श्री रामगीतावल्यां किष्किन्धाकाण्डः समाप्तः।

प्रभु इ० । ॥ १ ॥ २ ॥ हरि वानर ॥ ३॥ अवधि वदि वदि पठ
अवधि चौपाई रामायण में स्पष्ट है । मास दिवस महं आयेहु भाई।
दशो दिशा को चलत भए पराक्रम को सब ने गह्यो है, गोसांई जी
कहत हैं कि जानकी जी के लागि संसार रूप समुद्र को मानो फेर हरि
मह्यो चाहत हैं ॥ ४ ॥ २ ॥

इतिश्री रामगीतावलीप्रकाशिकाटीकायां श्रीसीतारामकृपापात्र
श्रीसीतारामीय हरिहरप्रसादकृतौ किष्किन्धाकाण्डः समाप्तः।

श्रीसीतारामाभ्यां नमः ।

सटीक गीतावली—सुन्दरकाण्ड ।

मूल ।

राग केदारा—रजायसु राम को जब पायो । गाल मेलि मुद्रिका मुदितमन पवनपूत सिरनायो ॥ १ ॥ भालुनाथ नल नील साथ चले बली बालि को जायो । फरकि सुअंग भये सगुन कहत मानो मग मुद मंगल छायो ॥ २ ॥ देखि बिवर सुधि पाइ गीध सो सबनि अपनो बलु मायो । सुमिरि राम तकि तरकि तोयनिधि लंक लूक सो आयो ॥ ३ ॥ खोजत घर घर जनु दरिद्रमन फिरत लागि धनु धायो । तुलसी सिय बिलोकि पुलक्यो तनु भूरि भाग भयो भायो ॥ ४ ॥१॥

टीका ।

रजायसु इ० ॥ १ ॥ २ ॥ मायो कहैं तौल्यौ, तरकि कहैं कूदि, लंक लूक सो आयो लंका में लूक सम आयो । भाव लूक उत्पात सूचक होत है ॥ ३ ॥ श्रीहनुमानजू श्रीजानकीजू को घर घर खोजत हैं जैसे दरिद्र को मन धन लागि धायो फिरत है भायो कहैं मन भायो ॥४॥१॥

देखी जानकी जब जाइ । परम धीर समीरसुत के प्रेम उर न समाइ ॥ १ ॥ कृस सरीर सुभाय सोभित लगी उड़ि उड़ि धूलि । मनहु मनसिजमोहनी मनि गयो भोरे भूलि ॥२॥

रटति निसिवासर निरंतर राम राजिवनयन। जात निकट न विरहिनी अरि अकनि ताते वयन ॥ ३ ॥ नाथ के गुन-गाथ कहि कपि दई मुदरो डारि। कथा सुनि उठि लई कर-वर रुचिर नाम निहारि ॥ ४ ॥ हृदय हर्ष विषाद अति पति-मुद्रिका पहिचानि। दास तुलसी दसा सो केहि भांति कहै बखानि ॥ ५ ॥ २ ॥

देखी इ० ॥ १ ॥ स्वाभाविक शोभित जो श्रीजानकीजू तिन को कृशित जो शरीर है तामें धूरि उड़ि उड़ि लगी है मानो काम भ्रम से अपने मोहनी मणि को भूलि गयो है ॥ २-॥ राति दिन निरंतर श्रीराम राजिवनैन रटति हैं। तात गरम वानी सुनि के विरहिनी अरि जो वायु सो निकट नहीं जात है। भाव जरि जावे के डर ते ॥३॥ करवर श्रेष्ठ कर में ॥ ४ ॥ ५ ॥ २ ॥

राग सोरठ—बोलि वली मुदरी सानुज कुसल कोसल-पालु। अमिय वचन सुनाइ मेटहि विरह ज्वालाजालु ॥ १॥ कहति हित अपमान मैं कियो होत हिय सोइ सालु। रोष छमि सुधि करत कबहूं ललित लछिमन लालु ॥२॥ परसपर पति देवरहि का होति चरचा चालु। देवि कहु केहि हेतु बोलि विपुल बानर भालु ॥ ३ ॥ सीलनिधि समरथ सुसाहिब दीनबंधु दयालु। दास तुलसी प्रभुहि काहु न कह्यो मेरो हालु ॥ ४ ॥ ३ ॥

बोलिइ०। श्रीजानकीजू मुदरी से पूछति हैं कि हे मुदरी अनुज-सहित कोशलपाल को कुशल बोलु ॥ १ ॥ लषनलाल के हित कहते में मैं अपमान कियो सो सुमिरि हृदै में साल होत है। पति जो श्रीराम औ देवर जो लखनलाल तिन्ह के आपुस में केहि चाल की चरचा होति है। हे देवि बहुत वानर भालु केहि हेतु बोलाए। संका। बानर भालु के बोलाइबे श्रीजानकीजू कैसे जानी। उत्तर। मुदरी डारते में

सुमन जी कहे रहे। "नाथ के गुनगाथ कहि कपि दियो मुदरी डारि" ॥ ३।४।३ ॥

मदन मनपन हैं कुसल कृपालु कोसलराउ। सील सदन सनेहसागर सहज सरल सुभाउ ॥ १ ॥ नींद भूप न देव-रहि परिहरे को पछिताउ। धीर धुर रघुवीर को नहिं सप-नेहूं चितचाउ ॥ २ ॥ सोधु विनु अनुरोध रिपु को वोधु विहित उपाय। करत हैं सोइ समय साधन फलति बनति बनाउ ॥ ३ ॥ पठे कपि दिसि दसहुं जे प्रभु काज कुटिल न काउ। बोलि लियो हनुमान करि सनमान जानि समाउ ॥४॥ दई हौं संकेत कहि कुसलात सियहि सुनाउ। देखि दुर्ग विसेषि जानकि जानि रिपु गति आउ ॥ ५ ॥ कियो सीय प्रबोध मुदरी दियो कपिहि लपाउ। पाइ अवसर नाइ सिर तुलसी सगुन गन गाउ ॥ ६ ॥ ४ ॥

सद्लह्०। मुदरी की उक्ति कि दलसहित लखनलालसहित हपाल्न कोशलनाथ सो कुशल हैं॥ १ ॥ देवर जो लपनलाल तिन हो न नींद है न भूप है औ छोड़ि के जावे को पछिताव है। भाव मर्म विन सहि लेते उहां से न जाते तो काहे को दुख भोगते या दूर जाइके गए नगींचे छप काहे न रहे औ धीरन में अग्रवर्ती जे श्रीरघु-वीर तिन के चित्त में सपनो में आनंद नहीं है ॥ २ ॥ रिपु को खवर पाए विना अनुरोध कहें रोक रहत है अर्थात् कुछ बनत नाहीं तब रिपु के बोध में जो विहित उपाय ताको लोक करत हैं सोई उपाय रूप साधन समय पाय के फलति है औ बनाव बनत है एही न्याय के अनुसार प्रभु ने रिपु के जानिने हेतु दसो दिसा में वानरों को पठए। वानर प्रभु के काज में कुटिल कोऊ नहीं हैं। हनुमान में समाई जानि बुलाय लियो पुनि सनमान करि के संकेत की बात कहि के हम को औ कहत भए कि हमारी कुशलात जानकी जी को जाय सुनाओ

औ लंका गढ़ की औ विशेष जानकी जी को देखि कै औ रिपु को पराक्रम जानि कै हमारे ढिग आगो ॥३॥४॥५॥ एहि प्रकार ते मुदरी ने श्रीजानकी जी को विशेष बोध कियो औ हनुमान को देखाय दियो श्रीहनुमान जू अवसर पाय सिर नाय कै श्रीराम के गुनसमूह कहन लगे ॥ ६॥४ ॥

सुवन समीर को धीर धुरीन वीर बडोइ । देषि गति सिय मुद्रिका की वाल ज्यों दियो रोइ ॥ १ ॥ अकनि कटुवानी कुटिल की क्रोध विंध्य बढोइ । सकुचि सम भयो ईस आयसु कलस भव जिय जोइ ॥ २ ॥ बुद्धि बल साहस पराक्रम अछत राषि गोइ । सकल साज समाज साधक समउ कह सब कोइ ॥ ३ ॥ उतरि तरु ते नमत पद सकुचात सोचत सोइ । चुकै अवसर मनहु सुजनहिं सुजन सनमुष होइ ॥४॥ कहि बचन बिनीति प्रीति प्रतीति नीत निचोइ । सीय सुनि हनुमान जान्यो भली भांति भलोइ ॥५॥ देवि बिन करतूति कहिबो जानिहै लघु लोइ । कहौंगो मुष की समर सरि कालिकारिव धोइ ॥ ६ ॥ करत कछु नहिं बनत हरि हिय हरष सोक समोइ । कहत मन तुलसीस लंका करौं सघन घमोइ ॥ ७॥ ५ ॥

सुअनइ० । धीरन में अग्रवर्ती बड़ो वीर जो पवन को पूत सो श्रीजानकीजू औ मुद्रिका की कुगति देखि कै जैसे बालक रोवै तैसे रोय दियो ॥ १ ॥ कुटिल रावन की कटुवानी सुनि कै हनुमान जी को क्रोध रूप विंध्य पर्वत बढ़त भयो पर श्रीराम की आज्ञा रूप अगस्ति को देखि कै सकुचि कै सम ह्वै जात भयो ॥ २ ॥ बुद्धि बल साहस पराक्रम के रहते इन सब के छपाय राखे काहे ते कि सकल साज समाज के साधक समय है अस सब कोई कहत हैं ॥ ३ ॥ वृक्ष तें उतरि कै श्रीजानकी जू के पद में नमस्कार करत भए औ सो बात

हनुमान औ सोचन भए। भाव जब रावन कटु कहत रहा तब कुछ उत्तर न दियो अवसर के चूके पर मानो सुजन के स सन्मुख सुजन होय ॥४॥ मानि विश्वास नीति में निचारि के नम्र वचन बोले श्रीजानकी ॥ वचन सुनि के हनुमान को जान्यो औ यह विचारयो कि अब बात भली भांति ते है ॥ ५ ॥ हनुमान जू बोले कि हे देवि विना स्तुति किए कहिवे ते लोग लघु जानिहैं ताते कालिह समररूपी नदी में सुम्ही करिखा धोइ के तब कहौंगो ॥ ६ ॥ हरष,शोक में हृदय मिश्रित रह्यो है ताते हनुमान जू सो कुछ करत नहीं वनत है। इहां हरष दर्शन करि औ शोक दशा देखि। तुलसी के ईश जे हनुमान ते मन में कहत हैं कि लंका में सघन घमोइ करौंगो। भाव अस चौपट करौंगो कि कांई जामैगो। घमोइ को कोऊ देशवाले भंडभांड कोऊ देसवाले घमोइ कोऊ देशवाले कटीला कोऊ देशवाले सत्यानाशी कोऊ देशवाले बंग कहत हैं ॥ ७॥५ ॥

राग केदारा। हौं रघुवंसमनि को दूत। मातु मानु प्रतीति जानकि जानु मारुतपूत ॥ १ ॥ मै सुनी वातै असैली कहि जे निशिचर नीच। क्यों न मारे गाल बैठो काल दाढनि वीच ॥ २ ॥ निदरि अरि रघुवीर बल लै जाउं जौं हठि आजु। डरौं आयसुभंग ते अरु बिगरिहै सुरकाजु ॥३॥ बांधि वारिध साधि रिपु दिन चारि में दोउ वीर। मिलहिंगे कपि भालु दल संग जननि उर धरु धीर ॥ ३ ॥ चित्रकूटकथा कुसल कहि सीस नायो कीस। सुहृद सेवक नाथ को लखि दई अचल असीस ॥ ४ ॥ भये सीतल स्रवन तन मन सुने वचन पियूष। दास तुलसी रह्यो नयननि दरस ही को भूष ॥ ५॥ ६ ॥

टी० ॥ १ ॥ वातैं असैली अमर्जाद की वार्ता काल के मुख में बैठे हैं ताके बीच में बैठ्यो है तब क्यों न गाल मारै। भाव गाऊ

नहीं मारत है सन्निपात करि जल्पत है ॥ २ ॥ श्रीरघुवीर के बल ते
अरि को निरादर करि कै हठि करि जो आप को ले जाउं तो श्रीराम
जू की आज्ञाभंग ते डरत हौं औ देवतन को काज बिगरैगो ताते ड
हौं ॥ ३ ॥ इहां चारि दिन अल्प दिन को बोधक है ॥ ४ ॥ चित्र
की कथा अर्थात् जयंत की कथा औ श्रीराम की कुशल कहि के हनुमा
ने शीस नवाए । चित्रकूट की कथा जो कहे ताको यह भाव कि तुम्ह
हेतु इन्द्र के बेटा की कैसी दुर्दशा किए तब औरं की कहा चली ॥५॥६

तात तोह्न सौं कहत होति हिये गलानि । मन को
प्रथम पनु समुझि अछत तन लखि नई गति भई मति
मलानि ॥ १ ॥ प्रिय को वचन परिहस्यो जिय के भरोसे
संग चलौ वन बड़ो लाभु जानि । प्रीतम बिरह तौ सनेह
सरवसु सुत औसर को चूकिबो सरिस न हानि ॥ २ ॥
आरजसुवन के तौ दया दुअवनहु पर मोहि सोच मोतें सब
विधि नसानि । आपनो भलाई भलो कियो नाथ सब ही
को मेरे ही अदिनवस बिसरी बानि ॥ ३ ॥ नेम तो पपीहा
ही के प्रेम प्यारी मीन ही के तुलसी कहो है नीके हृदय
आनि । इतनो कहो सो कहो सोय ज्यौंही त्यौंही रही
प्रीति परि सही सो न बखानि ॥ ४ ॥ ७ ॥

तात इ० । हे तात तुमहूं से कहत हृदय में गलानि होति है । मन
को जो प्रथम पन रह्यो भाव श्रीराम बिनु हम जिअत नाहीं सो तन
को विद्यमान समुझि के यह नई गति देखि कै हमारी मति मलान भई
॥ १ ॥ प्रिय कहत रहे कि तुम घर में रहो तेहि वचन को लांघौं
जिअबे के भरोसे से औ वन में बड़ा लाभ जानि के संग चलिउं पर
सनेह को सरवस जो प्रीतम तिन को बिरह भयो तब हू सुत अवसर
चूके सरिस हानि नहीं है । भाव बिछुरते शरीर छोड़ि देना रहा । या
"जीवमाहिरहु न तनेह सर्वस" पाठ होय तो अस अर्थ करना कि जहां

जाय बन में जानी कौन न्याय जानी कि मीतम के विरह ते मीतम को संग मरनस है। भाव नाते संग चलनो चाहिए सो मीतम को विरह मन में भयो ताको हम सहे याने अवसर चूकिबो सरिस हानि नहीं है ताते तन त्यागि देना रहा ॥ २ ॥ आजे जो श्रेष्ठ दशरथ महाराज तिन के दुख की दसा दुहों पर है । भाव नव जो सरनागत हैं तिन को को कहे। सो ते सब बिनसाय गई है याते हम को सोच है आपने भलाई ते नाथ सब को भलो कियो है पर मेरी ही अदिनवश नाथ हूं की भलाई वे याने बिसरि गई है ॥ ३ ॥ नेम तो पपीहे को ठीक है। भाव वाको प्रीतम मेघ केतनो निरादर करत है ताको नहीं मानत है औ प्यारी पानी को प्रेम है भाव पीतम जो जल तेहि बिनु नहीं जीअत है । नीके हृदय में आनि के जानकी जू ने यह कही है । यतनी कही सो कही जानकी जू ज्यों के त्यों रही भाव काष्ठवत् ह्वै रही । प्रीति की तो सही परी अर्थात् अपनपो भूलि गई पर विधाता सो कुछ न बसान ॥४॥७॥

मातु काहे कों कहति अति बचन दीन। तब की तुम्हीं जानति सब की होहिं कहत सब के जिय की जानत प्रभु प्रवीन ॥ १ ॥ ऐसे तो सोचहिं न्याय निठुर नायक रत सलभ कुरंग पग कमल मीन। करुनानिधान को तो ज्यों ज्यों तनु छीन भयो त्यों त्यों मन भयो तेरे प्रेम पीन ॥ २ ॥ सिय को सनेह रघुबर की दसा सुमिरि पवनपूत देख्यो प्रीतिलीन। तुलसी जन को जननिहू प्रबोध कियो समुझि तात जग विधिअधीन ॥ २२॥८ ॥

मातु इ०। हे मातु काहे को अति दीन बचन कहति हो। तब की तुम्हीं जानति हौ । भाव कैसो प्रीति तुम्हारे पै रही औ अब जैसी है तस हम कहत हैं औ सब के जिय की प्रभु प्रवीन जानत हैं। भाव तुम ऐसे बिरहिनी जानि क्यों न बिरही होहिंगे ॥ १ ॥ जस तुम सोचति हौ तस निठुर नायक में जे रत हैं ते सोचहिं तो न्याय कहैं युक्त है जैसे पतंग, पपीहा, हरिन, कमल, मीन को निठुर नायक दीपसिखा, मेघ,

राग, सूर्य, जल ये सब हैं ते सोचहिं औ करुनानिधान श्रीराम को तं
ज्यों ज्यों तन छीन भयो त्यों त्यों तुम्हारे प्रेम में मन पीन भयो ॥२॥
श्रीजानकी जू को नेह औ रघुवर की दशा सुमिरि के जब पवनपूत
प्रीति में लीन भयो तब जानकी जू देखि हनुमानजी को प्रबोध कियो
कि हे तात विधाता के आधीन जग जानो ॥ ३ ॥ ८ ॥

राग जयतिश्री। कह्यो कपि कब रघुनाथ कृपा करि हरिहैं निज वियोगसंभव दुष। राजिवनयन मयन अनेक छवि रवि कुल कुमुद सुषद मयंक सुष ॥ १ ॥ विरह अनल सहाय समीर निज तनु जरिबे कहं रही न कछु सक। अति बल जल बरषत दोउ लोचन दिन अरु रैनि रहत येकहि तक ॥ २ ॥ सुदृढ ज्ञान अवलंबि सुनहु सुत रापति प्रान विचारि दहन मत। सगुन रूप लीला विलास सुष सुमिरन करत रहत अंतरगत ॥ ३ ॥ सुनु हनुमंत अनंत बंधु करुना सुभाव सुसील कोमल अति। तुलसिदास एहि त्रास जानि जिय बरु दुष सहीं प्रगट न कहि सकति ॥ ४॥९ ॥

कह्यो ३०। निज वियोग सम्भव अपने वियोग ते उत्पत्ति ॥ १ ॥ निज स्वास रूप वायु के सहाय युक्त जो विरहानल तामें तन के जरिबे कहं कछु संदेह न रही। पर दिन औ राति एकै तार से दोऊ लोचन प्रबल जल वर्षत हैं। भाव नैन रूप मेघ जारिबे नहीं देत हैं ॥ २ ॥ हे सुत सुन्दर दृढ़ ज्ञान को अवलम्बन करि के भाव राखो जा को अपनावत हैं ताको त्यागते नहीं एहि ज्ञान के अवलम्बन करि जराइबे के मत ते विचारि के प्रान को राखति हौं औ भीतर सगुन रूप के लीला विलास को सुख सुमिरन करत रहत हौं ॥ ३ ॥ हे हनुमंत लपनलाल भाई कारुण्य सुशील औ अति कोमल हैं एहि त्रास ते प्रगट नहीं सकति हौं भाव तुम जब जाय कहोगे तब विकल होय जाहिंगे ... बरु दुख सहत हौं ॥ ४ ॥ ९ ॥

राग केदारा । कबहुं कपि राघव आवहिंगे । मेरे नयन चकोर प्रीतिवस राकाससिमुष देषरावहिंगे ॥ १ ॥ मधुप मराल मोर चातक ह्वै लोचन बहु प्रकार धावहिंगे। अंग अंग छवि भिन्न भिन्न सुष निरषि निरषि तहं तहं छावहिंगे ॥२॥ विरह अगिनि जरि रही लता ज्यों कृपादृष्टि जल पलुहावहिंगे। निजवियोगदुष जानि दयानिधि मधुरवचन कहि समुझावहिंगे ॥ ३ ॥ लोकपालु सुर नाग मनुज सव परे वंदि कब मुकुतावहिंगे। रावनवध रघुनाथ विमल जस नारदादि मुनि जन गावहिंगे ॥ ४ ॥ यह अभिलाष रहनि दिन मेरे राज विभीषन कब पावहिंगे। तुलसिदास प्रभु मोहजनित भ्रम भेद बुद्धि कब विसरावहिंगे ॥ ५॥१० ॥

कबहूं इ० । हमारे प्रीतिवश नैन रूप चकोर को मुख रूप पूर्णचन्द्र को कब देखरावेंगे । राका नाम पूर्णवासी को है ॥ १ ॥ लोचन जो सो भ्रमर हंस मोर पपीहा है के बहुत प्रकार ते कब धावेंगे औ अंग अंग की छवि में भिन्न भिन्न सुख देखि देखि के तहां तहां कब छाय रहेंगे । भाव भ्रमर है मुख नेत्र कर पद रूप कमलन में औ हंस है के नाभी रूप सर में औ मोर है के गंभीर गिरा रूप गर्जन में औ पपीहा है स्याम शरीर रूप घन में कब छावेंगे ॥ २ ॥ ३ ॥ मुक्तावहिंगे छोड़ावहिंगे ॥ ४ ॥ गोसांईजी कहत हैं कि जानकीजी कहनि हैं कि प्रभु हमारे मोह जनित भ्रम को अर्थात् कनकमृग विषयक जो भ्रम भयो ताको औ भेद बुद्धि को अर्थात् लक्ष्मणजू में जो आनि भांति की बुद्धि भई ताकों कब विसराइ देहिंगे । भाव यह दूनों दोष हमारे कब भूल्ति जाहिंगे ॥ ५ ॥ १० ॥

सत्य वचन सुनु मातु जानकी । जन के दुष रघुनाथ दुषित अति सहज प्रकृति करुनानिधान की ॥ १ ॥ तुव

वियोग संभव दारुन दुप विसरि गई महिमा सुवान की। नत कहुं कहं रघुपति सायक रवि तम अनीक कहं जातु-धान की ॥ २ ॥ कहं हम पसु सापामृग चंचल वात कहौं विद्यमान की। कहं हरि सिव अज पूज्य ज्ञान घन नहिं विसरति वह लगनि कान की ॥ ३ ॥ तुव दरसन संदेस सुनि हरि को वहुत भई अवलंव प्रान की। तुलसिदास गुन सुमिरि राम के प्रेममगन नहिं सुधि अपान की। ४॥११ ॥

सत्य वचन इ० ॥ १ ॥ तुम्हारे वियोग ते उत्पन्न जो कठिन दुःख ताते सुंदर जो वान की महिमा सो विसरि गई। नाहीं तो तुम ही क कहां रघुपति को शायक सूर्यसम कहां राक्षसों की सेना तमसम ॥२ कहां हम पशुन में चंचल वांदर औ कहां विष्णु शिव ब्रह्मा कारि पूज्य ज्ञानस्वरूप श्रीराम। वात कहौं मैं विद्यमान की हमारे पर जो वी है सो वात कहत हौं जेहि प्रकार ते हमारे कान में लगि वात कहे र विसरत नाहीं। इहां श्रीराम की अति करुना जनाए। तथा च स्मृतिः "ब्रह्मविष्णुमहेशाद्या यस्यांशा लोकसाधकाः। तमादिदेवं श्रीरामं विशुद्ध म्परमम्भजे" ॥ १ ॥ ३ ॥ तुम्हार दर्शन तुम्हार संदेशा सुनि के ह जानत हैं कि श्रीराम को प्रान की वहुत अवलंब भई। हनुमान जी श्री राम को गुनगन सुमिरि के प्रेम में मगन भये ताते अपनपो भूलि ग ॥ ४ ॥ ११ ॥

राग कान्हरा। रावन जौ पैं राम रन रोषे। को सधि सकै सुरासुर समरथ विसिप काल दसननि ते चोषे ॥ १ ॥ तपवल भुजवल के सनेहवल सिव विरंचि नीकै विधि तोषे। सो फल राज समाज सुअन जन आपुन नास आपने पोषे ॥ २ ॥ तुला पिनाक साहु नृप त्रिभुअन भट वटोरि सव के वल जोपे। परसुराम से सूर सिरोमनि पल में भये पित के से धोपे ॥ ३ ॥ कालि की वात वालि की सुधि करि

समुझि हिताहित पोलि झरोपे। कह्यो कुमंत्रिन को न मानिये बडी हानि जिय जानि त्रिदोपे। ४॥जासु प्रसाद जन्मि जग पुरुपनि सागर सृजे षने अरु सोपे। तुलसिदास सो स्वामि न सूझ्यो नयन बीस मंदिर केसे मोपे॥ ५॥ १२॥

रावन इ० । अब श्रीहनुमान जी औ रावन को संवाद लिखत हैं॥ १॥ तपवल ते कै भुजवल ते कै सनेहवल ते शिव विरंचि को नीको विधि से प्रसन्न किए, ताको फल राज समाज औ पुत्र सेवक पाए सो आप ने पोपे को आपुहि मति नाशो॥ २॥ राजा जनक रूप साहु ने त्रिभुवन के भट वटोरि के सब के बल को पिनाक रूप तराजू पर जोपे, भाव सब का पलरा उठि गया, श्रीरामहि का पलरा न उगा औ जेहि श्रीराम के आगे सूरशिरोमणि परसुराम से पल में खेत के धोपे से भए, भाव देख ही मात्र के रहि गए॥ ३॥ अब ही काल की बात कालि की है भाव थोड़े दिन की है ताको सुधि करि के हृदय रूप झरोपा को पट खोलि के हित अहित समुझि कुमंत्रिन को त्रिदोपे जानि अर्थात् कालवश जानि इन को कयो न मानिए काहे ते कि बड़ी हानि है॥ ४॥ जेहि के प्रसाद ते जगत में पुरुषं जनम के समुद्र को उत्पन्न किए औ खंदे औ सोखे। समुद्र को सृजे विधाता ने, औ खोदे सगर महाराज के पुत्रों ने, सोखे अगस्ति ने। मोसे कहे झरोखे॥ ५॥१२॥

राग मारु—जौं हौं प्रभु आयसु ले चलतो। तौ यहि रिसि तोहि सहित दसानन जातुधान दल दलतो॥ १॥ रावन सो रसराज सुभट रस सहित लंक पल पलतो। करि पुट पाक नाकनायक हित घने घने घर घलतो॥ २॥ बडे समाज लाज भाजन भयो बडो काज बिनु छलतो। लंकनाथ रघुनाथ वयर तरु आजु फैलि फुलि फलतो॥ ३॥ काल कर्म दिगपाल सकल जग जाल जासु करतलतो।

भाव जो तन न छूटा तो कहा प्रेम ॥ ३ ॥ करुणा श्रीजानकी जू
दशा देखि कोप रावण पर लाज जस चाहिए तस न करने को
विनु आज्ञा लंका जराइबे को तासो भरयो चरण कमल सिर नाय
मौनहीं कपि गमन कियो यह समय स्नेह को सर्वस्व है औ तुलसी
रसना रूखी है ताही ते गायो परत है। भाव सरस होती तो वाझि जा
॥ ४॥१५ ॥

राग बसंत—रघुपति देखो आयो आयो हनुमंत। लंके
नगर खेल्यो बसंत ॥ श्रीरामराजहित सुदिन सोधि। साथ
प्रबोधि लांघो पयोधि ॥ १ ॥ सिय पाय पूजि आसिषा पाय
फल अमिय सरिस षाये अघाय ॥ कानन दलि होरी रचि
वनाय। हठि तेल वसन बालधि बंधाय ॥ २ ॥ दिय ढोल
चले संग लोग लागि। बरजोर दई चहुंओर आगि ॥ पावत
आहुति किये जातुधान। लषि लपट भभरि भागे विमान ॥३॥
नभ तल कौतुक लंका विलाप। परिनाम पचहिं पातकी
पाप ॥ हनुमान हांक सुनि बरष फूल। सुर बार बार बरनहिं
लंगूल ॥ ४ ॥ भरि भुवन सकल कल्यान धूम। पुर जारि
वारिनिधि बोरि लूम ॥ जानकी तोषि पोषेउ प्रताप। जै
पवनसुअन दलि दुअनदाप ॥ ५ ॥ नाचहिं कूदहिं कपि
करि विनोद। पीवत मधु मधुवन मगन मोद ॥ यों कहत
लषन गहे पाय आय। मनिसहित मुदित भेंट्यो उठाय ॥६॥
लगे सजन सैन भयो हिय हुलास। जय जय जस गावत
तुलसिदास ॥ ७ ॥ १६ ॥

रघुपति इ० ॥ १ ॥ साथी जामवंत आदि ॥ २ ॥ बालधि लंगूर
॥ ३ ॥ आहुति को आपत रूप निसाचरों को किए। भभरि भड़कि
परिनाम पचहिं पाप ने पातकी अंत में पचत हैं तो क्यों न लंका में

॥ रोव ॥ ४ ॥ न्दमि कंगूर ॥ ५ ॥ पाल्यो प्रताप लंका जराइ
बीरन प्रताप को पुष्ट कियो। दुअन दाप कहें दुष्टन को अहंकार॥६॥
नि दुराचनि । शंका । ए सब लक्ष्मण जी कैसे जाने । उत्तर। सर्व-
मा हरि ॥ ७॥१६ ॥

राग जयतिश्री । सुनहु राम विस्रामधाम हरि जनक-
सुता ग्रति विपति जैसे महति । हे सौमित्रि बंधु करुना-
निधि मन महु रटति प्रगटहु नहिं कहति ॥ १ ॥ निज पद
कमल विलोक सोकरत नयननि वारि रहत न एक छन ।
मनहु नोल नीरज ससि संभव रवि वियोग दोउ स्रवत सुधा-
कन ॥ २ ॥ बहु राकसी सहित तरु के तर तुम्हरे बिरह
निज जन्म दिगोवति । मनहुं दुष्ट इन्द्रिय संकट महं बुद्धि
विवेक उदय मगु जोवति ॥ ३ ॥ सुनि कपिवचन विचारि
हृदय हरि अनपाइनी सदा सो एक मनं । तुलसिदास दुप
सुपातीत हरि सोच करत मानहु प्राकृत जन ॥ ४॥१७ ॥

हे सौमित्र बंधो हे करुणानिधे अस जानकी जू मन महं रटति हैं
औ प्रगट नहीं कहति हैं भाव, अति वियोग ते बोलि नहीं सकति हैं
वा राछसन के भय ते ॥ १ ॥ अपने चरणकमल को देखत रहति हैं
नीचे सिर करना एक शोकमुद्रा है औ शोक में रतह हैं औ आंखिन
में आंसु एक छन टिकत नाहीं मानो चंद्रमा ते उत्पन्न जे दोऊ स्याम
रंग के कमल ते सूर्य के वियोग ते सुधाकण श्रवत हैं । इहां दोऊ श्याम
कमल नेत्र हैं । मुख ससि है । रवि श्रीराम हैं । सुधाकण आंसू हैं ।२॥
तरु के तर में बहुत राक्षसिन के साहित तुम्हारे विरह में आपन जन्म
वितावति हैं मानो बुद्धि दुष्ट इन्द्रीन के संकट में विवेक उदै की राह
ताकति है । इहां दुष्टेन्द्री राक्षस हैं, बुद्धि श्रीजानकी जू हैं औ विवेक
श्रीराघव हैं ॥३॥ हरि कपि की बातें सुनि कै औ हृदय में अस विचारि
के कि सो जानकी जू एक मन में सदा अनपायनी कहें नाशरहित

भाव जो तन न छूटा तो कहा प्रेम ॥ ३ ॥ करुणा श्रीजानकी ज
दशा देखि कोप रावण पर लाज जस चाहिए तस न करने को
विनु आज्ञा लंका जराइवे को तासों भरचो चरण कमल सिर नाय
मौनहीं कपि गमन कियो यह समय स्नेह को सर्वस्व है औ तुलसी
रसना रूखी है ताही ते गायो परत है। भाव सरस होती तो वाही ज
॥ ४॥१५ ॥

राग वसंत—रघुपति टेपो आयो आयो हनुमंत। लंकी
नगर पिल्यो वसंत ॥ श्रीरामराजहित सुदिन सोधि। साथ
प्रबोधि लांघो पयोधि ॥ १ ॥ सिय पाय पूजि आसिषा पाय
फल अमिय सरिस पाये अघाय ॥ कानन दलि होरो रचि
वनाय। हठि तेल वसन वालधि वंधाय ॥ २ ॥ दिय ढोल
चले संग लोग लागि। वरजोर दई चहुंओर आगि ॥ आपत
आहुति किये जातुधान। लखि लपट भभरि भागे विमान ॥३॥
नभ तल कौतुक लंका विलाप। परिनाम पचहिं पातकी
पाप ॥ हनुमान हांक सुनि वरप फूल। सुर वार वार वरनहिं
लंगूल ॥ ४ ॥ भरि भुवन सकल कल्यान धूम। पुर जारि
वारिनिधि वोरि लूम ॥ जानकी तोपि पोपिउ प्रताप। जै
पवनसुअन दलि दुअनदाप ॥ ५ ॥ नाचहिं कूदहिं कपि
करि विनोद। पीवत मधु मधुवन मगन मोद ॥ यों कहत
लषन गहे पाय आय। मनिसहित मुदित भेंट्यो उठाय ॥६॥
लगे सजन सेन भयो हिय हुलास। जय जय जस गावत
तुलसिदास ॥ ७ ॥ १६ ॥

रघुपति इ० ॥ १ ॥ साथी जामवंत आदि ॥ २ ॥ बालधि लंगूर
॥ ३ ॥ आहुति को आपत रूप निसाचरों को किए।
परिनाम पचहिं पाप ने पातकी अंत में पचत हैं तो

भरी के उर पर गिरावति हैं मानो हृदय में विरह के तुरन्त को घाव देखि के धीरज धरि के तकि तकि के ततारानि कहं छीटा देति हैं। अंतर गति हाराति भीतर से हारति हैं ॥ ३ ॥ १९ ॥

तुम्हरे विरह भई गति कौन। चित दै सुनहु रामकरुना-निधि जानौं कछु पै सकौं कहि हौं न ॥ १ ॥ लोचन नीर कृपन के धन ज्यौं रहत निरंतर लोचन कौन । हा धुनि खगी लाज पिंजरी महं राखि हिये बडे बधिक हठि मौन ॥२॥ जेहि वाटिका बसति तहं खग मृग तजि तजि भजे पुरातन भौन। स्वास समीर भेंट भई भोरहुं तेहि मगु पगु न धस्यो तिहु पौन ॥ ३ ॥ तुलसिदास प्रभु दसा सीय की मुख करि कहत होति अतिगौन। दीजे दरस दूरि कीजे दुख हौ तुम आरति आरतहौन ॥ ४ ॥ २० ॥

तुम्हरे इ० । हे करुणानिधि राम तुमरे विरह में जानकी जू की जो गति भई है ताको चित्त दै के सुनहु हम कछु जानत हैं पै कहि नहीं सकत हों ॥ १ ॥ निरंतर नेत्रन के कोन में नेत्रन को जल रहत है जैसे कृपिन को धन कोने में रहत है। लाजरूपी पिंजरा महं हा धुनि रूपी पक्षिणी को बड़े बधिक रूप मौन ने हठि करि के राखा है ॥ २ ॥ जेहि वाटिका में श्रीजानकी जू बसति हैं तहां ते खग मृग अपना प्राचीन भौन छोड़ि के भजे। भाव शरीर से विरहानल की लपटि जो उठति है ताको न सहि सकी। स्वास औ समीर ते जो भूलहु के भेंट भई तो फेर तेहि मग तीनों समीर शीतल मंद सुगंध पग न धरते। भाव एक बार काहू भाग से बचि गए फेर जाइबे ते लांग जराइ देइगो ॥ ३ ॥ हे प्रभु सीय की जो दसा है सो मुख करि कहिबे ते अति गौण होति है दरशन दीजे औ दुख को दूर कीजे काहे ते कि तुम आर्त की आरति दाहक हौ ॥ ४॥२० ॥

कपि के सुनि कल कोमल बचन। प्रेमपुलकि सब गात

भक्ति में स्थित हैं। गोसाईं जी कहत हैं कि दुख सुख ते रहित जो हरि सो प्राकृत जन सम शोच करत हैं ॥ ४।१७॥

राग केदारा—रघुकुलतिलक वियोग तिहारे। मैं देषी जब जाइ जानकी मनहुं विरहमूरति मनमारे ॥ १ ॥ चित्र से नैन अरु गढ़े से चरन कर मढ़े से स्रवन नहिं सुनति सुपुकारे। रसना रटति नाम कर सिर चिर रहै नित निजपद कमल निहारे ॥ २ ॥ दरसन आस लालसा मन महं राषे प्रभुध्यान प्रान रषवारे। तुलसिदास पूजति त्रिजटा नीके रावरे गुनगन सुमन सवारे ॥ ३ ॥ १८ ॥

रघुकुल इ०। मानो विरह की मूरति हैं ताहू में उदास ॥ १ ॥ तसवीर के नेत्र सम नेत्र हैं। भाव अचल है रहे हैं औ गढ़े से चरन कर हैं। भाव चेष्टा रहित हैं। मूदे सम कान हैं। ताते धीरे से को कहै पुकारे से भी नहीं सुनति हैं। जीभ ते नाम को रटति हैं औ बहुत देर तक माथ पर हाथ धरे रहति हैं औ अपने चरणकमल को सदा निहारे रहति हैं ॥ २ ॥ आप के दर्शन की आशा औ लालसा मन में राखे हैं। ताते प्राण के रक्षा करनिहारो प्रभु को ध्यान राखे हैं औ रावरे गुनगन रूप संवारे भए फूल ते त्रिजटा नीके पूजति हैं ॥ ३ ॥ १८ ॥

अतिहिं अधिक दरसन की आरति। रामवियोग असोक विटपतर सीय निमिष कल्पसम टारति ॥ १ ॥ वार वार वर-वारिज लोचन भरि भरि वरत वारि उर ढारति। मनहुं विरह के सद्य घाय हियें लषि तकि तकि धरि धीर ततारति ॥ २ ॥ तुलसिदास यद्यपि निसिवासर छन छन प्रभु मूरतिहि निहारति। मिटति न दुसह तापतउ तनु की यह विचारि अंतरगति हारति ॥ ३ ॥ १९ ॥

आर्ति इ० ॥ १ ॥ वार वार श्रेष्ठ कमल लोचन में गरम जल भरि

[illegible] मानो हृदय में विरह के [illegible] को घाव [illegible] देनि हैं। अंतर [illegible] ॥ ३ ॥ २१ ॥

तुम्हरे बिरह भई गति जौन । चित दै सुनहु रामकरुना-निधि जानौं कछु पै सकौं कहि हौं न ॥ १ ॥ लोचन नीर कृपन के धन ज्यों रहत निरंतर लोचन कोन । हा धुनि खगी लाज पिंजरी महँ राखि हिये बडे बधिक हठि मौन ॥२॥ जेहि बाटिका बसति तहँ खग मृग तजि तजि भजे पुरातन भौन । स्वास समीर भेंट भई भोरहुँ तेहि मग पगु न धर्‌यो तिहुँ पौन ॥ ३ ॥ तुलसिदास प्रभु दसा सीय की मुख करि कहत होति अतिगौन । दीजै दरस दूरि कीजै दुख हौ तुम आरति आरतहौन ॥ ४ ॥ २० ॥

तुम्हरे १० । हे करुणानिधि राम तुमरे विरह में जानकी जू की जो गति भई है ताको चित दै के सुनहु हम कछु जानत हैं पै कहि नहीं सकत हौं ॥ १ ॥ निरंतर नैनन के कोन में नेत्रन को जल रहत है जैसे कृपिन को धन कोने में रहत है । लाजरूपी पिंजरा महं हाधुनि रूपी पक्षिणी को बड़े वधिक रूप मौन ने हठि करि के राखी है ॥ २ ॥ जेहि वाटिका में श्रीजानकी जू वसनि हैं तहां ते खग मृग अपना प्राचीन भौन छोड़ि के भजे । भाव शरीर से विरहानल की तपनि जो उठनि है ताको न सहि सकी । स्वास औ समीर ते जो भूलीउ के भेट भई तो फेर तेहि मग तीनों समीर शीतल मंद सुगंध पग न धरयो । भाव एक वार काहू भाग से बचि गए फेर जाइवे ते स्वांस जलाइ देइगो ॥ ३ ॥ हे प्रभु सीय की जो दशा है सो मुख करि कहिवे ते अति गौण होति है दरशन दीजे औ दुख को दूर कीजे काहे तें कि तुम आर्त्त की आर्त्ति दाहक हौ ॥ ४॥२०॥

कपि के सुनि कल कोमल बयन । प्रेमपुलकि सब गात

सिथिल भये भरे सलिल सरसीरुहनयन ॥ १ ॥ सियवियोग-सागर नागर मनु बूडन लग्यो सहित चितचयन । लही नाव पवनजप्रसन्नता वरवस तहां गह्यो गुनमयन ॥ २ ॥ सकत न बूझि कुसल बूझे बिनु गिरा विपुल व्याकुल उर अयन । ज्यौं कुलीन सुचि सुमति वियोगिनि सनमुख सहै बिरह सर पयन ॥ ३ ॥ धरि धरि धीर बीर कोसलपति किये यत्न सकै उतरु न दयन । तुलसिदास प्रभु सखा अनुज सौं सयनहिं कह्यो चलहु सजि सयन ॥ ४ ॥ २१ ॥

कपि इ० ॥ १ ॥ श्री जानकी जू के वियोग रूपी समुद्र में श्रीराम जू के मन जो नागर सो, अपने चित्त के आनन्दसहित बूडन लग्यो तहां पवनसुत की प्रसन्नता रूप नौका लही पर तहऊं बरवस ते काम ने गुन को गह्यो । भाव मन को खींच्यो पवनजप्रसन्नता को नउका कहिबे को यह भाव कि इन की प्रसन्नता ते जानि परत है शीघ्र रावण जीत्यो जायगो ॥ २ ॥ श्रीराम कुशल नहीं बूझि सकत हैं औ कुशल बूझे बिना उर रूप घर में बानी अति व्याकुल है । जैसे कुलीन पवित्र सुंदर मतिवाली वियोगिनी नायिका बिरह को चोखो बान सन्मुख सहै है । भाव कुछ उपाय नहीं करि सकति है ॥ ३ ॥ ४ ॥ २१ ॥

राग मारू । जब रघुबीर पयानो कीन्हो । छुभित सिंधु डगमगत महीधर सजि सारंग कर लीन्हो ॥ १ ॥ सुनि कठोर टंकोर घोर अति चौंके विधि त्रिपुरारि । जटापटल ते चली सुरसरी सकत न संभु संभारि ॥ २ ॥ भये बिकल दिगपाल सकल भय भरे भुवन दस चारि । परभर लंक ससंक दसानन गर्भ स्रवहिं अरिनारि ॥ ३ ॥ कटकटात भट भालु विकट मर्कट करि केहरिनाद । कूदत करि रघुनाथ सपथ उपरीउपरा बदि बाद ॥ ४ ॥ गिरि तरु धर नख मुख कराल

रद कालहु करत विषाद। चले जिस दिसि रिसिभरि धरु धरु कहि को वराक मनुजाद ॥ ५ ॥ पवन पंगु पावक पतंग ससि दुरि गए थके विमान। जाचत सुर निमिष सुरनायक नयन भार अकुलान ॥ ६ ॥ गये पूरि सर धूरि भूरि भय धग थल जलधि समान। नभ निसान हनुमान हांक सुनि समुझत कोउ न अपान ॥ ७ ॥ दिग्गज कमठ कोल सहसा-नन धरत धरनि धरि धीर। वारहिं वार अमरषत करषत करकैं परी सरीर ॥ ८ ॥ चली चमू चहुं ओर सोर कछु बनै न वरनत भीर। किलकिलात कसमसत कोलाहल होत नीरनिधितीर ॥ ९ ॥ जातुधान पति जानि काल-वस मिले विभीषन आइ। सरनागतपालक कृपाल कियो तिलक लियो अपनाइ ॥ १० ॥ कौतुक हीं वारिधि बंधाइ उतरे सुवेलतट जाइ। तुलसिदास गढ देषि फिरे कपि प्रभु आगमन सुनाइ ॥ ११ ॥ २२ ॥

जब ३०। छुभित कहैं चलायमान ॥ १ । २ ॥ ३ ॥ केहरिनाद सिंहनाद उपरिउपरा चढ़ा चढ़ी। ४। धरु धारन किए, रद दांत, वराक तुच्छ, मनुजाद राक्षस ॥५। वायु वंद ह्वै गयो, अग्नि सूर्य चन्द्रमा सब छिपि गए, विमान थकि गए, देवता निमेष जाचत भए, औ इन्द्र नैनन के भार तें अकुलाय उठे। भाव बहु नैनन में धूरि परी ताते ।६॥ धूरि से तलाव पूरि गए, परवत औ थल सब समुद्र के समान ह्वै गए। भाव चरनन के आघात से आकाश में नगारा औ हनुमान जू को हांक सुनि के कोऊ अपनपो नहीं समुझत है। अर्थात् देहाध्यास रहित भए ॥ ७ ॥ दिग्गज कमठ वाराह शेष धीर धरि के भूमि को धरत हैं औ शरीर में कड़कै परी है ताते वारंवार आमर्षयुक्त होइ खींचत हैं। अर्थात् शरीर को सीधा करत हैं ॥ ८ ॥ कसमसत एक में एक मिलि गए हैं ताते ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ २२ ॥

राग असावरी। आए दूत देषि सुनि सोच सठ मन में। वाहिर वजावै गाल भालु कपि कालवस मोसे वीर सो चहत जीत्यो रारि रन में ॥ १ ॥ राम छाम लरिका लषन वालिवाल कहि घालि को गनत रिच्छ जल ज्यों न घन में। काज को न कपिराज कायर कपिसमाज मेरे अनुमान हनुमान हरि गन में ॥ २ ॥ समय सयानी रानी मृदुवानी कहैं पिय पावक न होहि जातुधानवेनुवन में। तुलसी जानकी दिये स्वामी सों सनेह किये कुसल न तरु सव ह्वै है छार छन में ॥ ३॥२३ ॥

आए इ० ॥ १ ॥ छाम कहैं दुर्बल, वालियालक अंगद, जल ज्यों न घन में जैसे वेजल को वादर वेगनती को होत है। हरिगन वानर को समूह ॥ २ ॥ राक्षस रूप जो वांस का वन है तामें अग्नि मति होहि ॥ ३ ॥ २३ ॥

आपनो आपनो भांति सव काहू कही है। मंदोदरी महोदर मालिवान महामति राजनीतिपाहुंचि जहां लो जाकी रही है ॥ १ ॥ महामद अंध दसकंध न करत कान मीचुवस नीचु हठि कुगहनि गही है। हंसि कहै सचिव सयाने मों सो यों कहत चहत मेरु उडन वडी वयार वही है ॥२॥ भालु नर वानर अहार निशरनि को सोऊ न्टप वाल- कनि मांगो धारि लहो है। देषो काल कौतुक पिपीलकनि पछ लागे भाग मेरे लोगनि के भई चित चही है ॥ ३ ॥ तोसो न तिलोक आजु साहस समाजु साजु महाराजु आयसु भो जोई सोई सही है। तुलसी प्रनाम कै विभीषन विनोति कहै ष्याल वैठे ताल कपि केलि लंका दही है ॥ ४॥२४ ॥

आपनो इ० । धारि कहै पीन अपर पद सु० ॥ ४ ॥ २४ ॥

दूसरो न देखियत साहिब सम रामै। वेदऊ पुरान ... बिरतरत जाको नमु सुनत गावत गुन यामै ॥१॥ माया जीव जग जाल सुभाव करम काल सब को सासकु सब मै सब जामै। बिधि से करनिहार हरि से पालनिहार हर से हरनिहार जपै जाकि नामै ॥ २ ॥ सोई ... वेष जानि जन की बिनती मानि मतो नाथ सोई जाते ... परिनामै। सुभटसिरोमनि कुठार पानि सारिखेहुं ... भी लपाई द्रशां किये सुभ सामै ॥ ३ ॥ वचनविभूषन विभीषन वचन सुनि लागें दुख दूषन से दाहिनेउ वामै। ... हुमकि हिये हन्यो लात भलि तात चल्यो सुरतरु ... तजि बीर धामै ॥ ४॥२५ ॥

दूसरी इ० । कोविद पंडित, विरतरत वैराग्यरत ॥ १ ॥ सासकु शासनकर्ता ॥ २ ॥ सुभटन में शिरोमणि परशुराम ऐसहुं देखि औ ... के श्रीराम से शुभ जानिकै सामे किए अर्थात् मिलाप किए॥३॥ ... वचन को विशेष भूषनकर्ता जो विभीषन का वचन है ताको सुनि के ... दाहिने वचन है पर दुख औ दूषन समान वाम लगे वा दाहिने औ ... में बैठे रहे तिन के दुख दूषन समान लगे। गोसाईं जी कहत हैं ... हुमकि करि के हृदय में लात मार्‍यो, हे तात भला किए अस कहि ... वाम सम जो रावन है ताको तजि के सुरतरुसमान जो श्रीराम ... तिन को ताकि के चल्यो ॥ ४ ॥ २५ ॥

... आय माय पाय परि कथा सो सुनाई है। समाधान ... भाति विभीषन को वार वार कथा भयो तात लात मारे ... बड़ो भाई है ॥ १ ॥ साहिब पितुसमान जातुधान को ... तिलक ताके अपमान तेरो बड़ीये बडाई है। गरत गलानि ... जानि सनमानि सिख देति रोष ... दोष सउ सनुंझै

भलाई है ॥ ३ ॥ इहाँ तें विमुष भये राम की सरन
भलो नैकु लोक राखि निपट निकाई है । मातुपग सं
नाई तुलसी असीस पाइ चले भले सगुन कहत मन भ
है ॥ ४॥२६ ॥

जाय इ० । विभीषन अपने माता को ढिग जाय के पांय प
के लात मारिबे की कथा सुनाई ॥ १ ॥ एक तो साहिब है दू
पितुसमान है। अर्थात् बड़ा भाई है और राक्षसन को राजा है ताके अ
मान तें तेरी बड़िए बड़ाई है । विभीषन को गलानि में गरत जानि
माता सनमानि के शिक्षा देति हैं कि समुझे तें क्रोध किए में दोष
और सहे में भलाई है ॥ २ ॥ यद्यपि रावन किहां ते विमुख भए
औ श्रीराम जू के शरन गए में भलो है पर तथापि किंचित् लोक
राखे में निपट सुंदराई है । भाव लोग कहैंगे कि संकटसमय में भा
को छोड़ दियो ॥ ४॥२६ ॥

भाई कैसो करों डरों कठिन कुफेरैं । सुकृत संकट पर्यो
जातु है गलानि गर्यो कृपानिधि को मिलौ पै मिलि कै
कुबेरै ॥ १ ॥ जाय गहे पाय धाय धनद उठाय भेंट्यो समा-
चार पाय पोच सोचत सुमेरैं । तहँई मिले महेस दियो हित
उपदेस राम की सरन जाहि सुदिन न हेरैं ॥ २ ॥ जाको
नाम कुंभज कलेस सिंधु सोखिबे को मेरो कह्यो मानि तात
बांधे जनि बेरैं । तुलसी मुदित चले पाये हैं सगुन भले रंक
लूटिबे को मानो मनिगन ढेरैं ॥ ३ ॥२७ ॥

भाई इ० । विभीषन अपने मन में विचार करत हैं कि हे भाई हम
कैसा करैं कठिन कुफेरें हैं । धर्म्म संकट में परत भए । भाव राम विरोधी
किहां न रहना चाहिए औ त्यागिबे में लोकोपहास, कि आपदकाल में
छोड़ि भागे एहि ग्लानि में गरे जात हैं । फेर यह निश्चै कियो कि कुबेर
से मिलि करि के फेर श्रीरघुनाथ सो मिलो ॥ १ ॥ फेर कुबेर के ढिग

विधाता ने भली भांति बात राखी ॥ ३ ॥ ४ ॥ ॥ कृपासिंधु गूल
वे परिश्रम अनुकूल भए । मुद को मूल रूप जो मार्ग ताको जना
सनमानि कै दीनजन जानि कै अपनाय लियो ॥ ५ ॥ स्वारथ
परमारथ दोऊ हस्तगत भयो औ श्रमपथ बीति गयो यह सप
कैधौं सौतुख है कि सुख रूप धान को देवता सींचत औ निराय
हैं । निराइबे सोडिबे को कहत हैं ॥ ६ ॥ गुरु गौरीश मिले अब
सीतापति औ हित हनुमान ते जाय के मिलि हौं अब हम को
करिबे को है । वांछित की सीमा अघाय कै मिली ॥७॥ मैं जो ला
सो लदि के ललचाइ के को जानै कहां जाय मरतो अब अभै
नगारा बजाय कै श्रीरघुवीर को भजि हौं ॥ ८ ॥ २८ ॥

पदपदुम गरीब निवाज के । देखिहौं जाइ पाइ लोच
फल हित सुर साधु समाज के ॥ १ ॥ गई बहोर ओर नि
हक साजक बिगरे साज के । सबरीसुखद गीधगतिदाय
समन सोक कपिराज के ॥ २ ॥ आरति हरन सरन सम
सब दिन अपने की लाज के । तुलसी याहि कहत नतपाल
मोसे निपट निकाज के ॥ ३ ॥ ४६ ॥

पद ३० ॥१॥ जो बात गई है ताकौं बहोरनिहारे हैं औ अन्त
निर्वाह करनिहारे हैं औ बिगरे भए साज को साजनिहारे हैं ॥ २
आरति के हरनिहारे हैं औ सब दिन में अपने भक्त की लाज
समर्थ सरन कहें रक्षक हैं । "शरणं गृहरक्षित्रोरित्यमरः" । नतपाल
शरणागत रक्षक ॥ ३ ॥ २९ ॥

महाराज राम पहिं जाउंगो । सुख स्वारथ परिह
करिहौं सोइ जो साहिबहि सोहाउंगो ॥ १ ॥ सरनाग
सुनि वेगि बोलिहैं हौं निपटहिं सकुचाउंगो । राम गरीब
निवाज निवाजि हैं जानिहैं ठाकुर ठाउंगो ॥ २ ॥ धरि

गाय गाय माथे एहि ते केहि लाभ घघाउंगो। सपनो सो अपनो न कछू लपि लघु लालचं न लोभाउंगो ॥३॥ कहिहों बलि रोटिहा रावरो विन मोलही विकाउंगो। तुलसी पट ऊतरे थोढ़िहौं उवरी जूठन पाउंगो ॥ ४ ॥ ३० ॥

टी० । महा इ० ॥१॥ जानि हैं ठाकुर ठाउंगो ठांव कहैं स्थान गयो बंगा ठाकुर मोको जानि हैं अर्थात् स्थानभ्रष्ट ॥२॥ लघु लालच लौकिक इत्यादि ॥ ३ ॥ ४ ॥ ३० ॥

पाइ सचिय विभीपन के कही। कृपासिंधु दसकंध वंधु लघु चरन सरन आयो सही ॥ १ ॥ विपम विपाद वारिनिधि बूड़त थाह कपीस कथा लही। गये दुप दोष देपि पद पंकज अब न साध एको रही ॥ २ ॥ सिथिल सनेह सराहत नप सिप नीकि निकाई निरवही। तुलसी मुदित दूत भए मनं मंहु अमिय लाहु मागत मही ॥ ३॥३१ ॥

आय इ०। विभीपन के सचिव ने श्री रामचंद्र से आइ के कही ॥१॥ विपम विपाद रूप समुद्र में बूड़त रहे तहां सुग्रीव की कथा समुझि थाह लई, भाव वालि के त्रास से सुग्रीव के उवारे तो हमहूं को उवारेंगे ॥२॥ राम ते सिख ले जो नीकी निकाई निवही है ताको सराहत हैं औ नेह ते सिथिल हैं। दूत हर्षित होत भयो, मानो छांछ को मागत रहे औ अमृत पाए। इहां छांछ सनेसा है औ अमृत सुंदराई को देखिवो है ॥ ३ ॥ ३१ ॥ टि०—पद पंकज देखतही सभी दुख और दोष दूर हुए और एक भी वासना (सोध) वाकी न रही सब पूरी होगई।

विनती सुनि प्रभु मुदित भए। रीछराज कपिराज नील नल वोलि वालिनंदन लये ॥ १ ॥ बूझिए कहा रजाइ पाइ नय धर्मसहित उतर दये। वली वंधु ताको विनोद बस बयर वीज वरवस वये ॥२॥ वांह पगार हार हरे से रूमच

न कबहूं फिरि गये। तुलसी असरन सरन स्वामि के विरद विराजत नित नये ॥ ३॥३२ ॥

विनती ॥ १ ॥ श्रीरामजू कहे तुम सब के बूझिवे में कहा हैं, अस आज्ञा पाइ के नीति धर्म्म सहित उत्तर देत भए। तेहि रावण बली को बंधु है जेहि ने विशेष मोह के वश बैर को बीज बोए। एइ नीति कहे अब धर्म्म कहत हैं ॥ २ ॥ हे बांह पगार तेरे द्वार ते भय सहित जे पुरुष ते कबहूं फिरि न गए। स्वामी के अशरण शरण जे विरद हैं ते नित्य नए विराजत हैं। पगार नाम यद्यपि भित्ति का है पर इहां प्रबल के अर्थ में जानना ॥ ३ ॥ ३२ ॥

हिय विहसि कहत हनुमान सों। सुमति साधु सुचि सुहृद विभीषन बूझि परत अनुमान सों ॥ १ ॥ हौं बलि जाउं और को जानै कहि कृपानिधान सों। छली न होइ स्वामि सनमुख ज्यों तिमिर सातहयजान सों ॥ २ ॥ खोटो खरो सभीत पालिये सो सनेह सनमान सों। तुलसी प्रभु कीबो जो भलो सोइ बूझि सरासन बान सों ॥ ३॥३३ ॥

हिय ह० ॥ १ ॥ कृपानिधान सो हनुमान जू यह बात कही कि मैं बलि जाउं। आप छोड़ि और अस को जानै छली पुरुष स्वामी के सन्मुख नहीं होत है, सातहयजान जो सूर्य तिन्ह सो जैसे अंधकार सन्मुख नहीं होत है ॥ २ ॥ खोटा है वा खरो है पर सो विभीषण सभीत है तातें सनेहयुक्त सन्मान सो पालिये। शरासन औ बाण सो बूझि कहैं जानि के जो आप करब सो भलो है। भाव शरासन टेढ़ा औ बाण सूधा आप दोऊ को राखे हैं। वा शरासन बाण सो बूझि कै आप जो करब सो भला है। भाव दूसरे से बूझिबे को क्या प्रयोजन है। आप के पराक्रम को को भेद ले सकैगो ॥ ३ ॥ ३३ ॥

सांचेहु विभीषन आइ है। बूझत विहसि कृपालु लषन सुनि दाहत सकुचि सिर नाइ है ॥ १ ॥ ऐहैं कहां नाथ

ही है यां क्यों कहि जाति बनाइ है। रावनरिपुहि राखि
तर बिनु को त्रिभुवन पति पाइ है ॥ २ ॥ प्रभु प्रसन्न सब-
ा सराहत दूतबचन मन भाइ है। तुलसी बोलिय बेगि
लन सों भयु महाराज रजाइ है ॥ ३ ॥ ३४ ॥

मानिहु इ॰ लपनलाल सों श्रीरामकृपालु विहंसि के बूझत हैं कि
वेहु विभीषण आवैगो। यह सुनि शिर नवाइ सकुचि के लपनलाल
त हैं ॥ १ ॥ हे नाथ आवैगो कहा अर्थात् भविष्य आप काहे को
त हैं विभीषण आइ गयो है औ आप के इहां बनाइ के क्यों कहि
ाइ सकत है आप के बिना रावण के रिपु को राखि कै ऐसो को
भुवन में है जो प्रतिष्ठा पावैगो ॥ २ ॥ प्रभु प्रसन्न हैं सब सभा सरा-
ति है औ यह बचन विभीषण के दूत के मन में भावत भयो। लपन-
ाल सों श्रीमहाराज रामचन्द्र की आज्ञा भई कि विभीषण को शीघ्र
ुलाइ लीजिये ॥ ३ ॥ ३४ ॥

चले लेन लपन हनुमान हैं। मिले मुदित बूझि कुसल
परस्पर सकुचत करि सनमान हैं ॥ १ ॥ भयो रजायसु पाउं
धारिये बोलत कृपानिधान हैं। दूरि तें दीनबंधु देखे जनु देत
अभय बरदान हैं ॥२॥ सील सहस हिमभानु तेज सत कोटि
भानहुं के भानु हैं। भक्तनि को हित कोटि मातु पितु अरिन्ह
को कोटि कृसानु हैं ॥ ३ ॥ जनगुन रज गिरि गनि सकुचत
निज गुनगिरि रज परवान हैं। बाहुं पगार बोल को अविचलु
बेद करत गुनगान हैं ॥४॥ चरचा चलति विभीपन की सोइ
सुनत सुचितु दै कान हैं। चारुचाप तूनीर तामरस करनि
सुधारत बान हैं ॥ ५ ॥ हरषत सुर बरषत प्रसून सुभ सगुन
कहत कल्यान हैं। तुलसी ते कृतकृत्य जे सुमिरत समय
सुहावन ध्यान हैं ॥ ६ ॥ ३५ ॥

चले इ० । लवाइबे के हेतु लषनलाल औ हनुमान जू चले हैं, जब विभीषण के ढिग गए तब हर्षित परस्पर मिले औ कुशल बूझि के सन्मान करि के सकुचत हैं । सकुचने को यह भाव जस सन्मान किया चाही तस नाहीं बनत है या करि के अर्थ से जानना अर्थात् सन्मान से विभीषण जू सकुचत हैं॥ १॥२ ॥ प्रभु सहस्र चन्द्र सम शीलवान हैं, शतकोटि भानुहू के भानु सम तेजस्वी हैं, कृशानु कहें अग्नि ॥ ३ ॥ जन को गुण जो रज सम है ताको गिरि सम गनि के सकुचत हैं औ आपन गुण जो गिरि सम है ताको रज सम मानत हैं ॥ ४ ॥ सुन्दर चाप औ तरकस है कर कमलनि ते बाण सुधारत हैं ॥५॥६॥३५॥

रामहिं करत प्रनाम निहारि कै। उठे उमगि आनंद प्रेम परिपूरन बिरद बिचारि कै ॥ १ ॥ भयो बिदेह बिभीषन उत इत प्रभु अपनपौ बिसारि कै। भली भाँति भावते भरत ज्यों भेट्यो भुजा पसारि कै ॥ २ ॥ सादर सबहिं मिलाइ समाजहिं निपट निकट बैठारि कै। बूझत कुसल बेस सप्रेम अपनाइ भरोसों भारि कै ॥ ३ ॥ नाथ कुसल कल्यान सुमंगल बिधि सुष सकल सुधारि कै। देत लेत जे नाम रावरो बिनय करत मुषचारि कै ॥ ४ ॥ जो मूरत सपने न बिलोकत मुनि महेस मन मारि कै। तुलसी तेहि हौं लियो अंक भरि कहत कछु न सँवारि कै ॥ ५ ॥ ३६ ॥

रामहिं इ० । बिरुद विचारि कै अशरण के शरण हम हैं यह बान विचारि कै ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ हे नाथ जे रावरो नाम लेत हैं तिन्हैं ब्रह्मा कुशल कल्याण सुमंगल सकल सुख सुधारि कै देत हैं औ चारि मुख से विनय करत हैं ॥ ४ ॥ ५ ॥ ३६ ॥

करुनाकर की करुना भई। मिटी मीचु लहि लंक संक गइ काहू सों न षुनिस पई ॥ १ ॥ दससुष तज्यो दूध माषी ज्यों आपु काढ़ि साढ़ी लई । भव भूषन सोइ

कियो बिभीषनु मुद मंगल महिमा मई ॥ २ ॥ विधि हरि-हर मुनि सिद्ध सराहत मुदित देव दुंदुभि दई। बारहिं बार सुमन बरषत हिय हरषत कहि जय जय जई ॥३॥ कौसिक सिला जनक संकट हरि भृगुपति की टारी टई। खग मृग सबर निसाचर सब की पूंजी बिनु बाढ़ी सई ॥ ४ ॥ जुग जुग कोटि कोटि करतब करनी न कछु बरनी नई। राम भजन महिमा हुलसी हिय तुलसीहू की बनि गई ॥५॥३७॥

करुणा ६० । करुणाकर जो श्रीराघव तिन्ह की करुणा होति भई विभीषण की मृत्यु मिटी लंका मिली औ सब शंका गई औ काहू सो तुनुस औ इर्षा न भई। भाव बिना परिश्रम ई सब बात भई ॥१॥ दशमुख ने विभीषण को दूध के माखी सम तज्यो औ आप साढ़ी सब लंका के सुख को लई सोइ विभीषण को श्रीराम ने भव जो संसार ताको भूषण औ मुद मंगल महिमा मई कियो ॥ २ ॥ ३ ॥ विश्वामित्र अहल्या औ जनक को संकट हरि के परशुराम की टई करें गर्व टारे औ खग मृग भिल्ल औ निशाचर इन्ह सब की बिन पूंजी की बढ़ती बाढ़ी ॥ ४ ॥ युगयुग में कोटि कोटि श्रीराम के करतब हैं कछु नई करनी नहीं बरनी गई ॥ ५॥३७ ॥

मंजुल मूरति मंगल मई। भयो बिसोक बिलोकि बिभी-षनु नेह देह सुधि सींव गई ॥ १ ॥ उठि दाहिनी ओर तें सन्मुख सुखद मांगि बैठक लई। नख सिख निरखि निरखि सुख पावत भावत कछु कछु ऐ भई ॥ २ ॥ बार कोटि सिर काटि साटि लटि रावन संकर पै लई। सोइ लंका लखि अतिथि अनवसर राम तृनासन ज्यों दई ॥३॥ प्रीति प्रतीति रीति सोभा सरि थाहत जहं जहं तहं घई। बाहु बली बाने बोल को बीर बिरद बिरुदै नई ॥४॥ को दयालु दूसरो

दुनी जेहि जरनि दीन हिय की हई। तुलसी काको नाम जपत जग जगती जामति बिनु बई ॥ ५॥३८॥

मंजुल इ०। नेह कहैं सांसारिक प्रेम और देह की सुधि की मर्यादा गई वा श्रीराम के नेह ते देह की सुधि की मर्यादा गई॥ १॥ दाहिनी ओर बैठे रहे तहां ते उठि के सुखद सन्मुख बैठवे की श्रीराम सो आज्ञा मांगि लई। अर्थात् जामें रूप भली भांति देखि परै। भावत कछु कछु ऐ भई महा दुख की भावना करत रहे सो सुख की भावना करण लगे॥ २॥ अनंत वार सिर काटि कै ऊख समान लटिके जो रावण ने श्रीशंकर पै लंका लई सोई लंका को विभीषण को अतिथि मानि कै अनवसर समुझि कै अर्थात् वनवास समुझि कै तृण के आसन समान दई। भाव यह विचारे कि हम कुछ न दिये॥३॥ प्रीति प्रतीति रीति औ शोभा रूप नदी को जहां जहां थाह लेत हैं तहां तहां अथाहै पावत हैं। बांहु के बली बोल के बाना वाले अर्थात् जो कहत सोई करत और विश्व के विजय करनेवाले वीर औ नीतिवान और दयाल कौन दूसरो दुनियां में है, जेहि ने दीन के हिय की जरनि नाशी है औ काको नाम जपत संसार में पृथ्वी विना बोए जामति है॥४॥५॥३८॥

सब भांति विभीषन की बनी। कियो कृपालु अभय कालहु ते गई संसृति सासति घनी॥ १॥ सषा लषन हनुमान संभु गुरु धनी राम कोसल धनी। हियेहि चीर चीर कीन्ही विधि रामकृपा औरै ठनी॥ २॥ कालुष कलंक कलेस कोस भयो जो पद पाइ रावन रनी। सोइ पद पाइ विभीषन भो भव भूषन दलि दूषन अनी॥ ३॥ वांह पगार उदार सिरोमनि नतपालक पावन पनी। सुमन वरषि रघुवर गुन वरनत हरषि देव दुंदुभि हनी॥ ४॥ रंक निवाज रंक राजा किये गये गरव गरि गरि गनी। राम प्रनाम महा महिमा खर सकल सुमंगल मनि जनी॥५॥ होय

नो ठेसेहि चजहूं गये राम सरन परिहरि लनो । भुजा
ठाय माथि संकर करि कसम पाइ तुलसी भनो ॥६॥३८॥
मव मानि इ० । संग्राने मंसार ॥१॥ श्रीलखनलाल औ हनुमान
मखा भए औ श्रीशिव जु गुरु भये औ कोशल धनी जो श्रीराम
धनी कहं स्वामी भए विभीषण के हृदय में और रहा भाव रावण
उपदेश करि हित करे और विधाना ने और किया । अर्थात् रावण
मान्यो और श्रीराम के कृपा ते और ठनत भई अर्थात् विभीषन ने
टका पाइ ॥ २ ॥ जो राजपद पाय के रनी रावण पाय औ कलंक
औ क्लेश को खजाना भयो सोई राजपद पाय के दूषणगण को दलि के
संसार को भूषण विभीषण भयो ॥ ३ ॥ पावनपनी पवित्र जाकी
पवित्रता है ॥४॥५॥ रंक निवाजा कहं गरीबनेवाज जो श्रीराम सो रंक
जो विभीषण ता को राजा किए औ गनी कहें धनी अपने गर्व ते गलि
गलि गये अर्थात् विभीषण को ऐश्वर्य देखि कै श्रीराम के प्रणाम की
महा महिमा की खानि ने सकल सुमंगल रूप मणि को उत्पन्न किये
॥५॥ मनी कहं अभिमान ताको छोड़ि के अजहूं श्रीराम शरण गए ऐसे
ही भलो हाथे अर्थात् जस विभीषण को भयो भुजा उठाय कै अर्थात् ईश्वर
की ओर हाथ करि के और शिवजी के शाखी करि के शपथ खाय के
तुलसी ने कही ॥ ६ ॥ सो० । इतनहु पर नहिं होय, सन्मुख सीता-
नाथ जो । हरिहर पछु ह्य सोय, तरसत भूसा घास को ॥ ३९ ॥

कहो क्यों न विभीषन की बनै । गयो छाडि छल सरन
राम की जो फल चारि चाखो जनै ॥ १ ॥ मंगलमूल प्रनाम
जासु जग मूल अमंगल कै पनै । तेहि रघुनाथ हाथ माथे
दियो को ता की महिमा भनै ॥२॥ नाम प्रताप पतित पावन
किय जे न अघाने अघ घनै । कोउ उलटो कोउ सूधो जपि
भये राजहंस धायस तनै ॥ ३ ॥ हुतो ललात कृसगात पात-
परि मोद पाइ कोदोकनै । सो तुलसी चातक भयो जाचत
रामस्याम सुंदर घनै ॥ ४ ॥ ४० ॥

कहो इ० । जो फल चारि चारयो जनै जो शरणागत चारो वेद में फल रूप है औ अर्थ धर्म्म काम मोक्ष चारो की उत्पत्ति करनिहारी है ॥ १ ॥ जाको प्रणाम मंगल को मूल है औ अमंगल के मूल को खोदत है ते रघुनाथ ने हाथ माथे पर दियो तब ताकी महिमा को को कहै ॥ २ ॥ अघ औ अनीति ते जे न अघाने ते पतितन को नाम ने अपने प्रताप ते पावन किये उलटो वाल्मीक जी जपि के सूधो प्रह्लाद आदि जपि कै काक से हंस भए ॥ ३ ॥ दुर्बल शरीर ललचात जो खरी खात रह्यो औ कोदो के कनौ पाय कै आनन्द पावत रह्यो सो राम श्यामसुंदर घन को जाचत मात्र चातक भयो । इहां खरी लौकिक सुख को जानौ औ कोदो के कणवत् स्वर्गादि सुख जानो औ चातक होव श्रीराम में अनन्य होव है ॥ ४॥४० ॥

अतिभाग विभीषन की भली । एक प्रनाम प्रसन्न राम भये दुरित दोष दारिद दली ॥ १ ॥ रावन कुंभकर्न वर मागत सिव विरंचि बाचा छली । रामदरस पायो अविचल पद सुदिन सगुन नीकी चली ॥ २ ॥ मिलनि विलोकि स्वामि सेवक की उकटै तरु फूलै फली । तुलसी सुनि सनमान बंधु को दसकंधर हसि हिय जली ॥ ३॥४१ ॥

आति इ० । दुरित दोष पाप जनित दोष वा पाप औ औगुन ॥१॥ रावण औ कुंभकर्ण को वर मांगत में शिव विरंचि ने सरस्वती करि के छले अर्थात् आन कै आन कहवाय दिए औ वे वर मागे श्रीराम के दरशन ते विभीषण अविचल पद पाए औ सुंदर दिन औ सुंदर सगुन भली भांति ते विभीषण के संग चले भाव विभीषण दिन सगुनादि न विचारे रहे आप से आप संग लगे ॥ २ ॥ उकठे तरु फूले फले को यह भाव कि जे जड़ श्रीराम सनेहरहित रहे ते सनेहसहित भए हंसि हिय जले ऊपर से तो हंसे पर भीतर से जले ॥ ३॥४१ ॥

गए राम सरन सब को भलो । गनी गरीब बडो छोटो

पुत्र मूढ़ हीनबल पतितकों ॥ १ ॥ पंगु अंध निर्गुनी निसंबल जो न लहे जांचे जलो । सो निबह्यो नीके जो जनमि जग रामराज मारग चलो ॥ २ ॥ नाम प्रताप दिवाकर कर तें गात तुहिन ज्यों कलिमलो । सुत हित नाम लेत भवनिधि तरि गयो अजामिल सो खलो ॥ ३ ॥ प्रभुपद प्रेम प्रनाम कामतरु सद्य विभीषन को फलो । तुलसी सुमिरत नाम सबनि को मंगलमय नभ जल थलो ॥४॥४२॥

गए १० । बुध बंदिन ॥ १ ॥ निसम्बल बिना खरच को राम राज मारग चलो श्रीराम के राजमार्ग कहे भक्ति पथ में जो चलो ॥२॥ नाम प्रताप रूप सूर्य के तीक्ष्ण किरण ते कलिमलो बरफ सम गलत है॥ ३ ॥ प्रभु के पद में प्रेम औ प्रणाम रूप कामतरु से तत्क्षणै विभीषण को भलो भयो नाम सुमिरतमात्र सब जीवन को आकाश जल थल मंगल मय होत है ॥ ४॥४२ ॥

सुजस सुनि स्रवन हौं नाथ आयो सरन । उपल केवट, गिद्ध सबरी संसृति समन सोक स्रम सींव सुग्रीव आरति हरन ॥ १ ॥ राम राजीवलोचन विमोचन विपति स्याम, नव तामरस दाम वारिद बरन । लसत जट जूट सिर चारु मुनि चीर कटि धीर रघुबीर तूनीर सर धनु धरन ॥ २ ॥ जातुधानेस भ्राता विभीषन नाम बंधु अपमान गुरु ग्लानि चाहत गरन । पतितपावन प्रनतपाल करुनासिंधु राखिए मोहि सौमित्र सेवित चरन ॥ ३ ॥ दीनता प्रीति संकलित मृदु बचन सुनि पुलकि तन प्रेम जल नयन लागे भरन । बोलि लंकेस कहि अंक भरि भेंटि प्रभु तिलकु दियो दीन दुख दोष दारिद दरन ॥ ४ ॥ रातिचर जाति आराति सब भांति [illegible] आनन समंगल करन । दास

तुलसी सदय हृदय रघुबंसमनि पाहि कहे काहि कीन्हो न तारन तरन ॥ २॥६२ ॥

सुजस इ० ॥१॥ श्याम नव तामरस दाम नवीन नील कमल की माला सम, जूट समूह ॥ २ ॥ जातुधानेस रावण, गुरू ग्लानि, भारी ग्लानि से ॥ ३ ॥ संकलित संमिलित ॥ ४ ॥ रातिचर निशाचर, आराति शत्रु, इहां रावण को बंधु है ताते आराति कहे सदय दयासहित ॥५॥४३॥

दीनहित बिरद पुराननि गायो । आरतबंधु कृपालु मृदुलु चित जानि सरन हौं आयो ॥१॥ तुम्हरे रिपु को हौं अनुज बिभीषन बंस निसाचर जायो । सुनि गुन सील सुभाव नाथ को मैं चरनन्हि चितु लायो ॥ २ ॥ जानत प्रभु दुख सुख दासनि को ताते कहि न सुनायो । करि करुना भरि नयन बिलोकहु तब जानौं अपनायो ॥ ३ ॥ बचन बिनीत सुनत रघुनायक हंसि करि निकट बुलायो । भेथ्यो हरि भरि अंक भरत ज्यौं लंकापति मनु भायो ॥ ४ ॥ कर पंकज सिर परसि अभय कियो जन पर हेतु देखायो । तुलसिदास रघुबीर भजनु करि को न अभय पद पायो ॥५॥४४॥

दीन इ० । हेतु प्रीति अपर पद सु० ॥ ४४ ॥

राग धनाश्री । सत्य कहौं मेरो सहज सुभाउ । सुनहु सखा कपिपति लंकापति तुम सन कौन दुराउ ॥ १ ॥ सब बिधि हीन दीन अति जड़मति जाको कतहु न ठाउ । आयो सरन भजौं न तज्यो तेहि यह जानत रिषिराउ ॥२॥ जिन कें हौं हित सब प्रकार चित नाहि न और उपाउ । तिनहिं लागि धरि देह करौं सब डरौं न सुजस नसाउ ॥ ३ ॥ पुनि पुनि भुजा उठाइ कहत हौं सकल सभापति आउ । नाहिन कोउ प्रिय मोहि दास सम कपट प्रीति बहि जाउ ॥ ४ ॥ सुनि रघुपति के बचन बिभीषन प्रेम मगन मन चाउ ।

तुलसिदास तजि आस त्रास सब ऐसे प्रभु कहुं गाउ ॥५॥४५॥

मल्ल इ०। सहज बनादरहिं ॥ १ ॥ भजो कहैं अंगीकार करत हौं, गिरिशउ नारद जू ॥ २ ॥ दरो न सुयश नसाइ कहिबे को यह भाव कि "भुअन अनेक रोम प्रति जासू। यह महिमा कछु बहुत न तासू"। इत्यादि ॥ ३ ॥ कपट प्रीति नहि जाउ कपट करि जो प्रीति होति है। सो रहिजाऊ होति है। भाव हमारी प्रीति निष्कपट है अतएव अचल है॥४॥५॥४५॥

नाहि न भजिबे जोगु बियो। श्रीरघुवीर समान आन को पूरन कृपा हियो ॥ १ ॥ कहहु कौन सुर सिला तारि पुनि केवट मीत कियो। कौने गीध अधम कौं पितु ज्यौं निज कर पिंड दियो ॥ २ ॥ कौन देव सबरी के फल करि भोजन सलिल पियो। वालित्रास वारिधि बूडत कपि केहि गहि बांह लियो ॥ ३ ॥ भजन प्रभाउ बिभीषन भाष्यो सुनि कपि कटक जियो। तुलसिदास को प्रभु कोसलपति सब प्रकार बरियो ॥ ४ ।४६ ॥

नाहिन इ०। बियो कहैं दूसरो ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ वरियो कहैं बलवान ॥ ४ ॥ ४६ ॥

राग जयतश्री। कब देखोंगी नयन वह मधुर मूरति। राजिवदलनयन कोमल कृपा अयन मयननि बहु छवि अंगनि दूरति ॥ १ ॥ सिरसि जटा कलाप पानि सायक चाप उरसि रुचिर बनमाल लूरति। तुलसिदास रघुवीर की सोभा सुमिरि भई है मगन नहिं तनु की सूरति ॥२॥४७॥

श्री जानकी जू की उक्ति, कमल के पत्र के समान नेत्र है जिहि मूरति की औ कोमल है औ कृपा को गृह है औ काम समूह के छवि को अंगनि ते दूर कराति है ॥ १ ॥ लूरति लटकति ॥ २ ॥ ४७ ॥

राग केदारा। कछु कबहूं देखिहौं आली हौं आरज

भुवन। सानुज सुभग तन जब ते बिछुरे बन, तब तें दव सी लागी तीनहुं भुवन ॥ १ ॥ मूरति सूरति किये प्रगट प्रीतम हिये मन के करन चाहे चरन छुवन। चित चढ़िगे वियोग दसानन कहिवे जोग पुलकगात लागे लोचन चुवन ॥ २ ॥ तुलसि त्रिजटा जानी सोय अति अकुलानी मृदुबानी कह्यो ऐहैं दवन दुवन। तमीचर तम हारी सुरकंज सुखकारी रविकुलरवि अब चाहत उवन ॥ ३॥४८ ॥

कहुं इ० । आरज कहैं श्रेष्ठ दवसी आगसी ॥ १ ॥ मन के करन मन के हाथन से ॥ २ ॥ दवन दुअन शत्रुनाशक निशाचर रूप तम के नासनिहारे औ देवरूप कमल के सुख देनिहारे सूर्य कुल के सूर्य अब उगा चाहत हैं ॥ ३॥४८ ॥

अब लों मैं तोसों न कहे री। सुनु त्रिजटा प्रिय प्राननाथ बिनु बासर निसि दुख दुसह सहे री ॥ १ ॥ बिरह बिषम विष बेलि बढ़ी उर तें सुख सकल सुभाय दहे री। सोइ सोचिबे लागि मनसिज के रहट नयन नित रहत न हेरी॥२॥ सर सरीर सुखि प्रान बारिचर जीवन आस तजि चलन चहे री। तें प्रभु सुजस सुधा सीतल करि राखे तदपि न तृप्त लहे री। ३ ॥ रिपु रिसि घोर नदी बिबेक बल धीरसहित हु ते जात बहे री । दै मुद्रिका टेक तेहि अवसर सुचि समीर सुत पैरि गहे री ॥४॥ तुलसिदास सब सोच पोच मृग मन कानन भरि पूरि रहे री। अब सखि सिय संदेह परिहरु हिय आइ गये दोउ बीर अहेरी ॥ ५॥४९ ॥

अब लों ॥ १ ॥ उर तें तीक्षण विरह रूप विष की बेली बढ़ी तेहि बेली ने स्वाभाविक सकल सुख को जराय दई औ तेहि बेली सींचबे के अर्थ काम के रहट रूप हमारे नेत्र नित नये रहत हैं ॥ २ ॥ शरीर रूप तड़ाग सूखे प्राण रूप मछली आदि जीवन की आशा छोड़ि

वन्ना चाहे पर नैं न प्रभु सुयश रूप अमृत ते शीतल करि के
व तथापि तृप्ति न रहे ॥ ३ ॥ शत्रु का जो घोर रिस है। सो नदी
विवेक बल धारना सहित ताप वह जान रहे पर तेहि अवसर में
दशा रूप लकड़ी में धन्दाइ के हे सखी परि के पवनपूत गहत भए
४ ॥ सब सोच पोच रूप मृगा मन रूप कानन में भरि पूरि रहे हैं
बना सुनि त्रिजटा बोली कि हे सखी श्रीजानकी जू अब संदेह को
प ते छाड़ो दोऊ सिकारी कुंअर आइ गए। भाव सोच पोच रूप मृग
भ न बचेंगे ॥ ५॥४६ ॥

राग बिलावल—सो दिन सोने को कहु कब ऐहै । जा
दिन बंध्यो सिंधु त्रिजटा सुनु तूं संभ्रम मोहि आनि सुनैहै
॥ १ ॥ बिरुदवन सुर साधु सतावन रावन कियो आपनो
पैहै। कनकपुरी भयो भूप बिभीषन बिबुध समाज बिलोकन
धैहै ॥ २ ॥ दिव्य दुंदुभी प्रसंसि हैं मुनिगन नभतल बिमल
बिमाननि छैहै। बरषिहैं कुसुम भानुकुलमनि पर तब मोकों
पवनपूत लै जैहै ॥ ३ ॥ अनुजसहित सोभिहैं कपिन महु
तनुछवि कोटि मनोज छि तैहै। इन नयनन्हि एहि भांति
प्रानपति निरषि हृदय आनँद समैहै॥४॥ बहुरी सदल सनाथ
सलछिमन कुसल कुसल बिधि अवध देखैहै । गुरुपुरलोग
सासु दोउ देवर मिलत दुसह उर तपित बतैहै ॥५॥ संगल-
कलस बधावन घर घर पैहैं मागने जो जेहि भैहै । बिजय
राम राजाधिराज को तुलसिदास पावन जसु गैहै ॥६॥५०॥

सो दिन इ० । सोने को कहिबे को यह भाव कि जैसे धातुन में
सोना उत्कृष्ट होत है तैसे दिनन में सो दिन उत्कृष्ट कब आवैगो
॥ १ ॥ २ ॥ नभतल आकाश औ पृथ्वी में ॥ ३ ॥ कोटि मनोज
छितैहैं कोटि काम को संतप्त करि हैं । ४ ॥ फेर दलसहित लक्ष्मण-
सहित नाथ को कुशल औ अवध को कुशल बिधाता देखैं हैं । ५॥६॥५०

लपति नाथ समुझि जिय देपु ॥ ७ ॥ मुनि पुलस्ति की जस मयंक महुं कत कलंक हठि होहि। और प्रकार उवार नहीं कहुं मैं देख्यो जग टोहि ॥८॥ चलु मिलु बेगि कुसल सादर सिय सहित अग्र कर मोहि। तुलसिदास प्रभु सरन सबद सुनि अभय करैं गो तोहि ॥ ८॥९॥१॥

टीका।

मानइ०। मंदोदरी की उक्ति है आयो व कहैं आयो अब ॥ १ ॥ जनायो आप अपने को जनावत भए मिस बहाना ते ॥ २ ॥ दाप अभिमान ॥ ३ ॥ ४ ॥ बल उदधि अगाध बल रूप समुद्र जेहि बालि को अथाह ॥ ५ ॥ ६ ॥ बिरदैत बानावाले टोहि कहैं टोइ कै ॥८॥९॥१

राग कान्हरा। तूं दसकंठ भले कुल आयो। तामहुं सिवसेवा बिरंचि बर भुज बल बिपुल जगत जसु पायो ॥१॥ पर दूषन त्रिसिरा कबंधरिपु जेहि बाली जम लोक पठायो। ताको दूत पुनीत चरित हरि सुभ संदेस कहन हौं आयो ॥२॥ स्रीमद न्रप अभिमान मोहबस जानत अनजानत हरि लायो। तजि ब्यलीक भजु कारुणीक प्रभु दै जानकिहि मुनहि समुझायो ॥३॥ यातें तव हितु होइ कुसल कुल अचल राज चलिहै न चलायो। नाहित रामप्रताप अनल महुं ह्वै पतंग परिहै सठ धायो ॥ ४ ॥ जद्यपि अंगद नीति परम हित कह्यो तथापि न कछु मन भायो। तुलसिदास सुनि बचन क्रोध अति पावक जरत मनहु घृत नायो ॥ ५॥ २॥

तूइ०। अंगद की उक्ति ॥ १ ॥ २ ॥ श्रीमद धनमद, लीक कपट ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ २ ॥

तैं मेरो मरम कछु नहिं पायो। रे कपि कुटिल ढीठ

ु पांवर मोहि दास ज्यों डांटन आयो ॥ १ ॥ भ्राता कुंभ-
ण रिपुघातक सुत सुरपतिहि बंध करि ल्यायो । निज
बल पति अतुल कहौं क्यों कंदुक ज्यों कैलास उठायो
२॥ सुर नर असुर नाग खग किन्नर सकल करत मेरो
भायो। निसिचर रुचिर अहार मनुजतनु ताको जस बल
हि सुनायो ॥ ३ ॥ कहा भयो बानर सहाय मिलि करि
य ज्यों सिंधु बंधायो । जो तरिहै भुज बीस घोर निधि
ो को त्रिभुवन में जायो ॥ ४ ॥ सुनि दससीस वचन
पकुंजर विहंसि ईस माथ हि सिर नायो । तुलसिदास
स कालवस गनत न कोटि जतन समुझायो ॥ ५॥३ ॥

तं इ० । रावण की उक्ति ॥ १ ॥ २ । गन को भायो कहे हमारो
हे हमारे गुलाम को भायो करत हैं ॥ ३॥४॥५।३ ॥

सुनु पन्न मैं तोहि बहुत बुझायो । एते मान सठ भयो
वस जानतहूं चाहत विष पायो ॥ १ ॥ जगतविदित
वीर बालि बल जानत हौं किधौं अब बिसरायो । बिनु
स सोउ हत्यौ एक सर सरनागत पर प्रेम देखायो ॥ २ ॥
इगे निज कर्म जनित फल भलि ठौर पठि पैर बढायो ।
र भालु चपेट लपेटनि मारत तब ह्वैहै पछितायो ॥ ३ ॥
ं दसन तोरिबे लायक कहा करौं जो न आयसु पायो ।
रघुबीर बाण बिदलित उर सोवहिगो रनभूमि सोहायो
॥ अविचल राज बिभीषन को सब छेवि रघुनाथ चरन
ायो । तुलसिदास एहि भांति वचन कहि गरजत
 बालिनन्दन आयो ॥ ५॥४ ॥

ाड इ० । अंगद की उक्ति है सठ एतना अभिमान भेरक

भयो है ॥१॥२॥३॥ होहीं कहँ हम, विदलित विशपदलित ॥ ४॥५॥४

राग केदारा। राम लषन उर लाइ लये हैं। भरे नी
राजीवनयन सब अंग अंग परिताप तये हैं ॥ १ ॥ कह
ससोक बिलोकि बंधुमुख वचन प्रीति गथये हैं। सेवक सख
भक्ति भायप गुन चाहत अब अथये हैं ॥ २ ॥ निज कीर
करतूति तात तुम्ह सुकृती सकल जये हैं। मैं तु
बिनु तनु राखि लोक अपने अपलोक लये हैं ॥ ३ ॥ मे
मन की लाज इहां लौं हठि प्रिय प्रान दये हैं। लागत सां
बिभीषन ही पर सीपर आपु भये हैं ॥ ४ ॥ सुनि प्रभुवच
भालु कपि सुर गन सोच सुखाइ गये हैं। तुलसी आइ पवन
सुत बिधि मानो फिरि निरमये नये हैं ॥ ५॥५ ॥

राम ३०। लक्ष्मण जी की शक्ति लगिवे की कथा लिखत हैं। सब
अंग परिताप तए हैं सब अंग परिताप तें तै उठे है ॥ १ ॥ वचन प्रीति
गथए हैं वचन प्रीति से गुहे भए हैं। सेवक औ सखा औ भगति औ
भाईपने को गुन अब डूबा चाहत है। भाव ए सब गुण लक्ष्मण छांडि
दूसरे में कहां होयगो। २॥ हे तात तुम अपनी कीर्ति औ करतूति
के सकल सुकृति को जीति लए हैं हम तुम्हारे विना अपना तन लोक
में राखि कै अपलोक कहैं अयश को लए हैं ॥ ३ ॥ हमारी प्रतिज्ञा
की लाज तुम को इहां लौ भई कि हठि करि कै प्रिय जो प्रान सो दिए।
बिभीषण को सांग लागत तापर लक्ष्मण आप ढाल भए हैं। भाव बिभी
षण जो मरैंगे तो श्रीराघव की प्रतिज्ञा जायगी यह विचारि आप
शक्ति को लै लए ढाल को सिपर पारसी में कहत हैं ॥ ४ ॥ निर्मल
नए हैं मानो विधाता ने नए सिरे से फिरि लक्ष्मण जी को बनाए
हैं ॥ ५ ॥ ५ ॥

राग सोरठ—मोपै तो न कछू ह्वै आई। ओर निबाहि
भली बिधि भायप चल्यो लषन सो भाई ॥ १ ॥ पुर पितु-

सकल सुप परिहरि जेहि वन विपति बंटाई। ता संग
दुलोक सोक तजि सक्यो न प्रान पठाई ॥ २ ॥ जानत
ा उर कठोर तें कुलिस कठिनता पाई। सुमिरि सनेह
ासुत को दरकि दरार न जाई ॥ ३ ॥ तातमरन तिय-
गीधबध भुज दाहिनो गवांई। तुलसी मैं सब भांति
ने कुलहि कालिमा लाई ॥ ४ ॥ ६ ॥

पांवै इ०। ओर अंत लों ॥१॥२॥३॥ दाहिना भुज भाई को कहत
॥४॥ ६ ॥

मेरो सब पुरुषारथ थाक्यो। विपति टंटावन बंधु बाहु-
नु करौं भरोसो काको ॥ १ ॥ सुनु सुग्रीव साचेहूं मो पर
हो बदन विधाता। ऐसे समय समर संकट हौं तज्यो
हन सो भ्राता ॥ २ ॥ गिरि कानन जैहैं साखामृग हौं पुनि
नुज संघाती। ह्वैहै कहा विभीषन की गति रही सोच
रि छाती ॥ ३ ॥ तुलसी सुनि प्रभुवचन भालु कपि सकल
विकल हिय हारे। जामवंत हनुमंत बोलि तब औसर जानि
भारे ॥ ४ ॥ ७ ॥

मेरो इ०। विपति बटावन विपति को बटावनहारो ॥ ७ ॥

राग मारू—जौ हौं अब अनुसासन पावौं। तौ चंद्र-
र्यांड निचोरि चैल ज्यौं आनि सुधा सिर नावौं ॥ १ ॥ कै
पाताल दलौं व्यालावलि अमृतकुंड महि लावौं। भेदि भुवन
करि भानु बाहिरो तुरत राहु दै तावौं ॥ २ ॥ बिबुध बैद
बरबस आनौं धरि तौ प्रभु अनुग कहावौं। पटकौं मीच नीच
मूषक ज्यौं सबहि को पाप बहावौं ॥ ३ ॥ तुम्हरेहि कृपा

प्रताप तिहारहि नेकु विलंब न लावों। दीजै सोइ प
तुलसी प्रभु जेहि तुम्हरे मन भावों ॥ ४ ॥ ८ ॥

जौ इ० । हनुमानजी की उक्ति है जो अब हम आज्ञा पावैं
वस सम चन्द्रमा को गारि कै अमृत आनि कै सिर नवावैं ।
अथवा पाताल के सर्पों को मारि कै अमृत को कुंड भूमि पर ले
अथवा ब्रह्मांड को भेदन करि तेहि राह तेहि सूर्य को बाहर करों
तेहि राह को राहु से चंद करि देउं । भाव जब सूर्य ब्रह्मांड में न
तब कैसे भिनुसार होयगो । "काज नसाइहि होत प्रभातां" एह अ
लेके हनुमानजी । कहे विबुधवैद्य अश्वनीकुमार, बरबस जो रावरी
गृदास मीचु मृत्यु, मूषक मूसा ॥ ३ ॥ ४ ॥ ८ ॥

सुनि हनुमंतबचन रघुवीर । सत्य समीरसुवन
लायक कह्यो राम धरि धीर ॥ १ ॥ चाहिय वैद ईस आय
धरि सोस कीस बल ऐन । आन्यौ सदनसहित सोवत
जौलौं पलकु परै न ॥ २ ॥ जियै कुंअर निसि मिलै मूरि
क्रा कीन्हो विनय सुषेन । उठ्यो कपीस सुमिरि सीतापति
चल्यो सजीवन लेन ॥ ३ ॥ कालनेमि दलि बेगि बिलोक्यो
द्रोनाचल जिय जानि । देखी दिव्यौषधी जहां तहं जरी न
परी पहिचानि ॥ ३ ॥ लियो उठाइ कुधर कंदुक ज्यौं बेगि
न जाइ बखानि । ज्यों धाए गजराज उधारन सपदि सुदर-
सनपानि ॥ ४ ॥ आनि पहार जोहारे प्रभु कियो वैदराज
उपचार । करुनासिंधु बंधु भेट्यो मिटि गयो सकल दुखभार
॥ ५ ॥ मुदित भालु कपि कटक लह्यो जनु समर पयोनिधि
पार । बहुरि ठौरकी राखि महीधर आयो पवनकुमार ॥ ६ ॥
सेनसहित से कहि सराहत पुनि पुनि राम सुजान । बरषि
प्रसंसत विबुध बजाइ निसान ॥ ७ ॥

गुर्जरराम सुधि पाइ निसाचर भये मनहुं विनु प्रान। परो
लोगी रोरि लंकगढ दुई हांक हनुमान ॥ ८॥८ ॥

सुनि इ० ॥ १ ॥ श्रीराघव कहे कि वैद्य चाहिए यह आज्ञा स्वामी
की हनुमान वज्र अयन सिर पर धरि के घरसहित वैद्य को लंका
से ले आये ॥ २ ॥ सोअनर्ही आन्यो पवन नाघना मे कि जब लो पलक न परयो ॥२॥
सुसेन नामा वैद्य-सो लंका से आयो सो विनै कीन्ही कि राति भर में
यही मिलै तो कुंअर जीवै ॥ ३ ॥ ४ ॥ कुधर पर्वत, कंदुक गेंदा, वेग
शीघ्रता, सुदर्शनपानि विष्णु ॥ ५ ॥ ६ ॥ ठौरहीं जहां से आए रहे
तहां रषि आए ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥

राग केदारा। कौतुक ही कपि कुधर लियो है। चल्यौ
नभ नाइ माथ रघुनाथहि सरिस न वेगु वियो है ॥१॥ देख्यौ
भरत जानि निसिचर विनु फर सर उर्यौ हियो है। पर्यौ कहि
राम पवन राख्यौ गिरि पुर तेहि तेज पियो है ॥ २ ॥ जाइ
भरत भरि अंक भेंटि निज जीवन दान दियो है। दुष लघु
लषन मरम घायल सुनि सुष वड़ो कीस लियो है ॥ ३ ॥
आयसु इतहि स्वामि संकट उत परत न कछू कियो है।
तुलसिदास विदर्यौ अकास सो कैसे कै जात सियो है
॥ ४॥१०॥

कौतुक इ०। सरिस न वेग वियो है जाके बराबर दूसरे को वेग
नहीं है। १ ॥ भरत जू हनुमान जी को जात देख निश्चर जानि के
विनु फर को वान हृदय में मारयो, तेहि वान ने पुर कहं संपूर्ण हनुमान
जी के तेज को पी लियो। हनुमानजू राम कहि के पृथ्वी में गिरे पर्वत
को पवन ने रोकि राख्यो भाव जाते पुरी न दवि जाय। २। भरत
जू हनुमान जी के ढिग जाय के अंक भरि भेंटि के पुनि अपना आर-
दाय हनुमान जू को दान दियो है तब हनुमान जू जी उठे हैं। एतना
शेष है। मरम घायल मर्म स्थान प ॥ इव श्रीराम

जू की आज्ञा अवधि भर अयोध्या जी में रहिवे की औ उत श्रीराम जू संकट में हैं कुछ करत नहीं बनत है। भाव न रहत बनत न जा बनत गोसांई जी कहत हैं कि फट्यो आकाश सो कैसे सियो जात ॥ ४॥१० ॥

भरत सत्रुसूदन विलोकि कपि चित चकित भयो है राम लषन रन जीति अवध आए कैधौं मोहि भ्रम कैधौं काहू कपट ठयो है ॥ १ ॥ प्रेम पुलकि पहिचानि कै पद पदुम नयो है। कह्यौ न परत जेहि भांति दुहुं भाइन्ह सनेह सों सो उर लाइ लयो है ॥ २ ॥ समाचार कहि गहरु भौ तेहि ताप तयो है। कुधरसहित चढ़ो विसिष वेगि पठवौ सुनि हरि हिय गरब गूढ़ उपयौ है ॥ ३ ॥ तीर ते उतरि जसु कह्यौ चहै गुन गननि जयो है। धन्य भरत धन्य भरत करत भयौ मगन मौन रह्यौ मन अनुराग रयौ है ॥ ४ ॥ यह जलनिधि पन्यो मथ्यो लँघ्यो वंध्यो अंचयो है। तुलसिदास रघुवीर बंधु महिमा को सिंधु तरि को कवि पार गयो है ॥ ५॥११ ॥

भरत इ०सु० ॥१।२। हनुमान जू समाचार कहे। गहरु कहैं विलम्ब भयो तेहि ताप ते भरत जू तपि जात भए। भरत जू कहत भये कि पर्वतसहित हमारे वाण पर चढ़ो तुम को शीघ्र प्रभु के ढिग भेज देउं, यह सुनि के हनुमान जी के हृदय में भारी अहंकार उपज्यौ है कि "मोरे भार चलहि किमि वाना"। फिर हनुमान जी वाण पर चढ़ भरतजू को बोझ न जान परयो वाण चलावन लगे तब हनुमान जू भरत जू को प्रभाव समुझि वाण ते उतरि के भरत जू को यश कहा चाहौ पर भरत जू के गुणगणों ने जीति लियो है। भाव कहिवे को न समर्थ भये धन्य धन्य भरत कहत मगन भए औ चुप है जात भए औ मन भरत जू के अनुराग में रंगि गयो ।३॥४॥ यह समुद्र को सगर महा-

राज के पुत्रों ने खन्यो वा प्रियव्रत ने औ देवता दैत्यों ने मथ्यो औ हनुमान जी ने नांघ्यो श्रीरघुनाथ ने बांधेउ औ अगस्त्य जी अचइ गए। गोसाई जी कहत हैं कि भरत की महिमा समुद्र को तरि के कौन अस कवि है कि जो पार गयो है। एहि समुद्र तें महिमा समुद्र को अधिक जनाए॥ ५॥११॥

जो तो नहिं जो जग जनम भरत को। तौ कपि कहत कृपानधार मग चलि आचरन चरत को॥ १॥ धीरज धरम धरनिधर धुरहुं तें गुरु धुर धरनि धरत को। सब सदगुन सनमानि आनि उर अघ औगुन निदरत को॥ २॥ सिवहु न सुगम सनेह रामपद सुजननि सुलभ करत को। सृजि निज जसु सुरतरु तुलसी कहुं अभिमत फरनि फरत को॥ ३॥१२॥

होतो इ०। अब हनुमान जी की उक्ति। गोसाईं जी कहत हैं जगत में जो भरत जी को जनम न होतो तो स्नेह का मार्ग कृपाणधार सम है ता पर चलि के तेहि व्रत को को आचरण करत॥१॥ धरणी-धर जो पर्वत तेहि के धुर कहैं भारहु ते गुरु कहैं अधिक है भार जेहि को ऐसे धीरज धर्म्म को धरणी पर को धरत औ सब सदगुणों को सनमानि कै हृदै में आनि कै अघ औ औगुनन को कौन दरत कहैं विदीर्ण करत वा निदरत कहैं निरादर करत॥२॥ जो रामपद सनेह शिव को भी नहीं सुगम सो सुजननि को सुलभ करत। भाव भरत जी की दशा स्मरण करि के श्रीरामपद में प्रीति उपजति है "कहत सुनत सतिभाव भरत को। सीयरापद होइ न रत को"। निज यश रूप सुर-तरु को सृजि के तुलसी कहं वांछित फरनि को को फरत भरत जी प्रति श्रीराम जी की उक्ति है "मिटिहैं पाप प्रपंच सब अखिल अमंगल-भार। लोक सुजस परलोक सुख सुमिरत नाम तुम्हार"॥३॥१२॥

सुनि रनघायल लषन परे हैं। स्वामि काज संग्राम

सुभट सो लोहै ललकि लरे हैं ॥ १ ॥ सुवन सोक संतोष सुमित्रहिं रघुपति भगति वरे हैं। छिन छिन गात सुखात छिनहिं छिनु हुलसत होत हरे हैं ॥ २ ॥ कपि सों कहत सुभाय अंब के अंबक अंबु भरे हैं। रघुनंदन विनु बंधु कुअवसर जद्यपि धनु दुसरे हैं ॥ ३ ॥ तात जाहु कपि संग रिपुसूदन उठि कर जोरि परे हैं। प्रमुदित पुलकि पैत पूरे जनु विधिवस सुढर ढरे हैं ॥ ४ ॥ अंब अनुज गति लखि पवनज भरतादि गलानि गरे हैं। तुलसी सब समुझाइ मातु तेहि समय सचेत करे हैं ॥ ५॥१३ ॥

सुनि इ० । स्वामी के कार्य हेतु संग्राम में सुभट जो मेघनाद तासों ललकारि के लोह करि लरें हैं तेहि रण में लषणलाल घायल परे हैं यह सुनि के सुमित्राजू को पुत्र को शोक है औ लक्ष्मणजू रघुपति की भक्ति को वरे कहैं अंगीकार किए हैं ताते संतोष है याते छिन छिन में गात सुखात औ छिन छिन में हुलसत औ हरे होत हैं ॥ १ ॥ २ ॥ माता के नेत्रों में जल भरे हैं स्वाभाविक कपि सो कहति हैं यद्यपि धनु दूसरा है अर्थात् सहायक है तथापि कुअवसर में विना बंधु के रघुनन्दन भए ॥ ३ ॥ हे रिपुसूदन अब तुम हनुमान के संग जाउ यह सुनि सत्रुहन जू हाथ जोरि के खड़े होत भए आनन्द करि पुलकित होत भए मानो पूरे दाव पर विधि के वश पासा सुन्दर ढार से ढरे हैं माता की औ शत्रुहन की दशा देखि हनुमान जू औ भरत आदिक ग्लानि ते गरत भए तेहि समय में मातु के समुझाय के सब सचेत करे हैं ॥४॥१३॥

विनय सुनाइ वीर परि पाय। कहौं कहा कपीस तुम्ह सुचि सुमति सुहृद सुभाय ॥ १ ॥ स्वामि संकट हेतु हौं जड़ जननि जनन्यो जाय। समय पाइ कहाइ सेवक घट्यौ तौन सहाय ॥ २ ॥ कहत सिथिल सनेह भो जनु धीर घायल घाय। भरतगति लखि मातु सब रहि ज्यों गुडी विनु वाय ॥

॥ ३ ॥ भेंट कहि कहिबो कह्यो यों कठिनमानस माय। लाल लोने लषन सहित सुललित लागत नाय ॥ ४ ॥ देखि बंधु सनेह अंब सुभाउ लषन कुठाय। तपत तुलसी तरनि-त्रिमक एहि नये तिहुं ताय ॥ ५॥१४ ॥

विनय इ० ॥१॥ जाय व्यर्थ, पक्ष्यो तीन सहाय सहाय में युक्त भयो ॥ २ ॥ ज्यों गुडी बिनु बायु जैसे बे हवा की गुडी ॥ ३ ॥ कौशिल्याजू कहाति हैं कि हमारो भेंट कहि कै ऐसो कहना कि म्हारी कठिनमानस माता ने अस कह्यो है कि हे लाल नाथ कहैं त तुम्हारो लषन सहित ललित लागत है। भाव निज शोभा जो हो तो लषनसहित आओ ॥ ४ ॥ भरत शत्रुहन को सनेह औ ता को सुभाव औ लषन को कुठाव में देखि कै तरनि जो सूर्य तिन त्रास देनिहारे जो हनुमानजू सो यह नये तीनों ताप से तपत हैं। का। नन्दिग्राम में श्रीकौशिल्या जू आदि कैसे प्राप्त भईं। उत्तर। हात्मन के मुख से अस सुना है जब लक्ष्मणजू को शक्ति लगी तब सुमित्राजू स्वप्न देख्यो कि भुजा को सर्प लील्यो, सो जाय श्रीवशिष्ट जू सो कह्यो सो मुनि वशिष्टजू कह्यो कि लक्ष्मण को कुछ अरिष्ट है सो ताके हेतु यज्ञ शांति के अर्थ किया चाहिए परन्तु यह समय राक्षस करि यज्ञ नाहीं होय पावत। भरत जो रक्षा करैं तो यज्ञ होय तब सब मिलि नन्दिग्राम में भरत के समीप आय के समाचार कहे। तब भरत बिना गासी को बान लै करि रक्षा हेतु धरे ताही समय में हनुमान आए सो निश्चर के भ्रम से भरतजू मारत भए ॥ ५ ॥ १४ ॥

हृदय घाउ मेरे पीर रघुबीरै। पाइ सजोवन जागि कहत यों प्रेम पुलकि बिसरै सरीरै ॥ १ ॥ मोहि कहा बूझत पुनि पुनि जैसे पाठ अरथ चरचा कीरै। सोभा सुप छति लाहु भूप कहुं केवल कांति मोल हीरै ॥ २ ॥ तुलसी सुनि सौमित्रबचन सब धरि न सकत धीरौ धीरै। उपमा राम लषन की प्रीति की क्यों दीजै छीरैं नीरै ॥ ३॥१५ ॥

हृदय इ० । श्रीलक्ष्मण जू सजीवन के पाय के जागि के प्रेम में पुलकि के देहाध्यास बिसारि के अस कहत हैं कि हम को पुनि पुनि कहा बूझत हौ, जो घाव देखनो होय तो हमारे हृदय में देखो ओ पीर पूछना होय तो श्रीरघुबीर जू सो पूछो। जैसे पाठ के अर्थ की चर्चा सूगा से कोऊ पूछैं। भाव तस हम से पूछना है। शोभा सुख हानि औ लाभ राजा कहं है हीरा को केवल कांति औ मोल मात्र है, अस लक्ष्मणजू को वचन सुनि धीरो धीर को नहीं धरि सकत है। श्रीराम-लषन की प्रीति की उपमा छीर औ नीर की क्यों दिजिए। भाव उन की प्रीति खटाई आदि तें बिलगति है ॥ ३ ॥ १५ ॥

राग कान्हरा। राजत राम कामसत सुंदर। रिपु रन जीति अनुज संग सोभित फेरत चाप बिसिष बनरुह कर॥१॥ स्याम सरीर रुचिर स्रम सीकर सोनितकन बिच बीच मनोहर। जनु खद्योतनिकर हरिहित गन भ्राजत मरकत सैल सिषर पर ॥ २ ॥ घायल बीर बिराजत चहुं दिसि हरषित सकल रीछ अरु बनचर। कुसुमित किंसुक तरु समूह महं तरुन तमाल बिसाल बिटपवर ॥ ३ ॥ राजिवनयन बिलोकि कृपा करि किये अभय मुनि नाग बिबुध नर। तुलसिदास यह रूप अनूपम हृदिसरोज बसि दुसह बिपति हर ॥४॥१६॥

अब रावणादि सब निशाचरों के वध के अनंतर श्री रघुनाथ जी के स्वरूप को, वर्णन करत हैं। राजत इ०। बनरुह कमल ॥ १ ॥ सुंदर श्याम शरीर में सुंदर श्रमबिन्दु औ बीच २ में श्रोणितकण हैं। मानो खद्योत समूह औ हरिहित जे चंद्रमा तिन के गण जे तारा ते मरकत शैल के सिषर पर शोभत हैं इहां खद्योत श्रोणितकण है औ तारा श्रमबिन्दु है मरकत शैल श्रीराम को शरीर है खद्योत को कोऊ देश में जुगनू कोऊ देश में *भगजोगिनी* कहत हैं औ जो खद्योत सूर्य वाचक होय तौ भी बनत है क्योंकि अरुण रंग सूर्य का भी है ॥ २ ॥

मानो फूले भए पलास के तरु समूह में युवा श्रेष्ठ विशाल तमाल को द्रुम है। इहां वानरवीर फूले पलाससम हैं तमालसम श्रीराम हैं ॥ ३ ॥ ४ ॥ १६ ॥

राग धनाश्री। अवधि आजु किधौं औरो दिन है हैं। चढ़ि धवरहर बिलोकि दखिन दिसि बूझि धौं पथिक कहां ते आए वै हैं ॥ १ ॥ बहुरि बिचारि हारि हिय सोचति पुलकिगात लागे लोचन चूवैं। निज बासरनि बरष पुरवैगो बिधि मेरे तहं करम कठिन कृत ह्वै हैं ॥ २ ॥ बन रघुबीर मातु गृह जीवति निलज प्रान सुनि सुनि सुख ल्वै हैं। तुलसिदास मो सी कठोर चित कुलिस सालभंजिको न ह्वै हैं ॥ ३ ॥ १७ ॥

अवधि इ०। श्रीकौशिल्या जू की उक्ति रघुनाथ के आइवे को दिन आजुइ है कि दुइ दिन और है सखी ते कहति हैं कि अटारी पर चढ़ि के दक्षिण दिशा देखि के पथिक सों बूझु कि वै कहां ते आए हैं। भाव कदापि कहीं रघुनाथ से आवत के भेंट भई होय ॥ १ ॥ विचार करि हारि हिए सोच करत हैं पुलकावली अंग में है औ नेत्रन से आंसू टपकन लगे। अब हृदय में सोचत हैं कि तहां विधाता के निकट मेरे कछ कठिन कर्म कोई है तातें ब्रह्मा अपने दिनन सों चौदह वर्ष पुरवैगो ॥ २ ॥ कुलिश शालभंजिको न है हैं कुलिश कहै वज्र की शालभंजिका कहै मतिमा सो भी नहीं होगी ॥ ३ ॥ १७ ॥

आली अब राम लषन कित ह्वै हैं। चित्रकूट तज्यौ तब ते न लही सुधि बधूसमेत कुसल सुत द्वै हैं ॥ १ ॥ बारि बयारि बिषम हिम आतप सहि बिनु बसन भूमितल स्वै हैं। कंद मूल फल फूल असन बन भोजन समय मिलत कैसे वै हैं ॥ २ ॥ जिन्हहि बिलोकि सोचिहै लता द्रुम पग खग

मुनि लोचन जल च्वैहैं। तुलसिदास तिन्ह की जननी हौं मो सो निठुर चित औरौं कहुं ह्वैहैं ॥ ३॥१८ ॥

आली इ० । शंका । हनुमान जी से तो सब वृत्तान्त सुने रहीं चित्रकूट तज्यो तब ते न लही सुधि यह कैसे कहति हैं । उत्तर । व्याकुलता करि । अपर पद सु० ॥ १८ ॥

राग सोरठ । बैठी सगुन मनावति माता । कब ऐहैं मेरे बाल कुसल घर कहहु काग फुरि बाता ॥ १ ॥ दूध भात की दोनी देहौं सोने चोंच मढ़ैहौं । जब सियसहित बिलोकि नयन भरि राम लषन उर लैहौं ॥ २ ॥ अवधि समीप जानि जननी जिय अति आतुर अकुलानी । गनक बुलाइ पाय परि पूछति प्रेम मगन मृदुबानी ॥ ३ ॥ तेहि अवसर कोउ भरत निकट तें समाचार लै आयो । प्रभु आगमन सुनत तुलसी मानो मीन मरत जल पायो ॥४॥१९॥

बैठी इ० । पद सुगम ॥ १९ ॥

राग गौरी । छेमकरी बलि बोलि सुबानी । कुसल छेम सिय राम लषन कब ऐहैं अवधि अवध रजधानी ॥१॥ ससिमुखि कुंकुमबरनि सुलोचनि मोचनि सोचनु बेद बखानी । देवि दया करि देहि दरसफल जोरि पानि बिनवहि सब रानी ॥ २ ॥ सुनि सनेहमय बचन निकट ह्वै मंजुल मंडल कै मडरानी । सुभ मंगल आनंद गगन धुनि अकनि अकनि उर जरनि जुडानी ॥३॥ फरकन लगे सुअंग बिदिसि दिसि मन प्रसन्न दुख दसा सिरानी । करहि प्रनाम सप्रेम पुलकि तन मानि बिबिध बलि सगुन सयानी ॥ ४ ॥ तेहि अवसर हनुमान भरत सो कही सकल कल्यान कहानी ।

]लसिदास सोइ चाह सजीवनि विषम वियोग बिथा बडि भानी ॥ ५॥२० ॥

छेम इ० । छेमकरी सपेदमुखवाली चील्ह को कहत हैं । काहू देश में खेमकल्यानी कहत हैं । ऐहैं अवधि अवध रजधानी । रजधानी की जो सीवां तेहि अयोध्या जी में कब ऐहैं ॥ १ ॥ हे शशिमुखी हे अरुणवर्णी तूं कहं तुष ॥ २ ॥ ३ ॥ मानि विविधि बलि अनेकन पूजा मानि के ॥ ४ ॥ सोई कल्यान कहानी रूप इच्छित सजीवन ने विषम वियोगजनित जो बढ़ी व्यथा ताको जराय दिए ॥ ५ ॥ २० ॥

राग धनाश्री । सुनियत सागर सेतु बंधायो। कोसलपति की कुसल सकल सुधि कोउ एक दूत भरत पहि ल्यायो॥१॥ वध्यो विराध त्रिसिरा खर दूषन सूपनखा को रूप नसायो। हति कबंध बल अंध बालि दलि कृपासिंधु सुग्रीव बसायो ॥२॥ सरनागत अपनाइ विभीषन रावन सकुल समूल बहायो। विबुधसमाज निवाजि बांह दै बंदि छोर वर विरद कहायो ॥ ३ ॥ एक एक सों समाचार सुनि नगर लोग जहं तहं सब धायो। घन धुनि अकनि मुदित मयूर ज्यों बूडत जलधि पार सो पायो ॥ ४ ॥ अवधि आजु यों कहत परसपर वेगि विमान निकट पुर आयो। उतरि अनुज अनुगनि समेत प्रभु गुरु द्विज गन चरननि सिरु नायो ॥ ५ ॥ जो जेहि जोग राम तेहि विधि मिलि सब के मन अति मोद बढायो। भेंटी मातु भरत भरतानुज क्यों कहौं प्रेम अमित अनमायो ॥ ६ ॥ तेही दिन मुनिवृंद अनंदित तुरित तिलक को साज सजायो। महाराज रघुवंसतिलक को सादर तुलसिदास गुन गायो ॥ ७॥२१ ॥

सुनियत इ० सु० ॥१॥२॥३॥ मेघधुनि सुनि के जैसे मयूर महादिव

होत अर्थात् तस प्रमुदित भए औ जस समुद्र में बूड़त पार पावै तस पाए ॥४॥ अनुग सेवक ॥ ५ ॥ अनमायो जो न अमाय ॥६॥७॥२१॥

राग जयतिश्री। रन जीति राम राउ आए। सानुज सदल ससीय कुसल आजु अवध अनंद वधाए ॥ १ ॥ अरिपुर जारि उजारि मारि रिपु विबुध सुवास बसाए। धरनि धेनु महिदेव साधु सब के सब सोच नसाए ॥ २ ॥ दई लंक थिर थप्यो विभीषन वचन पियूष पिआए। सुधा सींचि कपि कृपा नगर नर नारि निहारि जिआए ॥ ३ ॥ मिले गुर बंधु मातु जन परिजन भए सकल मनभाए। दरस हरष दसचारि बरष के दुख पल में बिसराए ॥ ४ ॥ बोलि सचिव सुचि सोधि सुदिन मुनि मंगल साज सजाए। महाराज अभिषेक बरषि सुर सुमन निसान बजाए ॥ ५ ॥ लै लै भेंट नृप अहिप लोकपति अति सनेह सिरु नाए। पूजि प्रीति पहिचानि राम आदरे अधिक अपनाए ॥ ६ ॥ दान मान सनमानि जानि रुचि जाचक जन पहिराए। गए सोक सर सूखि मोद सरिता समुद्र गहिराए ॥ ७ ॥ प्रभुप्रताप रबि अहित अमंगल अघ उलूक तम ताए। किए बिसोक हित कोक कोकनद लोक सुजस सुभ छाए ॥ ८ ॥ रामराज कुलि काज सुमंगल सबनि सबै सुख पाए। देहिं असीस भूमिसुर प्रमुदित प्रजा प्रमोद बढ़ाए ॥ ९ ॥ आस्रम धरम बिभाग वेद पथ पावन लोग चलाए। धरम निरत सियराम चरन रत मनहुं राम सिय जाए ॥१०॥ कामधेनु महि बिटप कामतरु कोउ बिधि बाम न लाए। ते तब अब तुलसी तेउ जिन्ह हित सहित राम गुन गाए ॥ ११॥२२ ॥

रण१० मु० ॥ १॥२ ॥ सुधा से सींचि के कपिन को औ कृपा से नगर के नर नारि को जिआवत भए ॥ ३ ॥ दरश हरष दर्शन के हर्ष से महाराज अभिषेक महाराज के अभिषेक होने में ॥ ४ ॥ ५ ॥ अहिप लोकपाले भुप वासुकी आदि औ इन्द्रादि लोकपाल ॥ ६ ॥ सोक रूप तलाव सूखि गए औ आनंद रूप सरिता औ समुद्र अथाह होत भए ॥ ७ ॥ प्रभु के प्रताप रूप सूर्य ने अहित औ अमंगल औ अघ रूप उलूक को सुखदायी जो तम ताको नाश किए । इहां तम करि अविद्या लेना औ हित रूप चक्रवाक औ कमल को विगत सोक किए औ लोक में सुंदर यश शुभ छाए ॥ ८ ॥ श्रीरघुनाथ के राज्य में सब काज में सुमंगल भयो औ सब ने सब प्रकार के सुख पाए ॥ ९ ॥ मनहुं राम सिय जाए मानो श्री सीताराम के पुत्र हैं । भूमि काम धेनु होत भई औ वृक्ष कल्पतरु होत भए औ कोऊ पर विधाता वाम न भए ते प्रजा तब रामराज्य में सुखी भए अब तेऊ सुखी हैं जे हितसहित रामगुण गाए ॥ १० ॥ २२ ॥

राग टोडी । आजु अवध आनंद बधावन रिपु रन जीति रामु घर आए । सजि सुविमान निसान बजावत मुदित देव देपन धाए ॥ १ ॥ घर घर चारु चौक चंदन मनि मंगल कलस सबनि साजे । धुज पताक तोरन वितान वर विविधि भांति बाजन बाजे ॥ २ ॥ रामतिलक सुनि दीप दीप के न्टप आए उपहार लिए । सीयसहित आसीन सिंहासन निरषि जोहारत हरषि हिये ॥ ३ ॥ मंगल गान बेदधुनि जयधुनि मुनि असीस धुनि भुवन भरे । वरषि सुमन सुर सिद्ध प्रसंसत सब के सब संताप हरे ॥ ४ ॥ राम-राज भइ कामधेनु महि सुप संपदा लोक छाए । जनम जनम जानकीनाथ के गुनगन तुलसिदास गाए ॥५॥२३ ॥

इति श्री रामगीतावल्यां लंकाकाण्डः समाप्तः ।

आजु इ० ॥ १ ॥ घर घर में सुंदर चौक चंदन ते औ मणि ते औ मंगल कलश सब ने साजे तोरण कहैं बंदनवार वितान कहैं मंडप ॥२॥ उपहार भेंट, आसीन बैठे ॥ ३ ॥ ४ ॥ श्री रघुनाथ के राज्य में भूमि कामधेनु भई सुख औ संपदा सब लोक में छावत भई जन्म जन्म में जानकीनाथ के गुनगन को गाए। इहां जन्म जन्म पद ते अपने को वाल्मीक जी को अवतार सूचन किए। स्पष्ट श्रीनाभा जी लिखे "कलि कुटिल जीव निस्तार हित वालमीक तुलसी भयो" लंका कांड की समाप्ति जैसे वाल्मीक जी रामराज्य में किए तैसे गीतावली में गोसाई जी किए।

दोहा।

मंगल श्री सरयू सरित, मंगल विपिन प्रमोद॥
मंगल सीता राम जू, जो मोदहु को मोद॥

इति श्रीतुलसीदासकृतरामगीतावलीप्रकाशिकाटीकायां श्रीसीताराम-कृपापात्र श्रीसीतारामीय हरिहरप्रसादकृतौ लङ्काकाण्डः समाप्तः।

श्रीसीतारामाभ्यां नमः ।

सटीक गीतावली—उत्तरकाण्ड ।

मङ्गलाचरण—दोहा ।

इत कलँगी उत चंद्रिका, कुंडल तरिवन कान ।
सिय सियवल्लभ मो सदा, बसो हिये बिच आन ॥ १ ॥

मूल ।

राग सोरठ—बन ते आइ कै राजा राम भए भुआल ।
मुदित चौदह भुअन सब सुख सुखी सब सब काल ॥१॥ मिटे
कलुष कलेस कुलछन कपट कुपथ कुचाल । गए दारिद दोष
दारुन दंभ दुरित दुकाल ॥ २ ॥ कामधुक महि कामतरु तरु
उपल मनिगन लाल । नारि नर तेहि समय सुकृती भरे भाग
सुभाल ॥ ३ ॥ बरन आश्रम धरम रत मन बचन बेष मराल ।
राम सिय सेवक सनेही साधु सुमुख रसाल ॥ ४ ॥ रामराज
समाज बरनत सिद्ध सुर दिगपाल । सुमिरि सो तुलसी अजहुँ
हिय हरष होत बिसाल ॥ ५ ॥ १ ॥

टीका ।

बन ते आय भए भुआल पृथ्वीपालन में सुख भए चौदहो भुवन के बासी
सब लोगन औ सब काल में सब सुख करि सुखी होत भए ॥ १ ॥ पाप करि
...रेन जो रोगजनित औ कुलक्षण दुर्लक्षणादि सो मिटे औ कपटकरि
...कुपंथ में परि जो कुचाल ते चलन रहे सो मिटे औ दारुण दंभ

दंभ औ पाप रूप दुकाल अर्थात् दुरभिक्षादि तें जो दारिद्रजनित दोष रहे सो गए ॥ २ ॥ भूमि कामधेनु भई, वृक्ष कल्पवृक्ष भए, पाथर सब लालमणि के समूह भए अर्थात् चिन्तामणि भए औ तेहि समय में नारि नर सुकृती औ सुन्दर भाल अपना भाग्य तें भरत भए ॥ ३ ॥ वरणाश्रम धर्म में रत औ मन वचन करि हंस सम वेषधारी अर्थात् बोली मधुर औ वेषौ उज्वल औ राम सिय के सेवक औ सनेही औ परकार्य्यसाधक औ सुमुख कहँ प्रसन्नमुख औ रसयुक्त वचन अर्थात् मिष्ठभाषी ॥ ४ ॥ १ ॥

राग ललित—भोर जानकीजीवन जागे। सूत मागध प्रवीन वेनु बीना धुनि द्वारे गायक सरस रागरागे ॥१॥ स्यामल सलोने गात आलसवस जभाँति प्रियाप्रेमरस पागे। उनींदे लोचन चारुमुख सुषमा सिंगारु हेरि हारे मार भूरि भागे॥ २ ॥ सहज सुहाई छवि उपमा न लहैं कवि मुदित बिलोकन लागे। तुलसिदास निसिवासर अनूप रूप रहत प्रेम अनुरागे ॥ ३ ॥ २ ॥

भोर इ० । सूत पौराणिक, मागध वंशप्रसंसक, सरस रागतें रागे कहँ गावत भए। उनींदे लोचन नींद भरे नयन सुन्दर और मुख की परम शोभा देखि शृंगार रस हारे औ एक के को कहै बहुत काम भागे ॥ १ ॥ स्वाभाविक सुन्दर छवि ताकी उपमा कवि नहीं पावत। हर्षित सब देखन लागे यह अनूप रूप के प्रेम में राति दिन दास अनुरागे रहत हैं ॥ २ ॥ ३ ॥ २ ॥

राग कल्यान—रघुपति राजीवनयन सोभा तन कोटि मयन करुनारस अयन चयन रूप भूप माई। देखो सखि अतुलित छवि संतकंज कानन रबि गावत कल कीरति कबि कोविद समुदाई ॥ १ ॥ मज्जन करि सरजुतीर ठाढे रघुबंस बीर सेवत पदकमल धीर निरमल चित लाई। ब्रह्ममंडली

द्रवृन्द मध्य इंदुबदन राजत सुखसदन लोकलोचन सुख-
दाई ॥ २ ॥ बिथुरित सिररुहबरूथ कुंचित बिच सुमनजूथ-
मनिजुत सिसुफनि अनीक ससि समीप आई । जनु सभीत
द्वै चकोर बालक जुग रुचिर मोर कुंडलछबि निरखि चोर सकु-
चत अधिकाई ॥ ३ ॥ ललितभृकुटि तिलकभाल चिबुक
अधर द्विज रसाल हास चारुतर कपोल नासिका सुहाई ।
मधुकर जुग पंकज बिच सुक बिलोकि नीरज पर लरत
मधुर बचनी मानो बीचि कियो जाई ॥ ४ ॥ सुंदर पट पीत
बिसद भ्राजत बनमाल उरसि तुलसिका प्रसून रचित
बिबिध बिधि बनाई । तरु तमाल अधबिच जनु त्रिबिधि कीर
पांति रुचिर हेमजाल अंतर परि ताते न उड़ाई ॥ ५ ॥ संकर
हृदि पुंडरीक निवसत हरि चंचरीक निर्व्यलीक मानस गृह
संतत रहे छाई । अतिसय आनंद मूल तुलसिदास सानुकूल
हरन सकल सूल अवधमंडन रघुराई ॥ ६ ॥ ३ ॥

रघुपति इ० । सखी प्रति सखी कहति है। री माई अर्थात् री सखी रघु-
पति जो कमलनयन हैं औ जिन के तन की शोभा कोटिमयन सम है औ
करुणारस के अयन कहे गृह हैं औ चैनदाता रूप भूप हैं जिन कौ याजाचत
न कहे आनंद रूप ब्रह्मादि तिन के भूप हैं तिन को देखो अतुलित छवि
उन की औ संत रूपी कमल बन के सूर्य हैं अर्थात् प्रफुल्लित करनिहार
औ उन की सुंदरि कीरति कवि पंडितन को समुदाय गावत हैं ॥१॥
सो श्रीरघुवंश वीर स्नान करि के सरजूतीर में खड़े हैं। धीर कहे ज्ञानी
अपने निर्मल चित्त को लगाय उन के पद कमल को सेवत हैं। ब्राह्मणन
की मंडली औ मुनिन के समूहन के बीच में चन्द्रवदन सुखसदन
सब लोग के नैनन को सुखदाता श्रीरघुनाथ सोहत हैं। ब्राह्मण वसिष्ठ
पाय करि ब्रह्ममंडली ते मुनिन्द्रवृन्द पृथक् लिखे ॥ २ ॥ सिररुह

कहँ वार कुंचित कहँ टेढे तिन को वरूथ कहँ समूह विथुरित कहँ विखरे भए हैं। तिन के बीच बीच फूलन के गुच्छे गथे हैं, सो मानो मणि-युक्त सर्पन के वालकन की सेना चन्द्रमा के समीप आई है, सो सैना देखि चंद्रमा डरि अकोर दै जुगल सुंदर कुंडल जो मयूर है ताको राखे. अर्थात् सर्प को मयूर खात है तिन कुंडल मयूरन की छवि देखि चोर सर्पवालक वहुत सकुचत हैं। इहां मणि गूथे भये पुष्प है, सिसुफणि की सेना टेढे विखरे वार हैं चन्द्रमा मुख है कुंडल के आड़ कर वार मुख पर नहीं आय सकत है सो सकुचना है। शंका। सर्प को मणि गुप्त रहत हैं इहां फूल तो प्रगट है। उत्तर। मणि जो सिर पर गुप्त रहत है ताकी आभा वाहर चमकत है तैसे वालन में पुष्प गुप्त हैं किंचित् पखुरी जो निकली है सो आभा रूप हैं ॥३॥ भौंहें ललित हैं औ भाल तिलक औ ठोढ़ी औ ओठ औ दांत रसीले हैं हंसी अति सुंदर है औ कपोल नासिका सुंदर है मानो नीरज कहँ कमल इहां कमल करि नेत्र जानना तिन के ऊपर भ्रम की अवली लरत हैं, यहां भ्रमर की पंक्ति दोनो भौंहैं हैं सो कमल रूप नेत्र के रस पान करिवे हेतु लरत हैं सो विलोकि मधुकर जुगल जो कमल में हैं, इहां मधुकर जुगल कस्तूरी को तिलक रेख है। जो केसर को तिलक मानो तो पीत जुगल मधुकर जानो पंकज मुख है अर्थात् कमल वदन पर जो जुग मधुकर तिलक रेख सो औ नासिका रूप सुआ सो दोऊ के वीच अर्थात् दोऊ भौंह भ्रमरावली के वीच किया। भाव धरहर कियो जाय कै ॥ ४ ॥ सुंदर पीत वस्त्र धारे हैं औ विसद वनमाल तुलसी औ पुष्प करि रचित विविधि विधान ते वनाई उर में शोभत। मानो तमाल वृक्ष के अधविच त्रिविध सुगन की पांति रुचिर वैठी है। कोऊ संदेह करै कि पक्षी चंचल होत हैं थिर क्यों है रहे हैं, ता हेतु लिखत हैं कि सोने के जाल के भीतर परे हैं ताते उड़ात नहीं हैं। इहां तमाल तरु राघव हैं। अधविच वक्षस्थल है त्रिविध कीर पांति वन-माला जो हरित श्वेत पीत तुलसी पुष्पन करि है सोई, सोने की जाल पीत वसन है ॥ ५ ॥ शिव जी के हृदय कमल मों राम रूपी भंवर जो नेवास करत है औ विर्व्यलीक कहँ दूषनरहित मानस कहँ हृदय रूप गृह में निरंतर जो छायो रहत है औ अतिसै आनन्द को मूल है औ

विसेप तोड़निहारे हैं जो दनुजवन पाठ होय तो अस अर्थ करना दनुज रूप वन को तोड़निहारे हैं। हैं तो ऐसे वलिष्ट पर सुंदर ऐसे हैं कि अंग अंग की छवि पर एक को को कई अगिनित काम मोहैं ॥१॥ परमा शोभा औ सुख औ शील के गृह जे नेन हैं तिन्हैं देख औ श्याम टेढ़े वाल औ कुंडल औ सुंदर नासिका जे चित्त पोहत हैं तिन्हैं देखु। भाव वशकरि लेत हैं सो मानो चंद्रमा के बिंब के मध्य में कमल मछरी पंजरीट लखि कै भंवर मछरी सुआ अपने अपने गोहैं कहैं संबंध जानि आए। इहां चंद्रबिंब श्री राघव को मुख है तेहि मध्य कमल मीन खंजन रूप नेत्र है तेहि को देखि कै कमल जानि वाल रूप भ्रमर आए औ कुंडल रूप मकर अपनो सजाती नेत्र मीन को मानि आए औ नासिका जो कीर सोऊ अपनो सजातीय अर्थात् पक्षी नैन खंजन को जानि आए ॥ २ ॥ ललित कपोल मंडल हैं औ सुंदर विसाल भाल तामें तिलक अति सुंदर टेढ़ी भौंहैं अंक सम है औ लाल ओठ हैं बोल मधुर है दांतन की चमक दामिनि की दुति सम है हँसनि औ तिरछी चितवनि देखि हृदय हुलसति है ॥ ३ ॥ संख के तीन रेखा सम कंठ है भुज विसाल है उर में तुलसी की माला मोतिन की माला युक्त है जाको योगी जिय सो देखत हैं मानो यमुना जी नीलमनिंद्र पहार के सिखर को परसि धसति कहैं गिरति तहां हंसनि की पंक्ति संकुल कहैं संकीर्ण अधिक होति अर्थात् एक में एक सटि लसति इहां यमुना तुलसी की माला है- मनींद्रनील रघुनाथ हैं सिखर कांधा है ताको परसि धारासम माला नीचे को गिरचो है ताके पास मोतिन की माला है सो हंस की पंक्ति है ॥ ४ ॥ अति अलौकिक पीत वसन भव्य कहैं सुंदर नवीन जो है सो कैधों सुंदर चंपा के पुष्पन का समूह है कैधों बिजुरीन को समूह है कैधों सोननि के भ्रमरन को समूह है अर्थात् पीत भ्रमरन का समूह है औ रूप रूपी समुद्र जो है सो भूपन रूप मनिगन समेत सज्जन के नेत्र रूप मछरी के निकेत कहैं रहिबे को स्थान है। भाव समुद्र में मछरी रहत है सो इहां सज्जन का नेत्र है, वहां मुनिगन रहत इहां भूपन है, तेहि रूप रूपी समुद्र में मन रूप हाथी को वपुप कहैं सरीर बोह लेत है अर्थात् डूबत उतिराति है ॥५॥

सखी के वचन की चतुराई अकनि कहे सुनि तब तुरीय जो श्रीरघुनाथ तिन को देखि के प्रेम में द्रवत भई। पग नहीं इत घर के ओर परत न उत सरजू ओर परत नहि समय सों सब चकित ह्वै गई। गोसांई जी कहत हैं यह सुधि नहीं रही कि कवन की हौं औ केहि ठांव ते आई औ कौन काज करना है काके ढिग हौं औ कवन ठांव के रहैया हौं तुरीय ने रघुनाथ बोध हेतु प्रमान। "तुरीया जानकी प्रोक्ता तुरीयो रघुनंदनः" इति महारामायणे ॥ ६॥४ ॥

देखु सखि आजु रघुनाथ सोभा बनी। नील नीरद बरन बपुष भुवनाभरन पीत अंबर धरन हरन दुतिदामिनी ॥१॥ सरजु मज्जन किये संग सज्जन लिये हेतु जनपर हिये क्षपा कोमल बनी। सजनि आवत भवन मत्त गजवरगवन लंक मृगपति ठवनि कुवर कोसल धनी ॥२॥ सघन चिक्कन कुटिल चिकुर बिलुलित मृदुल करनि बिवरत चतुर सरस सुषमा जनी। ललित अहिसिसुनिकर मनहुं ससि सन समर लरत धरहरि करत रुचिर जनु जुगफनी ॥ ३ ॥ भाल भ्राजत तिलक जलज लोचन पलक चारु भ्रू नासिका सुभग सुक आननी। चिबुक सुंदर अधर अरुन द्विज दुति सुधर वचन गंभीर मृदु हास भव भाननी ॥ ४ ॥ स्रवन कुंडल बिमल गंड मंडित चपल कलित कलकांति अति भांति कछु तिन तनी। जुगल कंचन मकर मनहुं बिधुकर मधुर पिअत पहिचानि करि सिंधु कीरतिभनी ॥ ५ ॥ उरसि राजत पदिक जोति रचना अधिक माल सुविसाल चहुं पास बनी गजमनी। स्याम नव जलद पर निरखि दिनकर कला कौतुकी मनहुं रहि घेरि उडगन-अनी ॥ ६ ॥ मंदिरनि पर खरी नारि आनंद भरी निरखि बरषहिं बिपुल कुसुम कुंकुम कनी। दास तुलसी राम

परम करुना धाम काम सतकोटि मद हरत छवि आपनी ॥ ७ ॥ ५ ॥

देखु इति । हे सखी आजु जो रघुनाथ की शोभा बनी सो देखु। श्याम मेघ सम शरीर को रंग है सो शरीर समस्त भुवन के आभरन कहैं भूषन रूप है औ पीतवसन का जो पहिरन है सो दामिनी की द्युति हरनिहारा है, सरजू ते मंजन किए संग में सज्जनन को लिए हेतु कहैं मीति जन के ऊपर जिन के हृदय में है औ कृपा करि कोमल स्वभाव धनी कहैं अत्यंत है औ मतवारे श्रेष्ठ हाथी सम चाल है औ लंक कहे कठि औ ठवनि कहे अकड़ सिंह सम है। हे सजनी कोशल धनी कुंअर भांति आवत हैं ॥ २ ॥ सघन चिक्कन टेढ़े वार अरुझे भाव स्नान किए ते अरुझे हैं ताको कोमल हाथ सो रघुनाथ बिवरत कहैं पृथक् पृथक् करत तासे अतिरसयुक्त परमा शोभा जनी कहैं उत्पन्न भई। सुंदर सर्पन के वालकन के समूह मानो चन्द्रमा सन युद्ध में लरत तहां दुई सर्प सुंदर धरहरि करत हैं इहा सर्पन के बालकन के समूह बार हैं शसि मुख है युग फनी दोउ हाथ हैं मुख पर जो बार परत हैं सो लरब है हाथन ते जो सम्हारथ है सो धरहरि है। भाव यह कि अमृत हेतु चंद्रमा सो सर्पन के वालक लरत हैं दुई बड़े सर्प धरहरि करत हैं। कि जो कोई अपना माल न दे तो तासों लड़ना न चाहिये ॥ ३ ॥ ललाट में तिलक शोभत कमल सम नेत्र हैं पलकै और भौंह सुंदर है औ नासिका सुंदर सूगा के मुख सम है, अर्थात् ठोर सम ठोढ़ी औ अरुन अधर ओष्ठ के नीचे को भाग औ दांतनि की दुतिधर कहे ओष्ठसहित सुंदर है। वचन गंभीर है औ मृदु हँसी संसार की नासनिहारी है ॥४॥ कानन में चंचल निर्मल कुंडल हैं तिन्ह करि कपोल भूषित हैं कल कहैं सुंदर शोभित अति प्रकाशित जिन्ह की कांति तिन्ह कुंडलन ने कछु तनी कहैं विस्तार कियो है। ताको कहत हैं मानों दुइ सोने के मकर अर्थात् कुंडल रूप मछरी चंद्र की किरन मधुर अमृत पियत इहां मुख चंद्र है रूप अमृत है, समुद्र की कीर्ति जो भनी भई हैं अर्थात् चन्द्रमा अमृत आदि समुद्र ते उत्पन्न है यह कीर्ति तें पहिचानि करि के पियत कि हमहुं समुद्र तें उत्पन्न हैं तो भाई के चीज लेवे में दोष नहीं ॥ ५ ॥

श में पदिक शोभति ताकी रचना की जोति अधिक है औ गजमुक्ता
कारि बनी सुंदर विशाल माला चहुं पास शोभत सो मानो श्याम नवीन
मेघ पर सूर्य की कला देखि के कौतुक करनेवाली तारागन की सेना घेर
ली। इहां श्याम नव जलद रघुनाथ को वक्षस्थल है औ पदिक जोति
दिनकर की कला हैं तारागन मोती की दाना हैं, कौतुक मेघ सूर्य की
कला को होनो हैं ताको देखि तारागन विचारे हमहूं सग उलटी करैं
तातें मेघ के ऊपर ताहू पर सूर्य के समीप आनि बैठे यह अति आश्चर्य
कौतुक किये ॥ ६ ॥ मंदिरन पर खड़ी आनंद भरी नारि निरखि कै
बहुत फूल-औ कुमकुम कहं केसरि वा रोरी ताकी कनिका को वृष्टि
करति हैं। गोसाईं जी कहत हैं परम करुणा के धाम जो राम सो आपनी
छवि सो सौ कोटि काम के मद को हरत हैं ॥ ७ ॥ ५ ॥

भाजु रघुबीर छवि जातिनहि कछु कही। सुभग सिंहा-
सनासीन सीतारमन भुवन अभिराम बहुकाम सोभा सही
॥ १ ॥ चारुचामर व्यजन छत्र मनिगन विपुलदाम मुकुता-
वली जोति जगिमगि रही। मनहुं राकेस सँग हंस उडगन
... हि मिलन आये हृदय जानि निज नाथही ॥ २ ॥ मुकुट
सुंदर सिरसि भालबर तिलक भृकुटिल कचकुंडलनि परम
आभालही। मनहु हरडर जुगल मारध्वज के मकरलागि
श्रवननि करत मेरु की बतकही ॥ ३ ॥ अरुन राजीवदल
नयन करुना अयन वदन सुषमासदन हासत्रय तापही।
विविधि कंकनहार उरसि गजमनिमाल मनहु बगपांति
जुगमिलि चली जलदही ॥ ४ ॥ पीत निरमल चैल मनहु
मरकत सैल पृथुलदामिनि रही छाइ तजि सहजही। ललित
सायकचाप पीनु भुजबल अतुल मनुजतन दनुजबन दहन
... मही ॥ ५ ॥ जासु गुन रूपनहि कलित निरगुन सगुन

संभुसनकादि सुक भक्ति दृढ करि गही। दासतुलसी रामचरन पंकज सदा वचन मन करमं चहै प्रीति नित निरवही ॥ ६ ॥ ६ ॥

आजु इ०। आसीन बैठे, भुवन अभिराम चौदहों भुवन में सुंदर है, सही सत्य ॥ १ ॥ सुंदर चंवर पंखा छत्र तामो बहुत मनिगन औ मोतिन की पंक्ति अर्थात् झालरि लगी है औ दाम कहैं गुच्छा तिन की जोति जगमगाय रही मानो छत्र नहीं राकेस कहैं पूर्णचन्द्र है, चमर नहीं हंस है। चमर स्वेत होत है ताते हंस कहे। मुक्तामणि नहीं है तारागन हैं औ पंखा नहीं है बरही कहैं मयूर है, हृदय में अपना स्वामी जानि मिलन आय पंखा मयूर के पक्ष का है औ मयूर के नाचवे सम डोलत रहत है ताते मयूर कहे ॥२॥ सुंदर मुकुट सिर पर है औ ललाट श्रेष्ठ तिलक है भौंहैं टेढ़ी हैं औ दोऊ कुंडल परम प्रभा को लही है मानो शिव जी के डर ते कामदेव के ध्वजा के दोऊ मछरी कान मों लगे मेल की बतकही करत हैं। इहां दोऊ कुंडल मछरी हैं। भाव हमारे स्वामी काम को मारि डारे अब हम को भी शिव कदापि मारि डारैं, यह हेतु शिव जी को स्वामी रघुनाथ को जानि मेल की बतकही करत हैं कि इन के कहे शिव जी न मारैंगे मेल है जायगो ॥ ३ ॥ लाल कमल सम नेत्र करुणा के गृह हैं औ मुख परमा शोभा को घर तीनौं ताप हरता है और विविध प्रकार के कंकन हारादि अर्थात् वनमाला आदि औ उर में गजमुक्ता की माला है सो मानो माला नहीं है जुगवगाति पांति है, शरीर रूप मेघ सो मिलि चली है ॥ ४ ॥ मलरहित पीतरंग को वसन मानो शरीर रूप मरकतमणि के शैल पर पृथुल कहैं समूह पीताम्बर रूप बिजुली सहज ही स्वभाव जो चंचल ताको तजि के छाय रही थिर होय रही, पीनभुजा औ बल अतुलित है, सुंदर वान धनुष धारे मनुष्य के शरीर सम, शरीर औ दनुज रूपी वन के दहन कहैं अग्नि औ पृथ्वी के भूषणकर्ता हैं ॥ ५ ॥ गुण रूप को निर्गुण सगुण शिवादि नहीं कहत अर्थात् नहीं निश्चय करि सकत। शंभु सनकादि शुक ने केवल भक्ति ही को दृढ़ करि गहि रही है। गोसाईं जी कहत हैं

दि य मिद राम के चरण कमल में सदा मन वचन कर्म करि प्रीति सों निबाहिवो चाहत हैं ॥ ६॥६ ॥

रामराज राजमौलि मुनिवर मनहरन सरन लायक सुषदायक रघुनायक देषोरी । लोक लोचनाभिराम नीलमनि तमाल स्यामरुप सोभधाम अंगछवि अनंगभोरी ॥१॥ भ्राजत सिरमुकुट पुरट निरमित मनिरचित चारु कुंचित कच रुचिर परमसोभा नहि थोरी । मनहुं चंचरीक पुंजकंज वृंद प्रीति-लागि गुंजत कलगान तान दिनमनि रिझयोरी ॥ २ ॥ अरुन कंजदल विसाल लोचन भ्रू तिलकभाल मंडित श्रुतिकुंडलवर सुंदरतर जोरी । मनहुं संबरारि मारि ललित मकर जुग-विचारि दीन्हे ससिकहं पुरारि भ्राजत दुहुंभोरी ॥ ३ ॥ सुंदर नासा कपोल चिवुक . अधर अरुन बोल मधुर दसन राजत जब चितवत मुषमोरी । कंजकोस भीतर जनु कंजराग सिषर निकर रुचिर रचित विधि विचित्र तडित रंगवोरी ॥ ४ कंबुकंठ उरविसाल तुलसिका नवीनमाल मधुकरवर वास विवस उपमा सुनिसोरी । जनुकलिंद जात नीलसैल ते धसी समीप कंदवृंद वरषत छवि मधुर घोरिघोरी ॥ ५ ॥ निरमल अति पीतचैल दामिनि जनु जलदनील राषी निज सोभाहित विपुल विधि निछोरी । नैननि को फल विसेष ब्रह्म अगुन सगुन वेष निरषहु तजि पलक सुफल जीवन लेषोरी ॥ ६ ॥ सुंदर सीतासमेत सोभित करुनानिकेत सेवक सुष देत लेत चितवत चितचोरी । वरनत यह अमित रूप थकित निगम नागभूप तुलसिदास छवि विलोकि सारद भइ भोरी ॥ ७ ॥ ७ ॥

राम राज १० । राजन के मौलि कहैं मस्तक रूप औ मुनिबरन के मन हरनिहारे औ शरण के योग्य सुख के दाता रघुकुल के स्वामी वा रघु नाग जीव ताके स्वामी जो राम राजा तिन को री सखी देखो सब जग के नेत्रों को रमणीय हैं औ नील मणि सम श्याम औ चिक्कन औ तमाल सम पुष्ट औ श्याम हैं औ रूप औ शील के गृह हैं औ कोरी कहैं करोरिन काम की छवि है जाको ॥ १ ॥ सिर में पुरट कहैं सोना ताको मुकुट निर्मित कहैं बनायो औ मणिन करि जड़ित सुंदर शोभत औ सुंदर टेढ़े बाल तिन की उत्कृष्ट शोभा थोरी नहीं मानो बाल नहीं भ्रमरन को समूह हैं मुख औ दोऊ नेत्र एही कमलन के वृंद हैं तिन के प्रीति लागि गुंजार करत हैं सो सुंदर तान करि गान ते भूप रूप मुकुन्द कों रिझायो । भाव सूर्य को चंचल सुभाव है ताको रीझि कै छोड़ि थिर है बैठे ॥ २ ॥ लाल कमल के दल समान विशाल नेत्र हैं औ भौंह करि तिलक करि भाल शोभित है औ श्रेष्ठ कुंडलनि की जोड़ी अति सुंदर कानन में हैं मानो संवरारि कहैं काम ताकी नारि कुंडल नहीं हैं ताके पताका केलित दोऊ मछरी हैं तिन को मुख रूप चंद्रमा कहं शिव जू दियो सो दोऊ ओर शोभत है ॥ ३ ॥ नासिका औ कपोल औ ठोड़ी सुंदर हैं औ ओठ लाल हैं बोल मधुर है जब मुख मोरि देखत हैं तब दांतै शोभत हैं मानो कमल कोस के भीतर कंज कहैं कमल राग कहैं लाल अर्थात् लाल कमल तिन के सुंदर शिखर का समूह अर्थात् पखुरिन का समूह विधि कहैं ब्रह्मा ने आश्चर्य बिजुली के रंग में बोरि कै रचित कियो है । इहां कंज कोस मुखकोस हैं ताके भीतर लाल कमल को शिषर को समूह दांतै अरुण है तड़िता को रंग झलक है वा कंज राग कहैं पद्मरागमणि शृंग तिन के समूह ॥ ४ ॥ शंख सम कंठ है छाती चौड़ी है तामें नवीन तुलसी को माला है तेहि विषे श्रेष्ठ सुगंध ते विवस है भ्रमर घेरि रहे हैं ताकी जो उपमा है री सखी सो सुनु । मानो कलिंदजात कहैं जमुना जी नील परवत ते धसी कहैं गिरी तिन के समीप कंद वृंद कहैं मेघन को समूह । इहां जमुना श्याम तुलसी की माला है श्री राघव को शरीर नीलपर्वत है धसिबो माला को नीचे के ओर लटकनो है ताके समीप जो

भ्रमन का शोर है सो मेघ है, माला के पुष्प के रस लेइ उड़त हैं मुख से ने सो छलक दरत है सो बरसना है, जो गुंजार शब्द करत हैं सो गरजना है।५॥ अति निर्मल जो पीत वसन बिजली सम ताहीं मानो श्याम मेघ ने बहुत प्रकार निहोरा करि अपने शोभाहित राखी है। इहां श्याम मेघ श्याम शरीर है, पीत चैल (कपड़ा) दामिन में रूपक अलंकार है। जनु उत्प्रेक्षा है, मोल शब्द में अक्रमातिशयोक्ति तीन अलंकार का संकर है। निरुप धरि नैनन को फल नर ब्रह्म अगुन सगुन वेष श्री रामचंद्र को निरख छबि देखहु, तब अपने जीवन को सुफल जानो ॥ ६ ॥ करुणा-निकेत करुणा के गृह, निगम वेद, नागभूप शेष ॥६॥७॥

राग केदारा—सखि रघुनाथ रूपनिहारु। सरदविधु रविसुमन मनसिज मानभंजनिहारु॥१॥ श्यामसुभग सरीर जनमन काम पूरनिहारु। चारुचंदन मनहु मरकत सिखर लसतनिहारु॥२॥ रुचिर उर उपवीत राजतपदिकगजमनिहारु। मनहुं सुर धनु नषतगन बिच तिमिरगंजनिहारु॥३॥ विमल-पीत दुकूल दामिनिदुति-विनिंदनिहारु। वदन सुषमासदन सोभितमदन मोहनिहारु॥४॥ सकल अंग अनूपनहि कोउ सुकवि बरननिहारु। दासतुलसी निरखतहि सुखलहत निरख-निहारु॥५॥८॥

सखि इ०। शरद को पूर्ण चन्द्र औ अश्वनीकुमार औ काम के अहंकार भंजनिहार रूप निहारु॥१॥ सुंदर चंदन जो शरीर में है सो मानो मरकत के शिखर पर निहारु कहँ बरफ लसत है॥२॥ सुंदर उर में यज्ञोपवीत औ पदिक कहँ चौकी औ गजमुक्तन का हार शोभत है सो मानो यज्ञोपवीत नहीं है इन्द्र धनु है। इहां केवल आकार में उपमा है रंग में नहीं। गजमनि हार नहीं है तारागण है ताके बीच मों चौकी नहीं है तिमिरगंजनिहारु कहँ सूर्य हैं॥३॥ दामिनि के दुति को निंदा करनिहारो निर्मल पीत वसन है जाको औ मदन को मोहन

करनिहारो परमा शोभा को गृहको शोभित बदन जाको ॥४॥ निरखि-निहार देखनेवालों पर ॥ ५ ॥ ८ ॥

सपि रघुबीर सुप छविदेषु । चित्तभीति सुप्रीति रंगसुरूपता अवरेषु ॥ १॥ नयन सुषमा निरपि नागरि सुफल जीवन लेषु । मनहुं बिधि जुग जलज बिरचे ससि सुपूरन मेषु ॥ २॥ भृकुटि भालबिसाल राजत रुचिर कुंकुमरेषु । भ्रमर द्वै रबि किरन ल्याए करनजनु उनमेषु ॥ ३ ॥ सुमुषि कैस सुदेस सुंदर सुमन संजुत पेषु । मनहु उडगन वाहु आये मिलन तम तजि देषु ॥ ४ ॥ श्रवन कुंडल मनहुं गुरु कवि करत वाद बिसेषु । नासिका द्विज अधर जनु रह्यो मदन करि बहुवेषु ॥ ५ ॥ रूपबरनि नहि सकत नारद संभु सारद सेषु । कहै तुलसीदास क्यौं मतिमंद सफल नरेषु ॥ ६ ॥ ९ ॥

चित्त रूपी भीत पर सुंदर प्रीति रूपी रंग तें ता स्वरूप को लिखि लेहु ॥ १ ॥ हे नागरि नेत्रों की परमाशोभा देखि कै अपने जीवन को सुफल लेखो । मानो नेत्र नहीं हैं ब्रह्मा ने मेष राशि के पूर्ण चन्द्रमा में जुगल कमल बनाए हैं । इहां मेष राशी को पूर्णचन्द्र श्री राघव को मुख है । मेष के चन्द्रमा निर्मल होत है औ मेषही के सक्रांति में श्री राघव को जन्महू है ताते मेष के चन्द्रमा की उपमा दिए। चंद्र ढिग कमल कैसे विकाशित भए सो हेतु आगे लिखत हैं ॥ २ ॥ भौंहैं युक्त भाल जो विशाल है तामें सुंदर केसरि को जुगल रेखा शोभत है, मानो भौंह दोनों भ्रमर है तिन्हों ने उन्मेष कहैं विकाश करिवे हेतु नेत्र रूप कमल के कुमकुम रेखा रूप सूर्य किरन को ल्याए। भाव यह कि मुख रूप चंद्र देखि संपुटित भए हैं तिन को तिलक रेख रूप सूर्यकिरनि ते प्रफुल्लित करायो चाहत हैं । छवि रूप मकरंद के पान करिवे हेतु ॥ ३ ॥ सुंदर मुख पर केश अपने भाग पर सुंदर पुष्पन युत देखु, मानो फूल जो है सो तारागन हैं तिन्ह के वाह ते वा रूप तम मुख रूप चन्द्र तें. मिलनं

भायो ॥ ४ ॥ कानन में जो दोऊ कुंडल हैं सो वृहस्पति शुक्र हैं परस्पर वाद करत हैं इहां कुंडलन का हलना सो वाद है। नाक दांत ओठ नहीं हैं मानो काम बहुत बेष करि टिक रह्यो है ॥ ५ ॥ सकल नरेषु सब मनुष्यन में ॥ ६ ॥ ९ ॥

राग जयतश्री—देषोराघो बदन बिराजत चारु । जात न बरनि बिलोकतही सुष सुष विधों छवि बरनारि सिंगारु ॥१॥ रुचिर चिबुक रद जोति अनूपम अधर अरुन सित हास निहारु। मनो ससिकर बस्यो चहत कमलमहुं प्रगटत दुरत न बनत बिचारु ॥२॥ नासिक सुभग मनहुं सुकसुंदर चितवत चकित अचारु अपारु । कल कपोल मृदु बोल मनोहर रीझि चित चतुर अपनपो वारु ॥ ३ ॥ नयन सरोज कुटिल कचकुंडल भृकुटि सुभाल तिलक सोभासारु । मनहुं केतु के मकर चाप सर गयो बिसरि भयो मोहित मारु ॥४॥ निगम सेष सारद सुकसंकर बरनत रूप न पावत पारु । तुलसिदास कहै कहो कौन बिधि अतिलघु मति जड कूर गंवारु ॥ ५॥१० ॥

देखो इ० । हे सखी देखो श्री राघव को मुख सुंदर सोभत है। देखत ही जो सुख होत है सो बरन्यो नहीं जात है, मुख है किंधों श्रेष्ठ छवि रूप स्त्री को शृंगार है ॥ १ ॥ सुंदर ठोढ़ी है औ दातनि की जोति अनुपम है ओठ लाल औ हंसी उज्ज्वल इन सब को निहार। मानो हंसी रूप चंद्रमा की किरण ओठ रूप कमल मों बसो चाहत है पर बिचार नहीं बनत कबहूं प्रगटत कबहूं छिपि जात है अर्थात् जब रघुनाथ मुसकात तब प्रगटत जब मुसुकाब छोड़ देत तब छिपि जात ॥ २ ॥ नासिका जो सुंदर सो मानो सुवा की चोंच है। अपार आश्चर्य करि देखनवारे चकित होय ताको चितवत है सुंदर कपोल है औ कोमल बोल मनोहर है ताको सुनि चतुर जन चित्त में रीझि के अपनो अपनपो कहै देहाध्यास या आत्मा अपना नेवछावरि करत ॥ ३ ॥

नेत्र कमल सम हैं, टेढ़े बाल हैं औ कुंडल भौंह सुंदर भालतिलक ए सब शोभा को सारांश रूप हैं मानो कुंडल नहीं केतु कहें ध्वजा पर के मीन हैं औ भृकुटीं नहीं हैं चांप है तिलक नहीं है बाण है श्री रघुवर मुख देखि मोहित होय काम इन सब को विसारि गयो ॥ ४।५॥१० ॥

राग ललित—आजु रघुपति मुख देखत लागत सुख सेवत सुरुख सोभा सरद ससि सिहाई। दसन बसन लाल-बिसद हास रसाल मानो हिमकरकर राखे राजीव मनाई ॥१॥ अरुन नयन बिसाल ललित भृकुटि भालतिलक चारुतर-कपोल चिबुक नासा सुहाई। बिथुरे कुटिल कच मानहु मधु लालच अलिनलिन जुगल ऊपर रहे लुभाई ॥२॥ स्रवन सुंदर सम कुंडल कलजुगम तुलसिदास अनूप उपमा कहि न जाई। मानहुं मरकत सीप सुंदर ससिसमीप कनक मकरजुत बिधि बिरचि बनाई ॥ ४ ॥ ११ ॥

हे सखी आजु रघुपतिमुख देखत सुख लागत कहें सुख होत है। यह मुख कैसो है कि सेवक पर सुंदर रुखपूर्वक रहत है औ जाके शोभा कों शरद पूनो को चंद्रमा सिहात है। दसन बसन कहें ओठ सो लाल है औ हांस उज्ज्वल रसीला है मानो मुख नहीं चंद्रमा है उज्ज्वल हांस नहीं ताकों कर कहें किरन है तिहि से ओष्ठ रूप कमल को मनाइ राखे भाव चंद्रमा को कमल ते विरोध है ताको छोड़ाय राखे ॥ १ ॥ लाल नयन विशाल हैं सुंदर है औ कपोल ठोढ़ी नासिका सुंदर है औ बिखरे भए टेढ़े बार हैं सो मानो बार नहीं हैं भ्रमरे हैं। छवि रूप मधु के लालच तें जुगल नेत्र रूप कमल के ऊपर लोभाय रहे हैं ॥ २ ॥ कान सुंदर हैं ताके सम कुंडलो कल कहें सुंदर दुइ है। गोसाईं जी कहत हैं कि उपमा रहित हैं ताते उपमा नहीं कही जात है। मानो कान नहीं हैं मरकत मणि जो स्याम रंग को ताको सीप सुंदर है। सो मुख रूप चंद्रमा के निकट सोने के कुंडल रूप मछली युत ब्रह्मा जी ने बनाइ रख्यो। इंसका। कहे की उपमा नहीं कहि जाति है फेरि उपमा कहे सो क्यों।

दश। जब उपमा न पाए तब औ कबहूं न होनिहार सो उपमान दे उहराए अर्थात् मरकत मनि की सीप न होवै औ सोने की मछरी नहीं होति॥ ३॥ ११ ॥

राग भैरव—प्रातकाल रघुबीर बदनछबि चितै चतुर चित मेरे। होहिं विवेक बिलोचन निरमल सुफल सुसीतल तेरे॥ १॥ भालविसालविकट भृकुटी बिच तिलकरेष रुचि राजै। मनहुँ मदनतम तकि मरकत धनु जुगुल कनक सर साजै॥ २॥ रुचिर पलक लोचनजुग तारक स्याम अरुन सित कोए। जनु अलि नलिन कोस महुँ बंधुक सुमन सेज सजि सोए॥३॥ बिलुलित ललित कपोलनि पर कच मेचक कुटिल सुहाए। मनो बिधु महँ बनरुह बिलोकि अलि बिपुल सकौतुक आए॥४॥ सोभित स्रवन कनककुंडल कल लंबित बिबि भुजमूलै। मनहुँ पेखि तकि गहन चहत जुग उरग इंदु प्रतिकूलै॥ ५॥ अधर अरुनतर दसन पांतिवर मधुर मनोहर हासा। मनहुँ सोन सरसिज महुँ कुलिसनि तड़ित सहित कृतवासा॥६॥ चारु चिबुक सुकतुंड बिनिंदक सुभग सुउन्नत नासा। तुलसिदास छबि धामरामसुष सुषद समन भव-त्रासा॥ ७॥ १२॥

भाव इ०। हे चतुरचित्त मेरे! प्रातकाल रघुवीर के मुख की छवि को देखो, तब विवेक रूपी नेत्र तेरे मलरहित फलसहित औ शीतल होंहिं। चतुर कहिबे को यह भाव कि मुख छवि के सनमुख कराया चाहत हैं ताते बड़ाई दै बोले॥ १॥ विशाल भाल औ भौंह के बीच में तिलक की रेखा सुंदर शोभति है मानो मुख रूप काम ने बाल रूप तम को ताकि के भौंह रूप धनुप पर पीत तिलक रूप युगल सोने को बान साज्यौ है॥२॥ पलकैं औ नेत्रैं सुंदर हैं, तारक कहँ पुतरी स्याम

है औ ललाई मिश्रित श्वेत आंख के कोए कहें कोने हैं सो मानो पुतली रूप भ्रमर नेत्र रूप कमल के कोस में ललाई रूप दुपहरि के फूल की शय्या बिछाय सोए ॥ ३ ॥ अरुझे श्याम टेढ़े बार सुंदर कपोलन पर शोभत है मानो मुख चन्द्र मह नेत्र रूप वनरुह कहें कमल देखि कै केश रूप भ्रमरें कौतुकसहित अर्थात् एक से एक में मिले क्रीड़ा करते आये ॥ ४ ॥ लंबे जो बिधि कहैं दोऊ भुजा हैं तिन के मूल में सुंदर सोने के कुंडल कानो के शोभित हैं सो मानो कुंडल रूप मयूर को देखि के दोऊ भुजा रूप सर्प जो चन्द्रमा के प्रतिकूल में है अर्थात् मुख चन्द्र के सन्मुख मुख नहीं है पार्श्वभाग में हैं सो पकड़ा चाहत है । भाव कुंडल मयूर को मुख चंद्र के अनुकूल जानि के ॥५॥ ओठ लालतर है दांतनि की पांति श्रेष्ठ है औ मधुर हंसी मन की हरनिहारी है, मानो ओठ नहीं सोन कहें लाल रंग के सरसिज कहें कमल है, तामें दांत पंक्ति नहीं कुलिस कहें हीरन का समूह है सो हंसी तड़िता रूप हंसी सहित वास कियो है या दांतनि की चमक सो तड़िता है ॥ ६ ॥ सुंदर ठोढ़ी है औ सुवाके ठोर को निंदा करनिहारी अति सुंदर उन्नत नासिका है । गोसाईं जी कहत हैं छवि को धाम औ सुख को दाता औ भवत्रास को शमन करनिहारो श्रीरामजी को मुख है ॥ ७ ॥ १२ ॥

राग केदारा—सुमिरत श्रीरघुबीर की बाहैं । होत सुगम भव उदधि अगम अति कोउ लांघत कोउ उतरत थाहैं ॥ १ ॥ सुंदर स्याम सरीर सैल तें धसि जनु द्वै जमुना अवगाहैं । अमित अमलजल बल परिपूरन जनु जनमी सिंगार सविता हैं ॥ २ ॥ धारैं बान कूल धनु भूषन जलचर भंवर सुभग सबघाहैं । बिलसति बीचि बिजै बिरदावलि करसरोज सोहत सुषमा हैं ॥३॥ सकल भुवन मंगल मंदिर के द्वार बिसाल सोहाई साहैं । जे पूजी कौसिकमख रिषयनि जनक गनप संकर-गिरिजा हैं ॥ ४ ॥ भवधनु दलि जानकी बिवाही भए बिहाल नृपाल त्रपा हैं । परसुपानि जिन्ह किए

महामुनि जे चितए कबहूं न कृपा हैं ॥ ५ ॥ जातुधान तिय जानि बियोगिनि दुखई सीय सुनाइ कुचाहैं। जिन्ह रिपुमारि सुरारिनारि तेइ सीस उघारि दिवाईधा हैं ॥६॥ दसमुख बिबस तिलोयालोकपति बिकल बिनाये नाक चना हैं। सुबस बसे गावत जिन्ह को जसु अमर नाग नर सुमुखि सनाहैं ॥७॥ जे भुज वेदपुरान सेष सुक सारदसहित सनेह सराहैं। कलपलताहु कि कलपलतावर कामदुहाहु कि कामदुहा हैं ॥८॥ सरनागत आरत प्रनतनि को दै दै अभयपद ओर निबाहैं। करिआईं करिहैं करती हैं तुलसिदास दासनि पर छाहैं ॥ ९ ॥ १३ ॥

सुमिरत इ० । श्री रघुनाथ के भुजन को स्मरण करत मात्र में संसाररूपी समुद्र जो अति अगम है सो सुगम होत। पराभक्तिवाले तो वाही काल लाँघि जात औ सकामा भक्तिवाले प्रारब्ध भोगपूर्वक संसार समुद्र को थाँहं उतरत अर्थात् किंचित् देर होत पर उतर में संदेह नहीं ॥ १ ॥ सुंदर श्याम शरीर रूप परवत ते मानो द्वै जमुना की धारा अवगाहैं कहैं अथाहैं धसी। भाव नीचे को गिरी, मितिरहित निर्मल बल रूप जल करि भरी। जमुना जी सूर्य से जनमी हैं यह भुजा रूप जमुना शृंगार रस रूप सविता कहैं सूर्य से जनमी हैं ॥ २ ॥ बान धार है धनुकूल है जो भूषन पहिरे हैं सो जलचर हैं औ सब पाहिं भंवर हैं याह अंगुरी के बीच को कहत हैं जाको कोऊ देश में गाह कहूं पाह कहूं गासा कहत हैं। नदी में कमल रहत है, इहां सुषमा कहैं परमा शोभा करि सोहत जो कर सो कमल है ॥ ३ ॥ सकल भुवन रूप मंदिर के मंगल रूप जो दरवाजा विशाल ताके सुंदर साहैं कहैं चौखट की बाजू भुजा हैं। भाव बाजू आधार ते दरवाजा रहत है तैसे सर्व मंगल इन भुजन के आधार में रहत हैं औ जेहि भुजन को विश्वामित्र जी के यज्ञ में ऋषि सब औ बिवाह में जनक औ औ अनुराग के

जय किये पर गणप कहँ लोकपाल सब औ शिव पार्वती जू काशी में जे मरें तेहि के मोक्ष हेतु पूजी ॥ ४ ॥ जिन्ह भुजन ने शिवधनु तोरि जानकी जू को बिवाही, राजा सब त्रपा कहँ लज्जा करि बिहाल भए औ जेहि भुजन ने परशुराम को महामुनि किए अर्थात् शान्त बनाय दिए जे परशुराम कृपायुक्त काहू को कबहूँ न देखे ॥ ५ ॥ श्री जानकी जू को वियोगिनि जानि निशाचरन की स्त्री कुचाहैं सुनाय दुख देत भई तब जिन्ह भुजन ने शत्रु को मारि के तेई निशाचर की तीन की सीस उघारि के अर्थात् बिधवा करि के धा कहँ दोहाई देवाई दाहै पाठ होय तो अस अर्थ करना उन के पतिन के चिता को दाहै कहँ आंचे देवाई अर्थात् दग्ध करिबे समय में ॥ ६ ॥ तीनौं लोक के लोकपालन को रावन विकल औ विशेष बश करि नाक ते चना बिनाए सो सुबस बसे जिन्ह भुजन को यश देवता नाग नरन स्त्री सनाहैं कहँ अपने पतिन सहित गावति हैं ॥ ७ ॥ जेहि भुजन को वेद पुराण शेष शुक सरस्वती नेहसहित सराहैं हैं कि कल्पवृक्ष औ कामधेनहू के कामधेनु हैं । भाव कल्पवृक्ष कामधेनु जो सब को मनोरथ पूरन करत तिनहू के मनोरथ पूरन करत हैं ॥ ८ ॥ आरत जीव शरणागत में आय प्रणाम करत तिन को अभयपद दे दे ओर कहँ अंत लो निवाहत । भाव आदि सों अंत लो निवाहत । गोसाईं जी कहत हैं सो कर दासनि पर छाहैं करि आए औ करैंगे औ करत हैं ॥ ९॥१३ ॥

राग भैरव—रामचंद्र करकंज कामतरु बामदेव हितकारी । सियसनेह बरबेलि बलितवर प्रेमबंधु बरबारी ॥ १ ॥ मंजुल मंगलमूल मूलतनु करज मनोहर साषा । रोम परन नष सुमन सुफल सबकाल सुमन अभिलाषा ॥ २ ॥ अविचल अमल अनामय अविरल ललित रहित छल छाया । समन सकल संताप पापरुज मोह मान मद माया ॥३॥ सेवहिं सुचि सुनि भृंग विहंग मन सुदित मनोरथ पाए । सुमिरत हिय हुलसत तुलसी अनुराग उमगि गुन गाए ॥ ४ ॥ १४ ॥

श्रीरामचन्द्र को हस्तकमल रूप जो कल्पवृक्ष सो कामदेव कहँ जिन्ह को हितकारी है औ श्रीजानकी जू को स्नेह सोई श्रेष्ठ लता है जो करि वलित कहँ आच्छादित है औ श्रेष्ठ प्रेम जो बंधु का सोई वरवारि कहँ बाढ़ है अर्थात् ताको वेग है ॥ १ ॥ हस्त कमल रूप कल्पवृक्ष उज्ज्वल मंगलमूल को मूल कहँ जड़ सो तनु कहँ शरीर है औ हस्त कहँ अंगुरी सब शाखा हैं हस्त में जो रोम है सो वृक्ष को पत्र है नख फूल है औ सुंदर जनन की जो अभिलाषा सब काल में सोई सुंदर फल है। भाव अभिलाषानुसार फल फरयो रहत है ॥२॥ विशेष करि चंचलतारहित निर्मल औ रोगरहित। भाव जैसे भिलामा आदि वृक्ष की छाया रोगकारी होति है तैसी नहीं, अविरल कहँ सघन हैं, देखिवे में ललित है औ छल करि रहित छाया है अर्थात् ठग आदि वृक्ष लगाय भलो थल बनाय राखत हैं कि कोई पथिक सुथल देखि विश्राम करैगो ताको धनादि हरैगो तस नहीं। फिर छाया कैसी है सकल संताप अर्थात् दैहिक दैविक भौतिक शमन करनिहारी है औ पाप औ रोग औ माया करि जो मोह मान मद ताको शमन करनिहारी ॥ ३ ॥ वृक्ष को भ्रमर पक्षी सेवत हैं इहां पवित्र जो मुनिन को मन सोई भ्रमर औ पक्षी है सो मन भाए रस फल पाए हरखित है सेवत। गुसाईं जी कहत हैं या कल्पवृक्ष के तो नीचे गए सुख पावत है औ इहां स्मरण करन मात्र में हिय हुलसत औ गुनगान किये ते अनुराग उमगि चलत ॥ ४ ॥ १४ ॥

रामचरन अभिराम कामप्रद तीरथराज बिराजै। शंकर हृदय भक्ति भूतल पर प्रेम अक्षयवट भ्राजै ॥ १ ॥ स्यामचरन पदपीठ अरुनतल लसति बिसद नखश्रेनी। जनु रविसुता सारदा सुरसरि मिलि चलि ललित त्रिवेनी ॥ २ ॥ अंकुस कुलिस कमल ध्वज सुंदर भवर तरंग बिलासा। मज्जहि सुर सज्जन मुनिजन मन मुदित मनोहर बासा ॥ ३ ॥ बिनु बिराग

जप जाग जोगव्रत बिनुतीरथ तनु त्यागी। सब सुख सुलभ सद्य तुलसी प्रभुपद प्रयाग अनुरागी ॥ ४ ॥ १५ ॥

राम इ० । चरन में तीरथ राज प्रयाग का रूपक करि कहत हैं। श्रीराम को चरन रमणीय मनोरथदाता प्रयाग रूप शोभै है। शंकर को जो प्रेम सोई अक्षयवट है सो शंकर के हृदय की भक्ति रूप भूतल पर सोहत है ॥ १ ॥ पदपीठ श्याम वर्ण है, तरवा लाल है औ नखन्ह की पंक्ति उज्ज्वल सोहति है। मानहु यमुना सरस्वती औ गंगा मिलि के सुंदरि त्रिवेणी चली है, सरस्वती जैसे प्रयाग में गुप्त है तैसे तरवो गुप्त है ॥२॥ अंकुशादि जे चिन्ह है ते भँवर तरंग के विलास हैं। सुरसंत औ मुनि जन अर्थात् मननशील ते मनोहर चरन रूप प्रयाग में वास औ मज्जन करत हैं। इहां पद के वर्णिवे आदि में जो हर्षना औ पुलकना है सो मज्जन है। "कहइ सुनत हर्षहिं पुलकाहीं। ते सुकृती मनमुदित नहाहीं" ॥ औ ध्यान करना वास करना है। "पदराजीव वरनि नहिं जाहीं। मुनि मनमधुप वसहिं जिन्ह माहीं" ॥ ४ ॥ १५ ॥

राग विलावल—रघुवररूप विलोकु नेकु मन। सकल लोक लोचन सुखदायक नखसिख सुभग स्यामसुंदर तन ॥ १ ॥ चारुचरनतल चिन्ह चारि फल चारिदेत परचारि जानि जन। राजत नख जनु कमल दलनि पर अरुनप्रभा रंजित तुषारकन ॥२॥ जंघाजानु चारु उर उरु कटि किंकिनि पटपीत सुहावन। रुचिर नितंब नाभि रोमावलि त्रिवलि वलित उपमा कछु आवन ॥ ३ ॥ भृगुपदचिन्ह पदिक उर सोभित मुकुतमाल कुंकुम अनुलेपन। मनहुं परसपर मिलि पंकजरवि प्रगट्यौ निज अनुराग सुजस घन ॥ ४ ॥ बाहुबिसाल ललित सायक धनु करकंकन केयूर महाधन। विमल दुकूल दलन दामिनि-दुति जग्योपवीत लसत अतिपावन ॥ ५ ॥ कंबुग्रीव छबि सीवं चिबुक द्विज अधर कपोल बोल भयमोचन । नासिक

हुभग कृपापरिपूरन तरन भरन राजीव विलोचन ॥ ६ ॥
टिल भृकुटिवर भालतिलकरुचि सुचिसुन्दरतर स्रवन विभू
र। मनहुं मारि मनमिज पुरारि दिए ससिहि चाप सर
कर षटूपन ॥ ७ ॥ कुंचित कच कंचन किरीट सिर जटित
ोतिमय बहुविधि मनिगन। तुलसिदास रवि कुलरवि छवि
ोवि कहि न सकत सुक संभु सहसफन ॥ ८ ॥ १५ ॥

रघुवर १०। सुंदर तरवा में जे अंकुशादि चारि चिन्ह हैं ते जन
ानि के ललकारि के चारो फल देत हैं वा अंकुश अर्थ कुलिश धर्म
मल कामध्वज मोक्ष देत हैं। नख मानहुं नहीं सोहत है कमलदलनि
र मातःकाल के सूर्य के प्रभा ते रंजित ओसकण सोहत है ॥ २ ॥
जित सहित ॥ ३ ॥ भृगुपद को चिन्ह औ धुकधुकी औ मुक्तामाल
ौर केसर को अनुलेपन सोहत हैं मानो कमल औ सूर्य परस्पर मिलि
के अपना अनुराग औ घनो सुयश प्रगट कियो है। इहां भृगुपदचिन्ह
कमल पदिक सूर्य मुक्तामाल सुयश कुंकुम को अनुलेपन अनुराग है
॥ ४ ॥ केयूर बिजायठ, महाधन बड़े मोल को ॥ ५ ॥ द्विज दांत ॥६॥
टेढ़ी भौंहें औ श्रेष्ठ भाल पर सुंदर तिलक है और कुंडल की रुचि
कहिये कांति सुंदर है मानो शिव ने कामदेव को मारि के ताकों चाप
सर औ दूषणरहित मकर चंद्रमा को दियो है। यहां मुखचंद्र है, भ्रकुटी
चांप है, तिलक सर है, कुंडल मकर है ॥ ६॥७॥१५ ॥

राग कान्हरा—देखो रघुपतिछवि अतुलित अति। जनु
तिलोक सुषमा सकेलि विधि राखी रुचिर अंग अंगनि प्रति
॥ १ ॥ पदुमराग रुचि मृदुपदतल ध्वज अंकुस कुलिस कमल
एहि सूरति। रही आनि चहुंविधि भगतन की जनु अनुराग
भरी अंतरगति ॥ २ ॥ सकल सुचिन्ह सुजन सुखदायक ऊरध-
रेख बिसेष बिराजति। मनहुं भानु मंडलहि सवारत धरयौ
सूत विधि सुत विचित्र मति ॥ ३ ॥ सुभग अंगुष्ट अंगुली

अविरल अकुस अरुननष जोति जगमगति। चरनपीठ उन्नत नतपालक गूढ गुलफ जंघा कदलीजति ॥४॥ काम तून तल सरिस जानुजुग उरु करिकर करभहि विलघावति। रसना रचित रतन चामीकर पीतवसन कटि वासी सर बसति ॥५॥ नाभीसरसि त्रिवली निसेनिका रोमराजि सैवालछवि पावति। उर मुकुतामनि माल मनोहर मनहुं हंस अवली उडि आवति ॥ ६ ॥ हृदय पदिक भृगुचरन चिन्हवर बाहुविसाल जानुलगि पहुंचति। कलकेयूर पूर कंचनमनि पहुंची मंजु कंजकर सोहति ॥ ७ ॥ सुजव सुरेष सुनष अंगुलिजुत सुन्दर पानि मुद्रिका राजति। अंगुलीत्रान कमान बानछवि सुरनि सुषद असुरनि उर सालति ॥ ८ ॥ स्यामसरीर सुचंदन चरचित पीतदुकूल अधिक छवि छाजति। नील जलदपर निरषि चंद्रिका दुरनि त्यागि दामिनि जनु दमकति ॥ ९ ॥ जग्योपवीत पुनीत विराजत गूढ जंत्रुवनि पीन अंसुतति। सुगठपृष्ठ उन्नतककाटिका कंबुकंठ सोभा मनमानति ॥१०॥ सरदसमय सरसीरुह निंदक मुष सुषमा कछुकहत नहिं बनति। निरषतही नयननि निरुपम सुष रविसुत मदन सोमदुति निदरति ॥११॥ अरुन अधर द्विजपांति अनूपम ललित हंसनि जनमन आकरषति। विद्रुम रचित विमान मध्य मानो सुरमंडली सुमनचय वरषति ॥ १२ ॥ मंजुल चिवुक मनोहर हनुथलु कलकपोल नासा मन मोहति। पंकज मानविमोचन लोचन चितवनि चारु अमृत जल सींचति ॥ १२ ॥ केस सुदेस गंभीर वचन वर श्रुति कुंडल डोलनि जिय जागति। लपि नव नील पयोदर सित सुनि रुचिर मोर जोरी जनु

नाचति ॥१४॥ भौंहे बंक मयंक अंक रुचि कुंकुमरेष भाल भलि भ्राजति। सिरसि हेम हीरक मानिकमय मुकुटप्रभा सब भुवन प्रकासति ॥ १५ ॥ बरनत रूप पार नहिं पावत निगम सेषु मुक्त संकर भारति। तुलसिदास केहि विधि बषानि कहै यह मन बचन अगोचर मूरति ॥ १६ ॥ १७ ॥

देखो इ० ॥ १ ॥ लाल मणि की कांति सम कोमल तरवा हैं और बामे ध्वज अंकुश कुलिश कमल एहि चारि रेखन की मूरति है मानो सो रेखा अन्तर्गति अनुराग भरी से आर्त जिज्ञासु अर्थार्थी ज्ञानी चारो प्रकार के भक्तन की आनि रही ॥ २ ॥ सब श्रीरघुनाथ के पदन के सुन्दर चिन्ह सुजनन के सुखदायक हैं पर उर्द्धरेखा विशेष सोभति है मानो सूर्य मंडल के सँवारते में विचित्रमति विश्वकर्म्मा ने मून धरचो है। यहां तरवा को रंग लाल है ताते सूर्यमंडल की उपमा कही ॥ ३ ॥ उन्नत ऊंचा, नतपालक शरणागतपालक, गूढ़ गुल्फ घुटना ढंका है ॥४॥ करिकर करभहिं दिलखावति हाथी के बचा के सुंड कों बिलखावनि है, रसना किंकिनी, चामीकर सुवर्ण सरवसति तरकस ॥ ५ ॥ नाभी तड़ाग है, तेहि तड़ाग की सीढ़ी त्रिवली है औ तामें रोमन की पांति सेवार की छवि पावति है ॥ ६ ॥ केयूर पूर कंचन मनि कंचन औ मणि ते पूर कहैं भरा बिजायठ है ॥ ७ ॥ भुजग भुरेख सुंदर जव की रेखा है, अंगुलीत्रान अगुस्ताना ॥ ८ ॥ मानो श्याम मेघ पर चंद्रिका देखि के चंचलता त्यागि के दामिनि दमकति है यहां श्याम मेघ श्याम शरीर है, चंदन चंद्रिका है, दामिनि पीताम्बर है। दामिनि के स्थिर होने को यह भाव कि जब चंद्रिका ने अपनी मर्यादा छोड़ी तब हम क्यों न छोड़ें ॥ ९ ॥ सुंदर यज्ञोपवीत शोभाति है, हंसुली ग्रीव है औ चिबुक औ पुष्ट कांध है औ पीठि की सुंदर गर्दनि है, कृकाटिका कहै [illegible] घोऊ देश में जाको जोता कहत हैं अर्थात् गले को पृष्ठभाग सो उन्नत है ॥ १० ॥ रविसुत अश्विनीकुमार, सोम चंद्रमा ॥ ११ ॥ [illegible] है औ दांतनि की पांति उपमारहित है औ अन के दन [illegible] सुंदर हंसनि है। मानो मूंगा के विमान के मध्य में देवता [illegible]

तार ॥ चतिमचत ग्रमकन मुपनि बिथुरे चिकुर बिलुलित-हार। तमतडित उडगन चरुन विधु जनु करत व्योम विहार ॥५॥ हिय हरषि वरषि प्रसून निरपति बिबुधतिय तृनतूरि। सब चानंदजल लोचन मुदितमन पुलकतन भरिपूरि ॥ सब कहहिं चविचल राजनित कल्यान मंगल भूरि । चिरजिचो जानकिनाथ जग तुलसो सजीवनमूरि ॥ ६ ॥ १८ ॥

आली इ० । अति सुंदर चहुंओर स्फटिकमणि की भीति हैं औ सुंदर मणि मै दरवाजा है । हे सखी कांच को गच देखि कै मन नाचत है, मानो कांच को गच नहीं है काम की फांसी है। वंदनवार मंडप पताका चमर ध्वज फूल फलनि की शोभा परिछाहीं माति की छवि की शाखी छावि की देके चित्र माति कहति है कि तुम से हम गरू हैं ॥१॥ सरल सुधा पाटीर नीचे के चारों पाटीको कहत हैं औ पाटी ऊपर के चारो पाटी को कहत हैं, भँवरा गोल गोल धरन में लटके रहत हैं। वलित ग्रंथित वेलना धरन के नीचे रहत है जामे डांडी लगाई जाती है। पटुली पटरा सो पटरा नहीं है मानो रति के हृदय की सोने की मालाकी पदिक है अर्थात् जुगावली है भाव पटरा पदिक है औ जामे लटको है सो सोने की माला है अर्थात् डांडी जाको एक वार कुमकुम तिलक को उपमा कहि आए ॥ २ ॥ सघन घन गंभीर घटा, मृदुझरि नान्ही नान्ही बूंदी सो इ० ॥३॥ नवसत सोलहो शृंगार, हिंडोलसार, झुलिबे को स्थान ॥४॥ आसरिन्ह पारिन्ह सूहाराग औ गौंड मल्लार राग गावैं, मंजीर पायजेब नूपुर घुंघुरू, वलय कंकन एन के जो धुनि है सो धुनि नहीं है मानो काम के हथोरी के ताल हैं, अत्यंत जो झूला मचत है ताते पसीना को कन मुखन पर है रहे हैं औ वार बिखरि परे हैं औ माला ढीलि रहे हैं वार बिखरे तम है, अंग की गोराई तड़िता है, उड़गन कहैं तारागन सो श्रमकण हैं, अरुण कहैं सूर्य सो हार है औ बिधु कहैं चंद्रमा सो मुख है सो आकाश में विहार करत हैं ॥ ५ ॥ बिबुध तिय के तृन तूरिबे को यह भाव कि जामे नजर न लागै वा लज्जा को तृन सम तोरिके देवैं वा स्वर्ग सुख को तृण सम तोरैं ॥ ६॥१८॥

राग सूहव—कोसलपुरी सुहावनि सरिसरजू के तीर। भूपावली मुकुटमनि नृपति जहां रघुवीर ॥ १ ॥ पुरनरनारि चतुर अति धरम निपुनरत नीति। सहज सुभाय सकल उर श्रीरघुवीरपद प्रीति ॥ छंद ॥ श्रीरामपदजलजात सब की प्रीति अविरल पावनी। जो चहत सुक सनकादि संभु विरंचि मुनिमन भावनी ॥ सबही के सुंदर मंदिराजिर राउ रंक न लषिपरे। नाकेसदुर्लभ भोगलोग करहि न मन विषयनिहरे ॥१॥ सबरितु सुषप्रद सो पुरी पावस अतिकमनीय। निरषत मनहि हरति हठि हरित अवनि रमनीय। बीरबहूटि विराजही दादुर धुनिचहुंओर ॥ मधुर गरजिघन बरषहिं सुनि सुनि बोलत मोर ॥ छन्द ॥ बोलत जो चातक मोर कोकिल कीर पारावत घने। षग विपुलपाले वालकनि कूजत उडात सुहावने ॥ बकराजि राजत गगन हरिधनु तडित दिसिदिसि सोहहीं। नभनगर की सोभा अतुल अवलोकि मुनिमन मोहहीं ॥ २ ॥ गृहगृह रचे हिंडोलना महि गचकांच सुठारि। चित्रविचित्र चहुंदिसि परदा फटिक पगार ॥ सरलविसाल विराजहिं विद्रुम षंभ सुजोर। चारुपाटि पटु पुरट की भारकत मरकत भोर ॥ छन्द ॥ मरकत भवर डांडी कनकमनि जटितदुति जगमग रही। पटुली मनहुं विधि निपुनता निजप्रगट करि रापीसही ॥ बहुरंग लसत वितान मुकुतादाम सहित मनोहरा। नव सुमनमाल सुगंध लोभे मंजु गुंजत मधुकरा ॥ ३ ॥ झुंडझुंड झूलन चली गजगामिनि बरनारि। कुसुमिचीर तन सोहहीं भूषन विविधि सवारि ॥ पिकवयनी मृगलोचनी सारद ससि

न तुंड । रामसुजस सब गावहीं सुन्दर सुसारंग गुंड ॥ छन्द ॥ सारंग गुंडमलार सोरठ सुहव सुघरनि बाजहीं। बहुभांति तान तरंग सुनि गंधर्वकिन्नर लाजहीं ॥ अति छत्र छूटत कुटिलकच छबि अधिक सुन्दरि पावहीं । पटउडत भूषन खसत हंसि हंसि अपर सखी झुलावहीं ॥४॥ फिरिफिरि सुखहिं भामिनी अपनी अपनी बार । बिबुध बिमान थकित भए देखत चरित अपार ॥ बरषि सुमन हरषहिं सुर बरनहि हरिगुन गाय । पुनिपुनि प्रभुहि प्रसंसहीं जयजय जानकिनाथ ॥ छन्द ॥ जय जानकीपति बिसद कीरति सकललोक समापहा। सुरबधू देहिं असीस चिर जीवहु राम सुख संपति महा ॥ १ ॥ पावससमय कछु अवध बरनत सुनि अघौघ नसावहीं । रघुबीर के गुनगनन बल नित दासतुलसी गावहीं ॥ ५ ॥ १८ ॥

कोसल १० । सारि नदी, जलजात कमल, अविरल निरंतर, आजिर आंगन, नाकेश इंद्र ॥१॥ अवनि पृथ्वी, चातक पपीहा, कोकिल कोइल, कीर सुआ, पारावत कबूतर, बकराजि बकपांति, हरिधनु इंद्रधनु ॥२॥ अगार भीति, बिद्रुम मूंगा, सुरट सोना, मुकुतादाम मोतिन की माला, मधुकर भ्रमर ॥३॥ शारद शशि समतुंड शरत्काल पूर्णिमा के चंद्र सम मुख, गुंड मलारभेद ॥ ४ ॥ बिशद उज्वल ॥ ५॥१९॥

राग असावरी—सांझसमय रघुबीरपुरी की सोभा आजु बनी । ललित दीपमालिका बिलोकहिं हितकरि अवधधनी ॥ १ ॥ फटिकभीत सिखरनि पर राजति कांचनदीप अनी । जनु अहिनाथ मिलन आये मनि सोभित सहसफनी ॥ २ ॥ प्रतिमंदिर कलसनि पर भ्राजहिं मनिगनदुति अपनी । मानहुं बिपुल प्रगटि पुरलोहित पठइ दिए अवनी ॥ ३ ॥

घरघर मंगलचार एकरस हरषित रंक गनी। तुलसिदास कलकीरति गावत जो कलिमल समनी॥ ४॥ २०॥

अर्थ से सूचित होत है कि यह पद देवारी को है। सांझ इ० इहां स्फटिक की भित्ति शेष हैं औ ताकी शिखरें फणि हैं औ दीपमालिका मणिहैं॥ १॥ यहां लोहित कहे मंगल सो कलसन के मणि हैं॥ २॥ रंक दरिद्र गनी तालवर॥ ३॥२०॥

राग गौरी—अवधनगर अतिसुन्दर वरसरिता के तीर। नीतिनिपुन नर निवसहिं धरमधुरंधर धीर॥ १॥ सकल रितुन्ह सुखदायक ता महुं अधिक वसंत। भूप मौलिमनि जहंवस न्टपति जानकी कंत॥ २॥ वन उपवन नवकिसलय कुसुमित नानारंग। बोलत मधुर मुखर खग पिकवर गुंजत भृंग॥ ३॥ समय विचारि कृपानिधि देखि द्वार अतिभीर। खेलहु मुदित नारि नर विहंसि कहेउ रघुबीर॥ ४॥ नगर नारि नर हरषित सब चले खेलन फागु। देखि रामछवि अतुलित उमगत उर अनुरागु॥ ५॥ स्याम तमाल जलदतन निरमल पीतदुकूल। अरुन कंजदल लोचन सदा दास अनुकूल॥ ६॥ सिरकिरीट श्रुतिकुंडल तिलक मनोहर भाल। कुंचितकेस कुटिल भुअं चित वेनि भगत कृपाल॥ ७॥ कलकपोल सुकनासिक ललित अधर द्विज जोति। अरुन कंजमहँ जनु जुगपांति रुचिर गज मोति॥ ८॥ वरदरग्रीव अमित बलबाहु सुपीन विसाल। कंकनहार मनोहर उरसि लसति बनमाल॥ ९॥ उर भृगुचरन विराजत द्विजप्रिय चरित पुनीत। भगतहेतु नर विग्रह सुरवर गुन गोतीत॥ १०॥ उदर त्रिरेख मनोहर सुंदर नाभिगंभीर। कटक

टित जटितमनि कटितटरट मंजीर ॥ ११ ॥ ऊरु जांनु-
ान मृदुमरकत पंभ समान। नूपुर मुनिमन मोहत करत
कोमल गान ॥ १२ ॥ अरुनवरन पदपंकज नपदुति इंदु
काास। जनकसुता करपल्लव लालित विपुल विलास ॥१३॥
कंज कुलिस ध्वज अंकुस रेप चरन सुभचारि। जनमन मीन
हरन कहं वनसीरची संवारि ॥ १४ ॥ अंगअंग प्रति अतुलित
सुषमा वरनि न जाइ। एहि सुपसगन छोइ मन फिरि नहि
अनत लोभाइ ॥ १५ ॥ पेलतफागु अवधपति अनुजसपा
सबसंग। वरपि सुमन सुर निरपहि सोभा अमित. अनंग
॥१६॥ ताल मृदंग झांझ डफ वाजहिं पनव निसान। सुघर
सरस सहनाइन्ह गावहिं समय समान ॥ १७ ॥ बीना वेनु
मधुरधुनि सुनि किन्नर गंधर्व। निजगुन गरुअ हरुअ अति
मानहिं मन तजि गर्व ॥ १८॥ निजनिज अटनि मनोहर गान
करहिं पिकवेनि। मनहुं हिमालय सिपरनि लसहिं अमर
मृगनैनि ॥१९॥ धवलधाम ते निकसहिं जहँ तहँ नारिवरूथ।
मानहुं मथत पयोनिधि विपुल अपछरा जूथ ॥ २० ॥ किंसुक
वरन सुअंसुक सुषमा मुपनि समेत। जनु विधु निवह रहेकरि
दामिनि निकर निकेत ॥२१॥ कुंकुम सुरस अबीरनि भरहि
चतुर वरनारि। रितु सुभाय सुठि सोभित देहि विविधि
विधि गारि ॥२२॥ जो सुप जोगजाग जपतप तीरथ ते दूरि।
रामकृपा ते सोइ सुप अवधगलिन रह्यो पुरि ॥ २३ ॥ षेलि
वसंत कियो प्रभु मज्जन सरजूनीर। विविधि भांति आंचर
-- मांगी
बन पाए भूषन चीर ॥२४॥

भगति अनूप । मृदुमुसुकाइ दीन्हि तब कृपादृष्टि रघु
भूप ॥ २५ ॥ २१ ॥

अवध इ० । वर सरिता सरजू ॥ १ ॥ नवकिसलय नवीन पल्लव
कुसुमित पुष्पित ॥२॥३॥४॥ पीत दुकूल पीतांबर ॥ ५ ॥ श्रुति का
कुंचित टेढ़ा ॥ ६ ॥ द्विज दांत इहां मुख कोस अरुन कमल है औ कु
दंत पंक्ति गजमोती है ॥ ७ ॥ वरदर ग्रीव श्रेष्ठ संखसम कंठ ॥ ८
द्विज प्रिय चरित पुनीत श्रीराम द्विजन के प्रिय हैं औ चरित पुनीत
वा द्विजन को प्रिय है चरित पुनीत जिन का ॥ ९ ॥ हाटक सोन
मंजीर करि किंकिनी लेना पावजेय नहीं ॥१०॥११॥ इंदु चंद्रमा ॥१२
इहां रेखें वंसी हैं वा एक रेखा को वंसी कहा ॥ १३॥१४॥१५॥ पन
ढोल निसान नगारा ॥ १६ ॥ हरुअ हलुका ॥ १७ ॥ अग्नि अटारि
अमरमृगनयन देव पत्नी ॥१८॥ इहां धवल धाम छीर सागर औ निक
सने वाली नारि अपछरा समूह है ॥ १९ ॥ किंसुक कहैं लाल वरण
के सुंदर अंसुक कहैं जो वस्त्र तेहि समेत परम शोभा सहित जे मुखैं है
ते मानो विधुनिवह कहैं चंद्रमा के समूह है दामिन निकर अरुन वस्त्र
के घुघुटें हैं तिन में निकेत हैं गृह करि रहे हैं ॥ २० ॥ कुंकुम कुंकुमा
सुरस अवीर घोरा भवा अवीर सुंदर ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ गोसाईं
जी कहत हैं जे तेहि अवसर में अनूप भक्ति मांगी तेहि कों मृदु मुस-
काय के तव कहैं तेहि काल में कृपादृष्टि करि के रघुभूप कहैं रघुकुल
के राजा दिए वा रघु कहैं जीव तिन के भूप जे श्रीराम ते दिए, वा
गोसाईं जी ध्यान में यह पद वनाए वा काळ में प्रत्यक्ष रघुनाथ वर-
दान दिए सो स्पष्ट अंत के तुक में लिखे ॥ २४ ॥२५॥२१॥

राग वसन्त । खेलत वसन्त राजाधिराज । देखत नभ
कौतुक सुरसमाज ॥ १ ॥ सोहैं सखा अनुज रघुनाथ साथ ।
झोलिन्ह अवीर पिचकारि हाथ ॥२॥ वाजहिं मृदंग डफ ताल
वेनु । छिरकहिं सुगंध भरे मलय रेनु ॥२॥ उत जुवतिजूथ
जानकी संग । पहिरे पट भूषन सरस रंग ॥ ३ ॥ लिये छरी
वेत सोंधे विभाग । चांचरि झूमक गावहिं सरस राग ॥ ४ ॥

नूपुर किंकिनि धुनि अति सुहाइ। ललनागन जब जेहि धरहि धाइ ॥ ५ ॥ लोचन आंजहिं फगुआ मनाइ। छाडहिं नचाइ हाहा कराइ ॥ ६ ॥ चढे खरनि विदूषक स्वांग साजि। करैं कूट निपट गइ लाज भाजि। नर नारि परसपर गारि देत। सुनि हंसत राम भाइन्ह समेत ॥ ७ ॥ बरषत प्रसून बर विबुध वृन्द। जय जय दिनकरकुलकुमुदचंद ॥ ८ ॥ ब्रह्मादि प्रसंसत अवध वास। गावत कल कीरति तुलसिदास ॥ ९ ॥ २२ ॥

पेलत इ०। नभ आकाश मलय रेनु चंदनरज ॥१॥२॥ लोचन आजहिं अंजन लगाइ देइ ॥ ३ ॥ खर गदहा विदूषक भांड ॥ ४ ॥ विबुध देवता ॥ ५॥२२ ॥

राग केदारा—देखत अवध को आनंद। हरषि बरषत सुमन दिनदिन देवतनि को वृंद ॥ १ ॥ नगर रचना सिखन को विधि तकत बहुविधि वंद। निपट लागत अगम ज्यों जलचरहिं गमन सुछंद ॥ २ ॥ मुदित पुरलोगनि सराहत निरखि सुखमाकंद। जिन्ह के सुअलिचख पिअत राम सुखारविंद मरंद ॥ ३ ॥ मध्यव्योम विलंबिचलत दिनेस उडुगन चंद। रामपुरी विलोकि तुलसी मिटत सबदुख दंद ॥४॥२३॥

देखत इ०। नगर रचना सीखवे को बंद कई प्रकार बहुविधि ते विधाता तकत हैं सुछंद स्वेच्छा ॥ १ ॥ सुखमाकंद परमाशोभा के मूल, सुभालिचख नेत्र रूप सुंदरभ्रमर, मरंद रस ॥ २ ॥ व्योम आकाश, दिनेश सूर्य उडुगन तारागण ॥ ३ ॥ २३ ॥

राग सोरठ—पालत राजु यों राजाराम धरमधुरीन। सावधान सुजान सबदिन रहत नयलय लीन ॥ १ ॥ स्वान खगजति

न्याउ देख्यो आपु बैठि प्रवीन। नीचु हति मघिदेव बालक कियो मोच विहीन॥ २॥ भरत ह्यौं अनुकूल जगनिरुपाधि नेह नवीन। सकल चाहत रामहो ज्यों जलअगाधहि मीन ॥ ३ ॥ गाइ राजसमाज जाचत दासतुलसी दीन। लेहु निजकार देहु निजपदप्रेम पावन पोन ॥ ४ ॥ २४ ॥

पालत इ०। नयनीति यती ने स्वान को मारा रहा सो विनयपत्रिका में स्पष्ट है, स्वान के हेतु कियो पुरवाहर यती गयंद चढ़ाई अर्थात् शिव निर्माल्य खाइवे ते स्वान भयो रहो सोई अधिकार यती को दिए काक औ उल्लूक को विवाद रहा उल्लूक कहत रहा कि ई स्थान हमारा है औ काक कहत रहा कि हमारा है सो पहिले ते रहनेवाला उल्लूक को जानि के जिताए औ शूद्र तप करत रहा ताते ब्राह्मण को बालक मरि गयो ताते नोडे शूद्र को मारि के ब्राह्मण के बालक को जिआए ६ जैसे भरत जी के अनुकूल है तैसे निरुपाधि नेह नवीन पूर्वक जगतअनुकूल है २।३।४।२

संकट सुकृत को सोचत जानि जिय रघुराउ। सहस द्वादस पंचसत में कछुक है अब आउ ॥१॥ भोग पुनि पितु आपु को सोउ किये बने बनाउ। परिहरे विनु जानकी नहि और अनघ उपाउ ॥ २ ॥ पालिवे असिधारव्रत प्रियप्रेमपाल सुभाउ। होइहित केहिभांति नित सुविचार नहि चितचाउ ॥ ३ ॥ निपट असमंजसहु विलसति मुख मनोहरताउ। परमधीर धुरीन हृदय कि हरष विसमय काउ ॥ ४ ॥ अनुज सेवक सचिव हैं सबसुमति साधु सपाउ। जान कोउ न जानको विनु अगम अलख लपाउ ॥५॥ रामजोगवत सीयमन पियमनहि प्रान प्रियाउ। परमपावन प्रेम परमित समुझि तुसली गाउ ॥ ६ ॥ २५ ॥

संकट इ०। सहस द्वादश पंचशत बारह हजार पांच सौ वर्ष में कछुक

यह भाव है यद्यपि वाल्मीकि जी के मत में ग्यारहै हजार. वर्ष आयत हैं यहां गोसांई जी यह कल्प मे भिन्न के लिखे ताते शंका नहीं करना ॥१॥२॥३॥४॥५॥६॥२५॥

राम विचारि कै राखी ठीक दै मनमाहिं। लोकवेद सनेह पालत पन्न कृपालहि जाहिं ॥१॥ प्रियतमा पति देवता जेहि उमा रमा सिराहिं। गुर्विनी सुकुमारि सिय तिय मनि समुझि सकुचाहिं ॥२॥ मेदिनी सुप सुपोमुपु चननी सो सपनेहुं नाहिं। मेदिनी गुनगेहनी गुन सुमिरि सोचसमाहिं ॥ ३ ॥ रामसोच सनेह वरनत अगम सुकवि सकाहिं।। रामसोच रहस्य तुलसी कहत रामकृपाहिं ॥ ४ ॥ २६ ॥

राम इ० ॥ १ ॥ मेदिनी श्री जानकी जू गुनगेहनी गुन के गृह ॥२॥ रामकृपादि रामकृपा करि तुलसी श्रीराम रहस्य को कहत हैं ॥३।४ ॥२६॥

चरचा चरनि सों चरी जानि मनि रघुराइ। दूत मुख सुनि लोक धुनि घर घरनि बूझी आइ ॥ १ ॥ प्रिया निज अभिलाष रुचि कहि कहति सिय सकुचाइ। तीय तनय समेत तापस पूजिहौं वन जाइ ॥ २ ॥ जानि करुनासिंधु भाबी विबस सकल सहाय। धीर धरि रघुवीर भोरहिं लिए लषन बोलाइ ॥ ३ ॥ तात तुरतहि साजि स्यंदन सीय लेहु चढाइ। बालमीकि मुनीस आश्रम आइयहु पहुंचाइ ॥ ४ ॥ भलेहि नाथ सुहाय माथे राखि राम रजाइ। चले तुलसी पालि सेवकधर्म अवधि अघाइ ॥ ५॥ २७॥

चरचा इ० । चरनि सों दूतन सों, जानि मनिज्ञानी शिरोमणि अर्थात् ब्रह्मादि जे ज्ञानी तिन के शिरोमणि ॥ १ ॥ २ ॥ स्यंदन रथ ॥ ३॥४॥५॥२७ ॥

आए लषन लै सौंपी सिय मुनीसहि आनि। नाइ सिर रहे पाइ आसिष जोरि पंकज पानि ॥ १ ॥ बालमीकि विलोकि व्याकुल लषन गरत गलानि। सर्वविद बूभत न विधि की बामता पहिचानि ॥ २ ॥ जानि जिय अनुमान ही सिय सहस विधि सनमानि। राम सद्गुनधाम परमिति भई कछुक मलानि ॥ ४ ॥ दीनबंधु दयाल देवर देषि अति अकुलानि। कहति वचन उदास तुलसीदास त्रिभुवन रानि ॥ ४॥२८ ॥

~ आए इ० सर्वविद सर्वज्ञ ॥ १ ॥ श्रीराम सद्गुण धाम के परमित कहें मर्यादा हैं पर यह क्या किया यह विचारि के वालमीक जी की बुद्धि कुछ मलान भई ॥ २॥३॥२८ ॥

,, तौलों वलि आपु ही कीबो बिनय समुझि सुधारि। जौलों हों सिषि लेउं बन रिषिरीति वसि दिन चारि ॥१॥ तापसी कहि कहा पठवति नृपति को मनुहारि। वहुरि तेहि विधि आइ कहिहै साधु कोउ हितकारि ॥ २ ॥ लषन लाल कृपाल निपटहि डारिवो न विसारि। पालिवो सब तापसिनि ज्यों राजधरम विचारि ॥ ३ ॥ सुनत सीता वचन मोचत सकल लोचन वारि। बालमीकि न सकै तुलसी सो सनेह संभारि ॥ ४॥२९ ॥

सु० ॥ २९ ॥

सुनि व्याकुल भयेउ तव कछु कह्यो न जाइ। जानि जिय विधि-वाम दीन्ही मोहि सरुप सजाइ ॥ १ ॥ कहत हिय मेरी कठिनई लषि गई प्रीति लजाइ। आजु-औसर ऐसेहूं जो न चले प्रान वजाइ ॥२॥ इतहि सोय सनेह संकट

उतहि राम रजाइ। मौन ही गहि चरन गौने सिय सुधा-
सिय पाइ ॥ ३ ॥ प्रेमनिधि पितु को कह्यौ मैं परुष वचन
अघाइ। पाप तेहि परिताप तुलसी उचित सहे सिराइ
॥४॥३० ॥

सुगम ॥ ३० ॥

गौने मौन ह्वैं बारहि बार परि परि पाय। जात जनु
रथ रची कर लछिमन मगन पछिताय ॥ १ ॥ असन बिनु
बन बरम बिनु रन बच्यौ कठिन कुघाय। दुसह सांसति
सहन को हनुमान ज्यायौ जाय ॥ २ ॥ हेतु हौं सिय हरन
को तब अबहुं भयौ सहाय। होत हठि मोहि दाहिनो दिन
दैव दारुन दाय ॥ ३ ॥ तज्यो तनु संग्राम जेहि लगि गीध
जसी जटाय। ताहि हौं पहुंचाइ कानन चल्यौ अवध सुभाय
॥४॥ घोर हृदय कठोर करतब सृज्यौ हौं बिधि बाय। दास
तुलसी जानि राख्यौ कृपानिधि रघुराय ॥ ५॥३१ ॥

गौने इ०। लछिमन जी पश्चाताप में मगन हैं मानो लछिमन जी
नहीं जात हैं कर तें रची भई अर्थात् प्रतिमा सो जात है। कोऊ रची-
कर पुतरा को कहत, अब लछिमन जी पश्चाताप करत हैं कि भोजन
बिना बन में बेचउ औ बखतर बिना रण में बचेउं। काउन कुघाउ का
अन्वय दूसरे तुक से है ॥ १॥२॥३॥४॥५॥३१ ॥

पुत्रि न सोचिये आइ हौ जनकपुर जिय जानि। कहि
गौ कल्यान कौतुक कुसल तुव कल्यानि ॥१॥ राजरिषि पितु
ससुर प्रभु पति तू सुमंगलखानि। ऐसेहु पल बामता बड़ि
राम बिधि की बानि ॥ २ ॥ बोलि मुनि कन्या सिखाई प्रीति
रीति पहिचानि। आश्रम की देवतारि जिय तेवकई सर्व-

मानि ॥ ३ ॥. न्हाइ प्रातहि पूजिवो वट विटप अभिमत दानि। सुवन लाहु उछाहु दिन दिन देखिबन हित हानि ॥ ४ ॥ पाप ताप विमोचनी कहि कथा सरस पुरानि। वालमीकि प्रबोध तुलसी गई गरुय गलानि ॥ ५॥३२॥

पुलि इ० । राजऋषि तुम्हारे पिता औ ससुर हैं, प्रभु पति हैं, सुमंगलखानि हौ ॥ १ ॥ ऋषि श्री जानकी को आपनि कन्या बोर्ह प्रीति की गति पहिचानि के सिखाई कि हे सिय आलसिन्ह की देवत जो गंगा हैं तिन्ह को सनमान करि के सेइअहु ॥ २॥३॥४॥५॥३२॥

जब ते जानकी रहि रुचिर आश्रम आइ। गगन जल थल विमल तब ते सकल मंगल दाइ ॥ १ ॥ निरस भूरुह सरस फूलत फलत अति अधिकाइ। कंद मूल अनेक अंकुर स्वाद सुधा लजाइ ॥ २ ॥ मलय मरुत मराल मधुकर मोर पिक-समुदाइ। मुदित मन मृग विहंग विहरत विषम बयरु विहाइ ॥ ३ ॥ रहत रवि अनुकूल दिन ससि रजनि सजनि सुहाइ। सीय सुनि सादर सराहति सचिन भलो मनाइ ॥ ४ ॥ मोद विपिन विनोद चितवत लेत चितहिं चुराइ। राम विनु सिय सुपद वन तुलसी कहै किमि गाइ ॥ ५॥३३ ॥

जब ते इ० । निरस भूरुह शुष्क वृक्ष ॥ १ ॥ मलय मरुत दक्षिण पवन तेहि से मुदित मन होय मृग पक्षी विषम वैर विहाय विहरत हैं ॥२ रहत रवि अनुकूल दिन उष्णता आदि से क्लेश नहीं देत हैं ॥ ३ ॥ ४ ॥ यहि प्रकरण की व्याख्या स्पष्ट करि नहीं लिखी वाल्मीकीय रामायण औ पद्मपुराण में स्पष्ट है ॥ ५ ॥ ३५ ॥

सुभ दिन सुभ घरी नीको नषत लगन सुहाइ। पूत ससुर पुत्रको द्वै मुनिबधू उठि गाइ ॥१॥ बरषि बरषत सुमन

दुग गहगहे बधाइ बजाइ। भुवन कानन आश्रमनि रहे मोद मंगल छाइ ॥ २ ॥ तेहि निसा तहं सत्रुसूदन रहे बिधि बस आइ। मांगि मुनि सो बिदा गवने भोर सो सुख पाइ ॥ ३ ॥ मातु मौसी बहिन हूं ते सासु ते अधिकाइ। करहि तापस तीयतनया सीयहित चित लाइ ॥ ४ ॥ किये बिधि ब्यौहार मुनिबर बिप्रबृंद बोलाइ। कहत सब रिषि कृपा को फल भयो आजु अघाइ ॥५॥ सुरुष रिषि सुख सुतनि की सिय सुपद सकल सहाइ। सूल राम सनेह को तुलसी न जिय ते जाइ ॥ ६॥३४ ॥

सुभद्र ०। पद सुगम। कथा स्पष्ट श्रीमद्रामायण में ॥ ३४ ॥

मुनिवर करि छठी कीन्ही बारहे की रीति। बनबसन पहिराइ तापस तोषिपोषे प्रीति ॥ १ ॥ नामकरन सुअन्न-प्रासन बेदबांधी नीति। सभै सबरिषिराज करत समाज साजि समीति ॥ २ ॥ बालकालहिं कहहिँ करिहैं राजुसब जगु जीति। रामसियसुत गुरअनुग्रह उचित अचल प्रतीति ॥ ३ ॥ निरषि बालबिनोद तुलसी जातबासर बीति। पिय-चरित सिय चितचितेरो लिषत नितहित भीति ॥४॥३५॥

मुनि इ०। समीति सभा वा समित्र ॥ १ ॥ २ ॥ हित भीति भीति रूप भीति पर ॥ ३ ॥ ३५ ॥

बालक सीय के बिहरत मुदित मन दोउ भाइ। नाम लवकुस राम सिय अनुहरत सुंदरताइ ॥ १ ॥ देत मुनि मुनि-सिसु पिलौना लेत धरत दुराइ। खेल खेलत नृप सिसुन्ह के बालबृंद बोलाइ ॥ २ ॥ भूप भूषन बसन बाहन राज साज सजाइ। बरम चरम कृपान सर धनु तून लेत बनाइ ॥ ३ ॥

दुखी सिय पिय बिरह तुलसी सुखी सुत सुपसाद। आंचपय उफनात सींचत सलिल ज्यौं सकुचाद॥ ४॥॥ ३६॥

बाल ३१॥ १॥ बरम बखतर, चरम ढाल, कृपान तलवार, तून तरकस॥ २॥ ३॥ ३६॥

कैकइ जौलौं जियत रही। तौलौं बात मातु सौं मुह भरि भरत न भूलि कही॥ १॥ मानी राम अधिक जननी तें जननिहुं गस न गही। सीय लपन रिपुदवन रामरुख लखि सब की निबही॥ २॥ लोक वेद मरजाद दोष गुन गति चित चषन चही। तुलसी भरत समुझि सुनि राखी राम सनेह सही॥ ३॥३७॥

बाल ३०। गस गांस॥ १।२॥ चष नेत्र इहां सिंहावलोकन रीति से पिछिली कथा कहे॥ ३॥३७॥

राग रामकली। रघुनाथ तुम्हारे चरित मनोहर गावत सकल अवधबासी, अति उदार अवतार मनुज बपु धरे ब्रह्म अज अविनासी॥ १॥ प्रथम ताड़िका हति सुबाहु बधि मख राख्यौ द्विज हितकारी। देखि दुखी अति सिला सापवस रघुपति बिप्रनारि तारी॥ २॥ सब भूपनि को गरव हर्यौ हरि भंज्यौ संभुचाप भारी। जनकसुता समेत आवत गृह परसराम अति मदहारी॥ ३॥ तात बचन तजि राजकाज सुर-चित्रकूट मुनिभेष धर्यौ। एक नयन कीन्हो सुरपति-सुत-बधि बिराध रिपिसोक हर्यौ॥ ४॥ पंचवटी पावन राघव करि सूपनखा कुरूप कीन्ही। खरदूषन संघार कपट म्रग गीधराज कहुं गति दीन्हो॥ ५॥ हति कबंध सुग्रीव सखा करि बेधे ताल बालि मार्यो। बानर रीछ सहाय अनुज

संग सिंधु बाँधि जनु बिमतायो ॥६॥ सकुल पुत्र दलसहित दसानन मारि अखिल सुरदुख टार्‌यो। परम साधु जिय जानि बिभीषन लंकापुरी तिलक सार्‌यो ॥ ७ ॥ सीता अरु लछिमन संग लीन्हे औरौ जिते दास आए। नगरनिकट बिमान आये सब नर नारी देखन धाए ॥८॥ सिव बिरंचि सुक नारदादि मुनि अस्तुति करत बिमल बानी। चौदह भुवन चराचर हरषित आए राम राजधानी ॥ ९ ॥ मिले भरत जननी गुरु परिजन चाहत परम अनंद भरे। दुसह बियोग जनित दारुन दुख रामचरन देखत बिसरे ॥ १० ॥ बेद पुरान बिचार लगन सुभ महाराज अभिषेक कियो। तुलसिदास जिय जानि सुअवसर भक्तिदान तब मागि लियो ॥ ११ ॥ ३८ ॥

इति श्रीतुलसीदासकृतरामगीतावल्यां उत्तरकाण्डःसमाप्तः।

रघुनाथ इ०। इहाँ सब रामचरित्र रूप से लिखे। पद पद सुगम। ११।३८

दोहा।

श्रीलछिमन रघुनाथ निधि, रामसखे पद नाय।
हरिहर सम मतिमंद हूं, टीका लई बनाय ॥

इति श्रीतुलसीदासकृतरामगीतावलीप्रकाशिकाटीकायां श्रीसीताराम-कृपापात्र श्रीसीतारामीय हरिहरप्रसादकृतौ उत्तरकाण्डः समाप्तः।